प्रगति का पथ

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

ओ३म्

प्रगति का पथ

लेखक

सीताराम आर्य

संपादक

डॉ० भारतेन्दु द्विवेदी

प्राक्कथन

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी
कुलपति, गुरुकुल महाविद्यालय
ज्वालापुर (हरिद्वार)

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स

६, किंग्स रोड, हावड़ा—१

PRAGATI KA PATH
By : SITARAM ARYA

प्रकाशक
सीताराम आर्य

(क) फर्म—नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स
६ किंग्स रोड, हावड़ा—१
फोन नं०—६६-३८६४

(ख) निवास—आर्य-निकेतन
१०-बी, हंगरफोर्ड स्ट्रीट
कलकत्ता—७०००१७
फोन नं०—४३४८७०

(मूल स्थान—फूलपुर, पो० टाँडा, फैजाबाद)

प्रथम संस्करण
मूल्य—चालीस रुपए

वितरक—
विश्वभारती बुक एजेन्सी,
शान्ति-निकेतन, ज्ञानपुर (वाराणसी)

मुद्रक—
रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स
बी० २१/४२ ए, कमच्छा, वाराणसी

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स

६, किंग्स रोड

हावड़ा—१

की

रजत-जयन्ती

(९ जून १९५८ ई०—९ जून १९८३ ई०)

पर

प्रकाशित

सम्पादकीय

श्रद्धेय श्री सीताराम जी आर्य के संघर्षपूर्ण जीवन से संबद्ध 'प्रगति का पथ' पुस्तक का सम्पादन करते हुए मुझे गौरव की अनुभूति हो रही है। आपका जन्म कार्तिक अमावस्या संवत् १९७९ वि० 'दीपावली' के शुभ पर्व के दिन एक साधारण परिवार में हुआ। बाल्यकाल गांव के दूषित वातावरण के मध्य व्यतीत हुआ। परिवार की आर्थिक-स्थिति अच्छी न होने के कारण आपको १५ वर्ष की अवस्था में ही नौकरी करनी पड़ी। अतः उच्च-शिक्षा ग्रहण करने की अभिलाषा पूर्ण न हो सकी। एक मुनीम के रूप में जीवन का प्रारम्भ हुआ। मुनीम के रूप में आपका जीवन अत्यन्त कष्टमय एवं संघर्षपूर्ण रहा। परन्तु आप कभी विचलित नहीं हुए।

आर्य-समाज के सम्पर्क में आने के बाद आपको यथार्थ ज्ञान प्राप्त हुआ तथा उचित मार्गदर्शन मिला। आर्य-समाज के सम्पर्क से आपके नैतिक और सामाजिक जीवन में निखार आया। महर्षि दयानन्द सरस्वती के आदर्शों का सच्चा अनुयायी बनकर किस प्रकार नैतिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति की जा सकती है, यह आपके जीवन से स्पष्ट है। एक सामान्य मनुष्य किस प्रकार व्यावसायिक और सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है, इसके लिए आपका जीवन एक आदर्श है।

आपकी उन्नति का मूल कारण आपका सादा जीवन और उच्च-विचार है। आज एक सफल और प्रतिष्ठित व्यवसायी होते हुए भी जीवन में वही सादगी, उदारता, आत्मीयता, विनम्रता, स्नेह आदि अनेक गुण हैं, जो २५ वर्ष पूर्व स्वतंत्र व्यापार प्रारम्भ करते समय थे। धन-प्राप्ति के साथ व्यक्ति मदान्ध होता जाता है, परन्तु आपके जीवन में कालिदास की यह उक्ति चरितार्थ होती है—

भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमै-
नंवाम्बुभिर्द्‌रविलम्बिनो घनाः ।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः,
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ॥
(अभिज्ञानशाकुन्तलम् ५-१२)

आपका जीवन आर्य-समाज की सेवा के लिए समर्पित है । समाज-सेवा आपके जीवन का प्रमुख अंग बन गया है । अपनी सुख-सुविधाओं पर धन व्यय करने की अपेक्षा सामाजिक कार्यों में धन व्यय करने में आपको आनन्द की प्राप्ति होती है ।

मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि आपको दीर्घायु और नीरोगता प्रदान करे, जिससे आप परिवार, समाज और देश की अधिकतम सेवा कर सकें ।

(डॉ०) भारतेन्दु द्विवेदी

प्राक्कथन

इस संसार में मनुष्य का जन्म अपने पूर्वकृत कर्मों के अनुसार होता है। वह कर्म करने में स्वतंत्र होता है, परन्तु पूर्वकृत कर्म उसके कार्य में साधक या बाधक होते हैं। मनुष्य कहां और किस परिवार में जन्म लेगा, यह उसके संस्कारों पर आश्रित है। जीव कर्म करने में स्वतंत्र है, अतः वह अपनी परिस्थिति को सुधार या बिगाड़ सकता है। मनुष्य सुधार की प्रक्रिया को अपनाकर मानव से देवत्व की ओर अग्रसर हो सकता है। यदि वह अन्यथा प्रवृत्त होता है तो दानव की कोटि तक पहुँच जाता है। संस्कृत का सुभाषित है कि—

स जातो येन जातेन, याति वंशः समुन्नतिम् ।। हितोपदेश

संसार में उसी व्यक्ति का जीवन सफल है, जिसके जन्म से वंश और परिवार की उन्नति होती है। मनुष्य संसार में कुछ करने के लिए और किसी विशेष उद्देश्य से उत्पन्न हुआ है। यदि वह अपना कर्तव्य पूरा करता है तो संसार में उसका यश फैलता है। संसार में जिसका यश है, वह मृत्यु के बाद भी जीवित रहता है। अतएव कहा है कि—

कीर्तिर्यस्य स जीवति ।

मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि श्री सीताराम जी आर्य के विषय में कुछ शब्द लिख सकूं। १९७५ ई० में मैं उनके सम्पर्क में आया। १९७६ ई० में मेरी ज्येष्ठ पुत्री डा० भारती आर्य का विवाह उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री ओम्प्रकाश आर्य से हुआ। तबसे उनके निकटतम सम्पर्क में रहा हूं। १९७६ ई० में ही जुलाई और अगस्त मास में यूरोप, अमेरिका और कनाडा की विदेश-यात्रा के समय हम दोनों का एक मास तक साथ ही

उठना-बैठना, रहना, खाना-पीना आदि होता था। अतः उनके आचार-विचार, रहन-सहन आदि को देखने और समझने का अवसर मिला। इस काल में मैंने अनुभव किया कि वे एक अत्यन्त सात्त्विक प्रकृति के व्यक्ति हैं।

आपका जन्म एक छोटे से ग्राम—फूलपुर (जिला—फैजाबाद) में हुआ है। बाल्यकाल में शिक्षा आदि की कोई सुविधा प्राप्त नहीं हो सकी। परिवार की आर्थिक स्थिति भी विशेष अच्छी नहीं थी। आपके पिताजी का कलकत्ता से सम्पर्क बना हुआ था। उसी आधार पर आपका भी कलकत्ता से सम्पर्क स्थापित हुआ। एक व्यक्ति के सहयोग से आपने मुनीम के पद से कार्य प्रारम्भ किया। आपने अनुभव किया कि आपके परिश्रम का पूरा लाभ आपको नहीं मिल रहा है। अतः स्वतंत्र कार्य प्रारम्भ करने की धुन सवार हुई। इसके फलस्वरूप ही आपने 'नार्थ इंडिया आटोमोबाइल्स' फर्म को जन्म दिया। प्रसन्नता की बात है कि आज इस फर्म को स्थापित हुए २५ वर्ष पूरे हो रहे हैं।

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स की स्थापना का इतिहास अत्यन्त रोमांचकारी है। धन का अभाव, साधनों का अभाव, विरोधियों के कुचक्र आदि के होते हुए भी संघर्ष-पूर्ण वातावरण से फर्म को निकाल कर एक सुदृढ़ स्थिति में पहुँचाने का श्रेय आपको है। योजना बनाना सरल कार्य है, परन्तु उसको क्रियात्मक रूप देना दुष्कर कार्य है। प्रत्येक योजना सफलता के लिए घोर परिश्रम मांगती है। यह सर्वसाधारण के लिए संभव नहीं है। जो इस परीक्षा में सफल होते हैं, विजयश्री उनका ही वरण करती है। सुख-दुःखों की चिन्ता किए बिना, एक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील व्यक्ति को ही मनस्वी कहा गया है। संस्कृत की सूक्ति है—

मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दुःखं न च सुखम्।

आपने अपने अनुभव सुनाते हुए एक बार बताया था कि किस प्रकार पानागढ़ में फर्म के लिए स्थान प्राप्त किया गया और किस प्रकार कुछ समय एक छोटे कमरे में और कुछ समय श्मशानघाट पर एक कोठरी लेकर रहना पड़ा था। आज पानागढ़ में आपकी तपस्या एक कल्पवृक्ष के रूप में सफल हुई और पानागढ़ की भूमि आपकी फर्म के लिए वरदान रूप में सिद्ध हुई।

इस प्रसंग में मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त प्रसन्नता है कि जिस प्रकार रामायण में लक्ष्मण आदि छोटे भाइयों का अपने बड़े भाई राम के प्रति उत्कृष्ट व्यवहार था, उसी प्रकार का उत्तम व्यवहार आपको अपने छोटे भाइयों से प्राप्त हुआ है। आपके चारों छोटे भाई आपका अपने पिता के तुल्य आदर करते हैं और आपके कथन को आज्ञा के रूप में स्वीकार करते हैं। आपको अपने सभी छोटे भाइयों से पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है। यही कारण है कि आपकी फर्म को चारों ओर से सफलता प्राप्त हुई है। आपने जो कार्य प्रारम्भ किया है, उसमें दौड़धूप का बहुत महत्त्व है। सभी भाइयों ने प्रसन्नता-पूर्वक इन कष्टों को सहा है और निरंतर सहयोग देते आ रहे हैं।

आपके जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना आर्य-समाज के सम्पर्क में आना है। आर्य-समाज के सम्पर्क में आने से ही आपकी व्यक्तिगत और पारिवारिक उन्नति हुई है। आपने अपने जीवन की घटनाओं का वर्णन करते हुए इस आत्मकथा में बताया है कि किस प्रकार उन्हें कुछ बुरे संस्कारों और दुर्व्यसनों से बचाने का श्रेय आर्य-समाज को है। आपने अपने परिवार में आर्य-भावना को स्थान दिया है और आहार-विहार तथा खान-पान को शुद्ध सात्त्विक बनाया है। आर्य-समाज के एक सामान्य सदस्य से ऊपर उठकर प्रधान पद को सुशोभित करना, यह आपकी कर्तव्यनिष्ठा का फल है। प्रसन्नता की बात है कि आप अपनी कार्यकुशलता के कारण आर्य-समाज से संबद्ध अनेक संस्थाओं के प्रधान आदि हैं। आप वैदिक

अनुसंधान ट्रस्ट, आर्य विद्यालय ट्रस्ट, श्रीमती आर्य सुन्दरा देवी कल्याण ट्रस्ट, कलकत्ता आदि के ट्रस्टी भी हैं।

आर्य-समाज और उसके कार्यों में विशेष रुचि के कारण आप गुरुकुल वैदिक आश्रम, पानपोस (राउरकेला) उड़ीसा के प्रधान हैं तथा अखिल भारतीय दयानन्द सेवा आश्रम सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के उपप्रधान हैं। आपने अपने पिताजी की स्मृति में अपने मूलस्थान फूलपुर, फैजाबाद में श्री रामनारायण हाईस्कूल की भी स्थापना की है।

आपका सामाजिक जीवन विशेष महत्त्वपूर्ण रहा है। कलकत्ता में जब और जहां समाज-सेवा की आवश्यकता पड़ी है, आपने अपनी सेवाएं अर्पित की हैं। बंगाल में बाढ़ आदि के अवसरों पर आपने अपने कष्टों की चिन्ता न करते हुए दिनरात समाज-सेवा का कार्य किया है। समाज-सेवा का प्रतिफल ईश्वरीय कृपा है। जब व्यक्ति समाज की सेवा में संलग्न होता है, तो परमात्मा उसकी अनेक प्रकार से सहायता करता है। समाज-सेवा निरर्थक नहीं जाती है।

आपने अपने परिवार को संयुक्त-परिवार के रूप में विकसित किया है। आपकी कामना है कि परिवार सुव्यवस्थित रूप में फले फूले। वर्तमान परिस्थिति में देखने में आया है कि जहाँ परिवारों में संकीर्ण भावना, स्वार्थ-परता और भौतिक सुखों की लालसा की और प्रवृत्ति होती है, वहाँ परिवार में वैमनस्य उत्पन्न होता है। वहीं से विघटन प्रारम्भ होता है। अपनी आवश्यकताओं को अधिक बढ़ा लेना, न केवल दुःख का कारण है, अपितु समाज-सेवा के भाव से विमुखता भी है। जो अपनी आवश्यकताओं पर नियंत्रण रखते हैं, वे ही समाज-सेवा का भाव जागृत कर सकते हैं। परिवार की उन्नति और एकता के लिए कठोर परिश्रम और सादा जीवन बहुमूल्य साधन हैं। इनकी उपेक्षा के कारण ही आज हमारे समाज में पारिवारिक विघटन की प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं। इन पर नियंत्रण

आवश्यक है। अतएव वेद में कहा है कि परिवार में सौमनस्य, सद्भाव और एकता अनिवार्य है।

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत, वत्सं जातामिवाघ्न्या ॥

अथर्व० ३-३०-१

मैं नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स की रजत-जयन्ती के अवसर पर प्रकाशित होने वाली इस आत्मकथा के लिए श्री सीताराम जी को अपनी हार्दिक शुभकामना प्रकट करता हूँ। उन्होंने जिस प्रकार अपनी उन्नति करते हुए परिवार और समाज की उन्नति की है, उसी प्रकार भविष्य में भी वे परिवार और समाज का कल्याण करते रहें। परमात्मा से प्रार्थना है कि वह उन्हें उत्तम कार्यों के लिए शतायु प्रदान करे।

दिनांक-१५-३-१९८३ ई० —(डॉ०) कपिलदेव द्विवेदी

भूमिका

दिनांक १८ अगस्त १९८१। स्थान—दीघा (बंगाल)। टूरिस्ट कुटीर नं० १। विगत ४२ वर्षों से मैंने परिवार की सेवा की है। स्वास्थ्य खराब हो जाने के करण आज प्रातः ८-४५ पर परिवार के सभी सदस्यों से एक माह के लिए अवकाश लेकर विश्राम के लिए हावड़ा से दीघा के लिए चल पड़ा। साथ में छोटा पुत्र विजय प्रकाश, भान्जा लालचन्द, सेवक घूरे राम तथा ड्राइवर शैलेन्द्र नाथ दास थे। प्रातः प्रस्थान से पूर्व पत्नी ने पैर छूकर विदाई दी थी। मैं चुपचाप मौन होकर ऊपर की मंजिल से नीचे उतर आया। जीप बैठ गया। लघु भ्राता श्रीराम, मनीराम, पुत्र सत्यप्रकाश ने चरणस्पर्श कर प्रणाम किया। पड़ोसी श्री रामचेत, राजाराम दुबरी, जसवन्त सिंह आदि ने नमस्ते की। जीप स्टार्ट हुई। मेरा हृदय द्रवित हो गया। कण्ठ अवरुद्ध हो गया। सबके अभिवादन का मौन रूप में ही मैंने उत्तर दिया। जीप दीघा की ओर रफ्तार से चल पड़ी। रास्ते में बंगाल के गांवों की लहलहाती धान और पाट की खेती का दृश्य साथ बैठे पुत्र विजय और भांजा लालचन्द आदि देख रहे थे। वे अपने विभिन्न विचार व्यक्त कर रहे थे। परन्तु मेरा मन उस दृश्य की ओर आकर्षित नहीं हुआ। मन अन्दर ही अन्दर नाना प्रकार की हिलोरें ले रहा था। तरह-तरह के विचार पैदा हो रहे थे। प्रस्थान करने से पूर्व ६ वजे प्रातः हंगरफोर्ड स्थित निवास-स्थान पर गया था। सभी बच्चों को बुलाकर उन्हें प्यार से देखा। माता जी का आशीर्वाद प्राप्त किया। स्वास्थ खराब रहने के कारण आज स्वास्थ्य लाभ हेतु बंगाल की खाड़ी के तट पर स्थित दीघा जा रहा हूँ। पं० उमाकान्त जी को अपने इस कार्यक्रम की सूचना फोन पर दे दी थी और उनसे निवेदन किया था कि आप मेरी अनुपस्थिति में आर्य-समाज का कार्य देखेंगे। क्रिया-कलापों पर विशेष ध्यान रखेंगे। पुष्पित

जी ने प्यार भरे शब्दों में आश्वासन देते हुए कहा 'आप निश्चिन्त होकर स्वास्थ्य लाभ करें। अगर स्वास्थ्य में प्रगति न दिखाई पड़े तो कलकत्ता लौट आइएगा।' श्री बाबू मुन्नी लाल जी, श्री ईश्वरचन्द जी, श्री आनन्द कुमार आदि को अपने इस कार्यक्रम की सूचना दे दी थी। विदाई के समय सभी की आखों में आंसू थे। इन्हीं विचारों में डूबा मैं दीघा २ बजकर ३० मिनट पर पहुँच गया। विजय प्रकाश आदि ने भोजन-आवास आदि की समुचित व्यवस्था की।

दिनांक १९ अगस्त १९८१। खाने-पीने, आवास, दवा आदि की व्यवस्था करने के वाद जब विजय प्रकाश और लालचन्द को अपने कर्तव्य पर सन्तुष्टि हो गयी, तव इन लोगों ने चरणस्पर्श कर विदाई मांगी। मैंने आशीर्वाद देकर विदा किया। परन्तु मेरा कण्ठ अवरुद्ध हो गया था। दोपहर १२-३० पर दोनों ड्राइवर के साथ विदा हो गये। दोनों के चले जाने के बाद मेरा मन खिन्न हो गया। मैंने सेवक घूरे राम से कहा कि मेरा मन घवड़ा रहा है। वेचैनी सी अनुभव हो रही है। उसने समझाते हुए कहा कि आप यहां बन्धु-बान्धव तथा व्यापार छोड़कर, स्वास्थ्य खराब होने के कारण निर्जन स्थान पर आए हैं, अतः मन दुःखित हो रहा है। कुछ समय वाद मन शान्त हो जाएगा। मैं थोड़ी देर शान्ति से बैठा रहा। नाना प्रकार की बातें सोचता रहा। एक माह के लिए घर छूटने पर मेरी यह स्थिति है। परन्तु हमेशा के लिए यह संसार, परिवार, व्यापार, बन्धु, मित्र आदि छूट जाएंगे तो क्या होगा ?

दो दिन से समुद्र के किनारे प्रातः और सायं मीलों पैदल घूमता, संयमित भोजन आदि करता, परन्तु मोहवश रात्रि में मन को शान्ति नहीं मिलती थी। परन्तु यह विश्वास हो रहा था कि एक माह में स्वास्थ्य अवश्य सुधर जाएगा। एक माह किस प्रकार व्यतीत होगा यह जटिल समस्या दिखाई पड़ रही थी।

२० अगस्त। प्रातः भ्रमण, सन्ध्या-हवन आदि के बाद श्री गुलाबरत्न वाजपेयी की जीवनी स्मरण हो आयी। उन्होंने अपनी जीवनी में लिखा है

कि "मैं कक्षा-२ में पढ़ रहा था, उस समय एक दिन मेरी किसी त्रुटि पर अध्यापक ने बहुत पिटाई की। उनकी पिटाई की भय से मैं विद्यालय से घर आने के बाद फिर कभी विद्यालय नहीं गया। विद्वानों की संगति में रहकर जो कुछ सीखा, उसी से मैं लेखक बन गया।" मैंने उनकी लिखी हुई तीन रचनाएं-'नारी', 'वेश्या की लड़की' और 'नयी रोशनी' पढ़ी हैं। उनकी जीवनी की याद ने मुझे प्रेरणा प्रदान की 'हे मन ! तू शिक्षा-दीक्षा की बातें क्यों करता है ? तूने भी जीवन में अधिकांश समय सत्संगों और विद्वानों के मध्य व्यतीत किया है। तू निराश क्यों होता है। तुम तो वैदिक पथ के अनुयायी हो। महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र पढ़ा है। उनके जीवन में कभी निराशा की झलक नहीं दिखायी पड़ती। तू क्यों नहीं कलम उठाकर कुछ लिखता।" मन शान्त हो गया। ममता दूर हो गयी। एक माह शान्ति से व्यतीत करने का अवसर मिला। समय के सदुपयोग के लिए मैंने अपने जीवन की घटनाएं लिखना प्रारम्भ कर दिया। किस प्रकार मैंने शून्य से उन्नति की ओर अग्रसर हो समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त की, यह जनसाधारण को कर्म की ओर प्रवृत्त करने की प्रेरणा प्रदान करेगा। परिवार के सदस्यों को भी इस बात का ज्ञान होगा कि हमारा परिवार क्या था, और कहाँ पहुँच गया ? मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार बनता और बिगड़ता है। सन्मार्ग पर चलने की बात सोचने वाला व्यक्ति कदापि गलत मार्ग पर अग्रसर नहीं होगा।

सन् १९३९-४० से ९ जून १९५८ तक मैं एक व्यक्ति के शासन में जकड़ा हुआ था। अपने पूर्वजन्म के कर्मों का फल समझकर कार्य करता रहा। मुझे विश्वास था कि मेरे पूर्वजन्म के बुरे कर्मों का फलभोग होने के बाद शुभ-कर्मों का फल प्राप्त होने में कोई बाधा नहीं आएगी। बाधा डालने वाले स्वयं नत-मस्तक हो जायेंगे। राजा हरिश्चन्द्र के कर्तव्य-पालन की भावना से प्रभावित होकर, दृढ़प्रतिज्ञ होकर सन्मार्ग पर चलते हुए, निरन्तर सच्चे सेवक के रूप में अपने उत्तरदायित्व को वहन करता रहा। परन्तु मेरे मन में यह पीड़ा थी कि 'क्या मैं पूर्व जन्म में इतना पापी था,

जो मुझे समस्त सद्‌गुणों से रहित व्यक्ति की सेवा करनी पड़ रही है ?' मैं सात्त्विक गुणों से युक्त, बुद्धिमान, ईमानदार, परोपकारी, सत्यवादी, चरित्रवान् व्यक्ति की सेवा के योग्य भी नहीं हूँ। धन्य हैं ! महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्य-समाज जिसकी संगति में मेरी बुद्धि इतनी निर्मल हो गयी कि नरक में भी स्वर्ग का आनन्द मिलने लगा। कुसंगति का प्रभाव मन पर रंचमात्र भी न पड़ने पाया। बचपन में पढ़ा रहीमदास का यह दोहा मन को सदा प्रभावित करता रहा----

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापें नहीं, लिपटे रहत भुजंग।।

मनुष्य को मानव-जीव अपने कर्मों के अनुसार मिलता है। जीवन में सम्बन्धियों, मित्रों और सहयोगियों का मिलना भी पूर्वजन्म के संस्कारों पर निर्भर करता है। मुझे प्रसन्नता है कि मुझे उच्च विचारों वाले माता-पिता मिले। मेरे माता-पिता प्राचीन परम्परा में पले थे। ग्रामीण वातावरण में खान-पान की अनियमतताएं भी प्रचलित थीं। जिनका प्रभाव मेरे माता-पिता पर पड़ा था। १० वर्ष की आयु में आर्य-समाज के सम्पर्क में आया और तब से शुद्ध सात्त्विक आहार का अभ्यासी बन गया। मुझे प्रसन्नता है कि मेरे माता-पिता ने मेरे इस सद्‌गुण को स्वयं भी स्वीकार किया और फलस्वरूप हमारे परिवार में मांस-मदिरा का प्रयोग सर्वथा वर्जित हो गया। यह माता-पिता जी की उदार हृदयता का परिचायक है। मेरे छोटे भाइयों ने भी मेरा अनुकरण खा -पान, रहन-सहन, वेषभूषा आदि में किया। उनके अनुकरण के परिणामस्वरूप पूरा परिवार पूर्ण सात्त्विक और वैदिक पथ का अनुयायी बन गया। प्रसन्नता की बात है कि बच्चे भी उसी परम्परा को अपनाए हुए हैं।

मेरी माता जी को शिक्षा नहीं प्राप्त थी, अतः मुझे शिक्षा प्राप्ति में बहुत कठिनाईयाँ उठानी पड़ीं। मैं सामान्य शिक्षा ही अर्जित कर सका। परन्तु मेरी पत्नी को उतनी भी शिक्षा का अवसर नहीं मिला। जिससे वे पुराने संस्कारों से जुड़ी हैं। उनके सामने ग्रामीण दृष्टिकोण और वहाँ के

व्यवहार एक प्रकार से जीवन में समाविष्ट हो गए हैं। शिक्षा के अभाव के कारण उनका दृष्टिकोण विकसित नहीं हो सका, जिसके कारण परिवार के विकास में उनसे यथोचित सहयोग नहीं मिल सका। पत्नी गृहस्थ-रूपी रथ का एक चक्र है। यदि एक चक्र अपना कार्य ठीक नहीं कर रहा है तो वह रथ कठिनाई से आगे बढ़ पाता है। विकसित दृष्टिकोण के अभाव के कारण पारिवारिक कष्ट भी हो जाते हैं।

मैं चाहता हूँ कि मेरे जीवन के अन्तिम-क्षण तक परिवार सदा फूलता-फलता रहे। स्नेह और सौहार्द का भाव सदा बना रहे। मैं यह कभी सहन नहीं करना चाहता हूँ कि परिवार में किसी प्रकार का मनोमालिन्य हो या परिवार के विभाजन की बात उठे। मेरे परिश्रम और सबके सहयोग से इस परिवार की श्रीवृद्धि हुई है। सबका सहयोग मिलता रहा है। उसमें किसी प्रकार की न्यूनता आना मेरे लिए असह्य है।

मुझे प्रसन्नता है कि मैंने आज तक पूर्ण उत्साह से काम किया है। सदा सबकी अभिवृद्धि की कामना की है। परिवार के हित के लिए अनेक विषम कष्ट उठाने में भी मुझे कभी कष्ट की अनुभूति नहीं हुई। मेरी कामना है कि मेरे अनुज एवं पुत्रादि मेरी इस भावना को सदा स्मरण करते हुए परिवार की श्रीवृद्धि में न्यूनता नहीं होने देंगे। मैंने कर्तव्य भावना से सदा त्याग और परिश्रम किया है। मुझे प्रतिफल की कामना नहीं है। परिवार में सौमनस्य और एकता की भावना बनी रहे, यही मेरे श्रम का प्रतिफल होगा।

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

सीताराम आर्य

टूरिस्ट कुटीर, दीघा (बंगाल)
दिनांक—१५ सितम्बर १९८१ ई०

विषयानुक्रमणी

पूज्य पिताजी एवं माताजी

सीताराम आर्य

खादी वस्त्र पहनने का शुभारम्भ
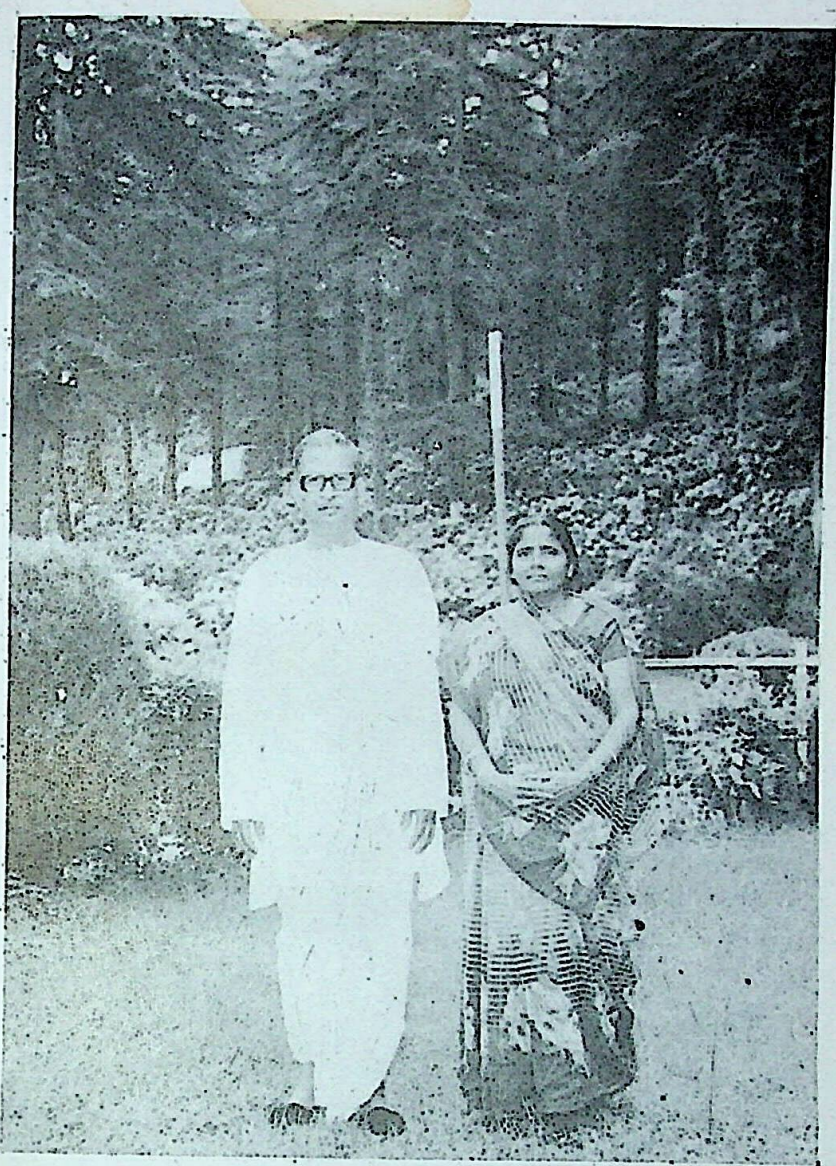
मसूरी में पत्नी के साथ २९ जुलाई १९८२

श्री हरी राम आर्य
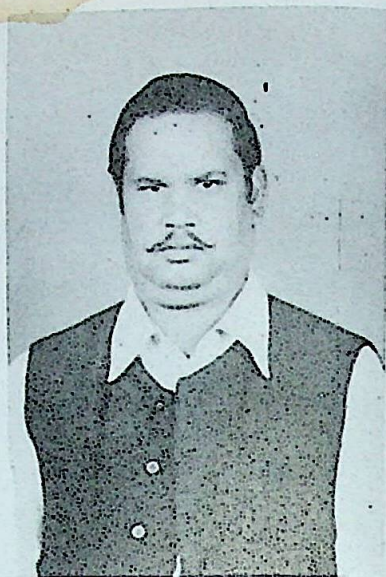
श्री राधेश्याम आर्य
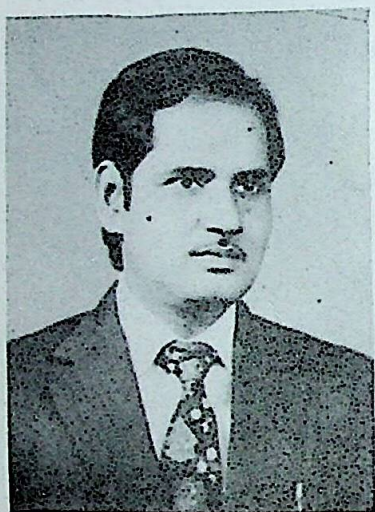
श्री श्रीराम आर्य

श्री मनीराम आर्य
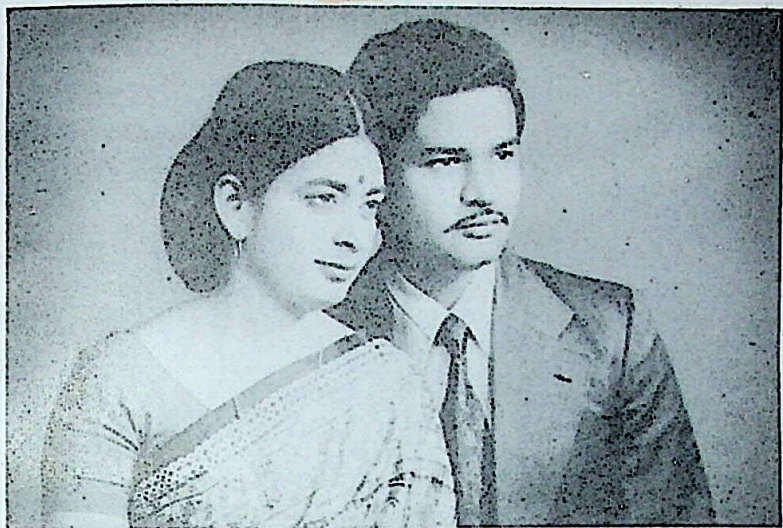
श्री ओमप्रकाश आर्य एवं श्रीमती भारती आर्य

प्रवीण कुमार एवं गुडिया

श्री सत्यप्रकाश आर्य

श्रीमती रानी आर्य
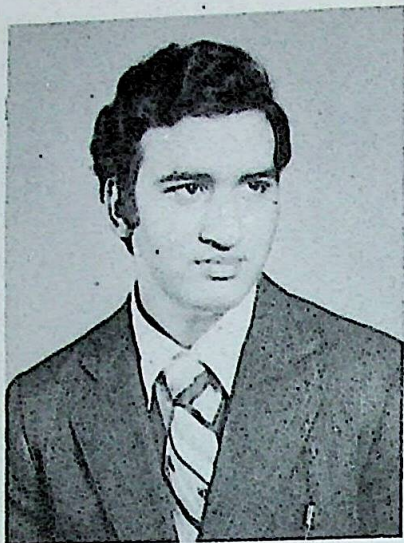
श्री हरी राम आर्य की पत्नी एवं उनके सुपुत्र

श्रीमती जीवन्ती जायसवाल

श्रीमती दयावन्ती जायसवाल

कुमारी सुनीता आर्य
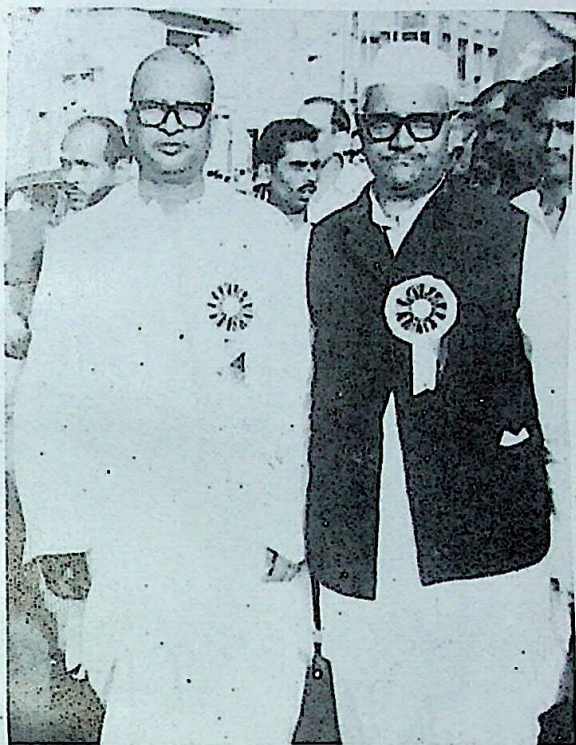
कलकत्ता आर्य समाज के वार्षिकोत्सव (सन् १९७५)
के जलूस समारोह में श्री लक्षमण सिंह के साथ

विदेश यात्रा के समय कलकत्ता से भावभीनी विदाई

बम्बई पहुँचने पर आर्य समाजियों द्वारा स्वागत
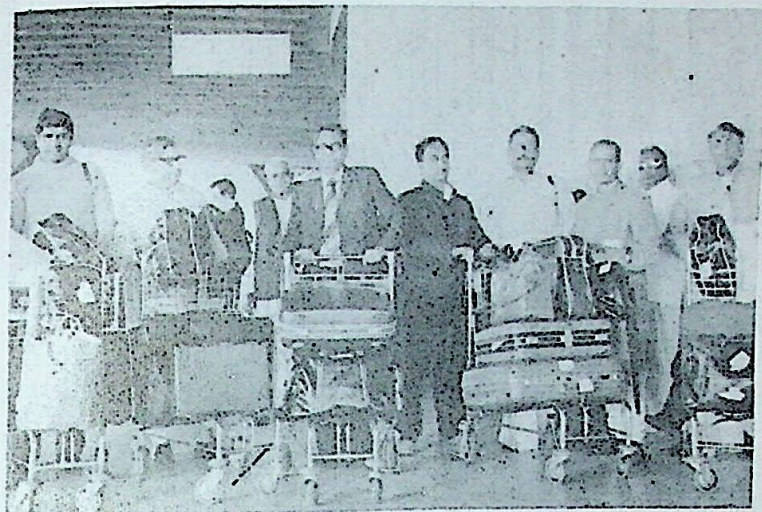
जेनेवा एअरपोर्ट पर साथियों के साथ

विदेशों में सामान स्वयं ही ढोना पडता है
(जेनेवा एअरपोर्ट)

पेरिस में
साथ में मोहनलाल आर्य एवं पं० उमाकान्तजी

साथियों के साथ
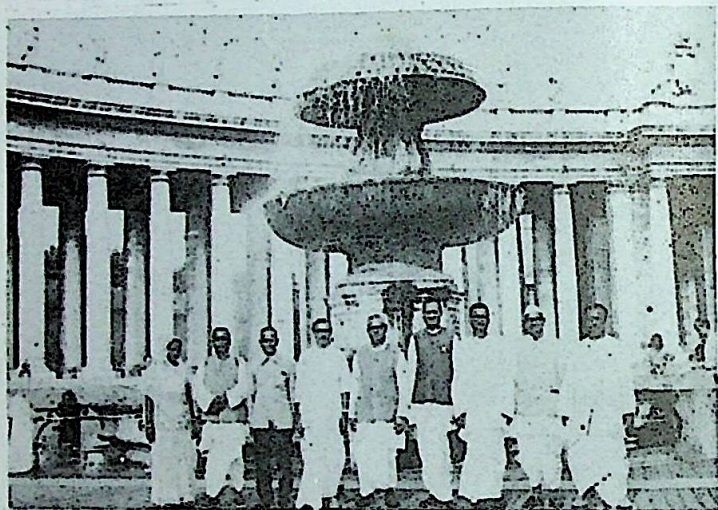
आर्य कन्या विद्यालय दार्जिलिंग के
मेधावी छात्राओं के साथ

दार्जिलिंग आर्य समाज में उपदेश देते हुए

डा० भावानी लाल भारतीय को आर्य समाज
कलकत्ता की तरफ से पुरस्कृत करते हुए

श्री मिश्री लाल आर्य को कलकत्ता आर्य
समाज के मंच पर सम्मानित करते हुए

अध्याय—१

बाल्यकाल

मुझे पाँच वर्ष की आयु के पश्चात् की अधिकांश बातें स्मरण हैं। मेरी माताजी सुन्दरादेवी ने मुझे पाँच वर्ष की आयु में अजमेरी बादशाहपुर प्राइमरी पाठशाला में ज्ञानार्जन हेतु श्री संत सेवक प्रसाद जायसवाल के साथ में भेजना प्रारम्भ किया। बाल्यकाल में मेरा शरीर दुबला-पतला था। घर की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। मेरे पिता श्री रामनारायण जायसवाल कलकत्ता में चलता-फिरता व्यापार करते थे। वे १० रु० या २० रु० प्रति माह घर खर्च के लिए भेजा करते थे। ८-१० मास बाद सौ-सवा सौ रुपया जो उनके पास इकट्ठा हो जाता था, लेकर गाँव आते थे। २-३ मास परिवार के साथ व्यतीत करते थे। उस समय मेरी पढ़ाई-लिखाई की देख-रेख पिताजी ही किया करते थे। मेरी माताजी अशिक्षित होते हुए भी प्रातः और सायं घर पर पढ़ने के लिए प्रेरित किया करती थीं। पिताजी की अनुपस्थिति में माताजी के ही निर्देशन में शिक्षा प्राप्त होती थी। उस समय गाँव में शिक्षा का माध्यम केवल प्राइमरी स्कूल ही थे। ग्रामीण जनता अज्ञान और अंधकार के वातावरण में फँसी हुई थी। बच्चे, जवान और बूढ़ों में जूआ खेलना, माँस-मछली खाना, ताड़ी, शराब, बीड़ी, तम्बाकू, गाँजा, भाँग आदि का सेवन, झूठ बोलना आदि दुर्गुण अधिकांश लोगों में कूट-कूट कर भरे हुए थे। परिवार के सदस्य भी माँस, मछली, ताड़ी, शराब, बीड़ी, तम्बाकू आदि का सेवन करते थे। उनमें दुर्गुण बहुत थे, परन्तु एक गुण भी था—वे चरित्रवान् एवं सत्यवादी थे। जिस गाँव और परिवार का वातावरण इतना विकृत हो चुका हो, उस परिवार में जन्म लेने वाले बच्चे और विकृत ग्रामीण वातावरण में पलने वाले बच्चे से कैसे आशा की जा सकती है कि उसमें अच्छे संस्कार पड़ेंगे।

उस समय गाँव में कोई समाज सुधारक संस्था भी नहीं थी, जिससे आशा की जाती कि वह उस नवजात शिशु का सही मार्गदर्शन करेगी तथा उसे सन्मार्गगामी बनाएगी। स्वच्छ वस्त्र को गंदा करने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वह स्वयं धीरे-धीरे गंदा हो जाता है। उस गन्दे वस्त्र को साफ करने के लिए साबुन-पानी की आवश्यकता पड़ती है। उसी प्रकार कुसंगति से दुर्गुण स्वयं आ जाते हैं, दुर्गुण दूर करने के लिए अच्छे व्यक्तियों को संगति, उपदेश और अच्छे समाज की आवश्यकता होती है।

कुसंस्कारों का पड़ना

विकृत ग्रामीण समाज और परिवार के बीच मैं भी बुरे संस्कारों से अछूता न रहा। जैसे-जैसे बड़ा होता गया न चाहते हुए भी बुरे संस्कार पड़ते गए। हमारी जाति के एक उन्मत्त व्यक्ति ने अपनी पुत्रवधू के साथ संभोग किया। जाति के लोगों ने उसका सामाजिक वहिष्कार किया। वह व्यक्ति जिस किसी गाँव में बिरादरी-भोज में जाता, वहाँ गाँव के व्यक्ति पहुँच कर हल्ला मचाते और कहते "इसका हुक्का-पानी बन्द है। इसके साथ हम भोजन नहीं करेंगे।" वह व्यक्ति अपमानित होकर चला जाता। कई वर्ष वाद उसने जाति के लोगों को वुलाकर कहा "मुझे क्षमा कर दें। जो कुछ दण्ड देना हो दे दें, लेकिन मुझे बिरादरी में ही रहने दें।" उसने हाथ जोड़कर माँफी माँगी। विरादरी के व्यक्तियों ने विचार-विमर्श करके कहा कि 'दण्ड भुगतना पड़ेगा'। विरादरी के चौधरी ने आदेश दिया कि 'सत्य नारायण की कथा सुनो और दो बोतल शराब दो, तब तुम्हारा हुक्का-पानी-खाना चालू होगा।' उसने इस दण्ड को स्वीकार किया। दो-तीन दिन वाद उसने कथा सुनी और सबको वुलाया। नियमानुसार हर घर से एक व्यक्ति को पंचायत में जाना पड़ता था। मेरे पिताजी और चाचाजी सभी कलकत्ता रहते थे। मैं उस समय आठ-नौ वर्ष का था। मुझे नियमानुसार अपने परिवार की ओर से पंचायत में जाना पड़ा। उस अपराधी व्यक्ति ने अपना हुक्का लाकर चौधरी को दिया। चौधरी ने एक-

एक करके सभी को पीने का आदेश दिया। मेरी बारी आने पर चौधरी ने हुक्का पीने का आदेश दिया। मैंने कहा कि मैं हुक्का नहीं पीता। वहाँ उपस्थित व्यक्तियों ने दबाव डालते हुए कहा कि पीना ही पड़ेगा। भले ही एक फूंक पीओ। मजबूर होकर मुझे हुक्का पीना पड़ा और बाद में शराब भी पीनी पड़ी। इसी प्रकार धीरे-धीरे बुराइयाँ बढ़ती गईं। सन्मार्ग पर चलने को प्रेरित करने वाला कोई नहीं था। मैं धीरे-धीरे बिगड़ता गया। कुसंस्कार पड़ते गये।

शिक्षा एवं बुराइयाँ दोनों एक साथ

मेरी माताजी सिर्फ मेरे पढ़ने-लिखने पर ध्यान देती थीं तथा पढ़ने के लिए प्रेरित करती रहती थीं। गाँव में बोर्ड द्वारा संचालित एक प्राइमरी स्कूल घाघरा नदी के किनारे था। कच्ची मिट्टी का बना स्कूल का भवन जर्जर हो गया था। दीवाल की मिट्टी कई स्थानों से बह गयी थी, मात्र कंकड़-पत्थर ही शेष रह गए थे। उस समय गाँव में कच्चे मकान मिट्टी और नदी से लाए कंकड़-पत्थर से बनाए जाते थे। गाँव में शिक्षा का माध्यम केवल यह अकेला प्राइमरी स्कूल था। लड़के और लड़कियाँ सम्मिलित रूप से शिक्षा ग्रहण करते थे। स्कूल का दरवाजा खुलते ही लड़के कक्षा में आगे बैठने के लिए दौड़ पड़ते थे, क्योंकि दीवाल के किनारे बैठने पर कंकड़-पत्थर गिरने से चोट लगने का भय बना रहता था। स्वस्थ और पहलवान लड़के आगे का स्थान ले लेते थे। कमजोर लड़कों को पीछे बैठना पड़ता था। मैं, कु० बुच्चन देवी तथा कु० राजपती देवी दीवाल के किनारे ही बैठते थे। उस समय मौलवी फिदा हुसैन प्रधाना-ध्यापक थे। वे अपने कर्तव्य और उत्तरदायित्व के प्रति सजग रहते थे। वे समय पर विद्यालय में पहुँचते, किस प्रकार पाठ्यक्रम की शिक्षा दी जाए इसका ध्यान रखते; ग्रीष्मावकाश में अपने आवास पर बच्चों को पढ़ाया करते थे। मेरे पढ़ाए बच्चे कभी फेल न हों यह उनके जीवन का मुख्य उद्देश्य था। वे बड़े-छोटे, अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान किसी प्रकार

का भेद-भाव नहीं रखते थे। उनका कर्तव्य केवल विद्यालय में पाठ्यक्रम की शिक्षा देना तक ही सीमित था। सामाजिक बुराइयों से बच्चों को बचाना, उन्हें सन्मार्ग पर चलने की शिक्षा देना आदि से उनका कोई सरोकार नहीं था।

मैं स्कूल में शिक्षा ग्रहण करता एवं अवकाश के क्षणों में कुसंस्कारों में लिप्त रहता था। शिक्षा और बुराइयाँ दोनों समानान्तर बढ़ते जा रहे थे। हिन्दी में प्राइमरी की परीक्षा पास कर लेने के वाद मेरे पिताजी ने कहा कि उर्दू का भी अध्ययन करो। क्योंकि उस समय सरकारी काम उर्दू में ही होता था। पिताजी के आदेशानुसार मैंने पुनः प्राइमरी स्कूल में प्रवेश लिया और दो वर्ष में उर्दू का प्राइमरी का पाठ्यक्रम पूर्ण किया। आइने अदव एवं आइने खस्तिखत कक्षा पाँच में पढ़ाया जाता था। हिन्दी में साहित्य-प्रसून एवं घसीट-पत्र पढ़ाया जाता था। घसीट लिखना भी सिखाया जाता था। यही कारण है कि आज भी मेरी आदत घसीट लिखने की बनी हुई है। उस समय गाँवों में शिक्षा का प्रचार नहीं था। अक्षर ज्ञान भी बहुत कम लोगों को था। स्कूल से लौटने पर २-४ व्यक्ति पत्र पढ़ाने के लिए घर पर बैठे मिलते थे। १२ वर्ष की अवस्था में मैंने हिन्दी और उर्दू में कक्षा पाँच उत्तीर्ण कर लिया था।

मृत्यु पर दिया गया दान स्वर्ग में मिलता है !

उ० प्र० एवं देश के अन्य भागों में यह पौराणिक मान्यता है कि मृत्यु के १०वें दिन जो सामान, अन्न आदि दान दिया जाता है, वह मरे हुए व्यक्ति को स्वर्ग में मिलता है। इस उद्देश्य से ग्रामीण जनता मूर्खतावश हुक्का, चीलम, तम्बाकू आदि भी एक पात्र में रखकर नदी के किनारे या गाँव के वाहर एकान्त में रख आते हैं। एक दिन मैं अपने कुछ साथियों के साथ अपराह्न २-३ वजे नदी के किनारे घूमने निकला। साथी अवस्था में मुझसे बड़े थे। लक्ष्मी प्रसाद शराव की बोतल साथ लाया था। सभी ने शराब पीने की योजना वनायी, परन्तु पात्र के अभाव

में विवश थे कि कैसे पीया जाए। गयाप्रसाद नाम के एक मित्र ने एक ओर इशारा करते हुए कहा कि वह देखो पचहड़ रखा हुआ है। पचहड़ में से नारियल उठा कर लाया गया। उसे तोड़कर दो पात्र बनाये गये। नारियल के पात्र में सबने शराब पी। मैंने भी पी। मेरा यह कार्य बहुत निकृष्ट था।

नागपंचमी-पर्व पर ज्ञान प्राप्त

नागपंचमी पर गाँव में अधिकांश लोग मांस भक्षण किया करते थे। नागपंचमी पर माताजी ने कहा "बेटा यह लो पैसा और रुमाल, जाओ मांस ले आओ।" गाँव में शहतूत के पेड़ के नीचे बकरा काटकर मांस बेचा जाता था। माताजी के आदेशानुसार मैं भी मांस खरीदने पहुँचा। एक-दो-तीन बकरे कटते गये। मांस बिकता गया। मुझे मांस नहीं मिला। मैं बकरा को कटता, चिल्लाता देखकर करुणा से द्रवित हो गया। मैं घर लौट आया और चारपाई पर दुःखी मन से लेट गया। माताजी ने कहा 'क्या हुआ ? लाये नहीं ?' 'मुझे नहीं मिला,' मैंने उत्तर दिया। माता जी ने कहा 'लाओ पैसा दो मैं दूसरे से मंगवा लेती हूँ।' "मैं आज से मांस नहीं खाऊँगा। आपको खाना हो तो मंगवा लीजिए।" मैंने माताजी से कहा। "बेटा जब तुम नहीं खाओगे तो मैं भी नहीं खाऊँगी" माताजी ने उत्तर दिया। उसी दिन से माताजी और पिताजी ने मांस खाना छोड़ दिया। पिताजी बाद में ताड़ी और शराब पीते रहे।

पिताजी का पत्र—हिन्दी और उर्दू में कक्षा पाँच उत्तीर्ण कर लेने के बाद पिताजी का पत्र मुझे मिला। जिसमें उन्होंने बही-खाता (Accounts) और अंग्रेजी पढ़ने के लिए लिखा था। गाँव में उस समय केवल एक प्राइमरी स्कूल था। आगे की शिक्षा की कोई सुविधा नहीं थी। गाँव के पश्चिम ५ मील पर टाण्डा में होबर्ट हाईस्कूल था। टाण्डा में ही गुरु पुरुषोत्तम जी बही-खाता पढ़ाते थे। दोनों की पढ़ाई १० बजे से ४ बजे तक होती थी। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। क्या करूँ ? दोनों की पढ़ाई एक साथ नहीं कर सकता था। पिताजी की

आज्ञा का पालन भी करना था। गाँव के साथियों ने गुरु पुरुषोत्तमजी के यहाँ बही-खाता पढ़ना प्रारम्भ किया। मैं भी उनके साथ बहीखाता पढ़ने जाने लगा। परिश्रमी एवं लगनशील विद्यार्थी के लिए बहीखाते का पूरा पाठ्यक्रम दो वर्ष का था। वे गणित का बड़े से बड़ा हिसाब अंगुलियों पर हल करने की पद्धति सिखाते थे। आज के विद्यार्थी दस-बीस रुपये का सामान खरीद कर कागज-कलम के सहारे हिसाब बताना चाहते हैं। गुरु पुरुषोत्तम जी के पढ़ाये लड़के सौ-पचास मन, आना-पाई, तोला-माशा-रत्ती तथा बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा हिसाब बिना किसी कागज-कलम की सहायता के अंगुलियों पर गिनकर सही बता देते थे।

माताजी की दूरदर्शिता—मैंने बही-खाता पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था, परन्तु अंग्रेजी की पढ़ाई शुरू नहीं कर पाया था। पिता जी ने अंग्रेजी भी सीखने के लिए लिखा था। मैंने अपनी समस्या माता जी के सामने रखी 'मैं बहीखाता तो पढ़ रहा हूँ, अंग्रेजी कैसे पढ़ूं ?' माता जी ने मेरी इस समस्या का समाधान निकाला। माता जी ने श्री जय रामदास विश्वकर्मा से प्रार्थना की कि मेरे पुत्र को सायं ७ से ९ तक अंग्रेजी पढ़ा दिया करें। उन्होंने मेरी माताजी की प्रार्थना को स्वीकार किया। प्रतिदिन बहीखाता पढ़ने प्रातः ५ मील पैदल टाण्डा जाता और पैदल वापस सायंकाल घर लौटता। घर पर जलपान करके सायं ७ से ९ बजे तक अंग्रेजी पढ़ने प्रतिदिन श्री जय रामदास विश्वकर्मा के पास जाता। जाड़ा, गर्मी और बरसात सभी मौसम में प्रतिदिन पाँव में जूता नहीं, हाथ में छाता नहीं, प्रातः रात्रि का रखा हुआ भोजन करके, एक पैसा लेकर टाण्डा पढ़ने चला जाता। न किसी दिन विलम्ब से पहुँचा और न कभी अनुपस्थित हुआ।

एक पैसे की खुशी—उस समय ६४ पैसे का रुपया चलता था। माता जी मुझे एक पैसा प्रतिदिन दिया करती थीं। उस समय गाँव के आसपास आटा पीसने की मशीन नहीं थी। माताजी या चाचीजी आदि

कहतीं 'बेटा ! गेहूँ पिसाने लेते जाओ। एक पैसा और ले लो।' एक पैसा और पाने की खुशी में मैं आठ सेर गेहूँ पीठ पर बाँध कर ले जाता। आटा पिसाकर लाना अत्यन्त कष्ट साध्य था। उस कष्ट को शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता। प्रचण्ड गर्मी के दिनों में एक ओर बिना जूते के पैर जलता था दूसरी ओर तुरन्त मशीन से पिसा गर्म-गर्म आटा पीठ जलाता था। परन्तु पैर और पीठ की जलन एक पैसा अधिक पाने की खुशी में भूल जाता था। पढ़ाई से छुट्टी पाकर आटा पिसाता और एक पैसे की खुशी में कष्टों को झेलता हुआ गाँव की ओर चल देता। उस समय एक पैसा भी बहुत होता था। खाने-पीने का सामान सस्ता था। एक पैसे में हलुआ और कचौड़ी दोनों मिल जाता था। एक पैसे का फुटकर करा लेने पर आधा पैसा और चौथाई पाई मिलता था, जिससे दो-तीन बार कुछ लेकर खाने का आनन्द मिलता था।

मैं पढ़ने में तेज था। साथ के विद्यार्थियों को गणित के सवालों में हरा देता था। हारे हुए विद्यार्थी तरह-तरह की धमकी देते रहते थे। मेरा शरीर दुर्बल था, अतः हारे हुए विद्यार्थियों के भय से ऊबड़-खाबड़ पगडंडी और नाले से होकर आता जाता था। पैरों को बहुत कष्ट होता था। मुझे स्मरण है कि विवाह के पूर्व मेरे पैरों में जूता नहीं था। सिर्फ धोती कमीज और बनियान पहिनता था।

प्रातः टाण्डा जाना और सायं वापस लौटकर रात्रि को तथा अवकाश के दिनों में श्री जयराम दास विश्वकर्मा के घर अंग्रेजी पढ़ने जाना, यह क्रम दो वर्ष तक चलता रहा। दो वर्ष पूर्ण हो जाने पर एक दिन श्री पुरुषोत्तम गुरुजी ने कहा कि तुमने बहीखाते का पूरा पाठ्यक्रम सीख लिया है, अब तुम इस कार्य को अच्छी तरह कर सकते हो। मैं अंग्रेजी की कक्षा ९ और १० की पुस्तकें आसानी से पढ़ने और समझने लगा था। श्री जयराम दास विश्वकर्मा जी ने कहा कि मैं तुम्हारा नाम कक्षा ८ या ९ में टाण्डा में लिखा देता हूँ, जिससे तुम्हें हाई-स्कूल का प्रमाण पत्र दो वर्ष में मिल जाये।

अध्याय—२

माताजी को विवाह की चिन्ता

उस समय गाँवों में बाल-विवाह की प्रथा प्रचलित थी। लड़की का विवाह १०-१२ वर्ष तक तथा लड़के का विवाह १५ वर्ष तक हो जाता था। इससे भी कम अवस्था में विवाह-संस्कार गाँव में सम्पन्न हो जाता था। मेरी अवस्था लगभग १४ वर्ष की हो गयी थी। विवाह का प्रस्ताव कई स्थानों से आने लगा था। परन्तु कहीं तय नहीं हो पाया था। अतः माताजी चिन्तित रहती थीं। कम अवस्था में विवाह न होने पर गाँव के व्यक्ति मिथ्या प्रचार और शिकायत किया करते थे। इस सामाजिक दुर्बलता ने माता जी को और भी चिन्तित कर रखा था। पिताजी को इस बात की कोई चिन्ता नहीं थी क्योंकि वह कलकत्ता जैसे महानगर में रहा करते थे। उनके विचारों में सामाजिक कुरीतियों के प्रति अन्धविश्वास नहीं था।

मामाजी द्वारा माताजी की चिन्ता का समाधान—एक दिन मामा महादेव प्रसाद जी का आगमन हुआ। उनके साथ विरऊपुर के श्री भवानी भीख जी भी आये थे। वे अपनी कन्या का सम्बन्ध लेकर आये थे। मामा जी ने इस प्रस्ताव को माता जी के समक्ष रखा और अपना समर्थन प्रकट किया। माता जी ने अपनी मजबूरी व्यक्त करते हुए कहा कि 'मेरे पतिदेव कलकत्ता हैं। मैं कैसे हां कह सकती हूँ ?' परन्तु माता जी की प्रबल इच्छा थी कि मेरा विवाह सम्बन्ध कहीं जल्दी तय कर दिया जाए। मामा जी के दबाव डालने पर माता जी ने अपनी स्वीकृति बिना पिताजी से पूछे दे दी। पाँच रुपया बरच्छा के रूप में स्वीकार किया। लड़की की पढ़ाई-लिखाई, रंग-रूप आदि के विषय

में कुछ भी नहीं पूछा। माता जी को केवल इतना पता था कि लड़की है, १० वर्ष की है।

विवाह की तैयारी

विवाह-सम्बन्ध तय होने के बाद माताजी की प्रसन्नता का पारावार न रहा। पिता जी को विवाह-सम्बन्ध तय हो जाने की सूचना पत्र द्वारा दी गयी। विवाह की तिथि निश्चित हुई। पिताजी और माताजी विवाह की तैयारी में लग गये। पिता जी ने आभूषण बनवाने का कार्य अपने ऊपर लिया। माता जी मुझे साथ लेकर भोजन-सामग्री की व्यवस्था में लग गयीं। उस समय सामान इतना सस्ता था कि आजकल बच्चों के सामने कहा जाता है तो वे विश्वास नहीं करते। उस समय शुद्ध घी (भैंसका) एक रुपया सेर, गुड़ एक रुपया का बीस सेर, चावल अरवा अच्छा एक रुपये का सात सेर, चावल लाल मोटा एक रुपये का १० सेर चना-मटर एक रुपये का १५-१६ सेर मिलता था। सूती धोती चार रुपये जोड़ा और अच्छी सूती साड़ी नौ-दस रुपये जोड़ा मिलती थी। सभी समान सस्ता था। रुपये का मूल्य बहुत था। उस समय गाँव में दिन भर की मजदूरी चार-पाँच आना थी। बीस मील आने-जाने, सामान भी लेकर जाने वाले हरकारे को मजदूरी आठ आने (५० पैसे) से अधिक नहीं थी। हमारे गाँव में घर के सामने गूदर जायसवाल नाम के एक व्यक्ति रहते थे। वे हरकारे का काम करते थे। उनसे अधिक पैदल चलने वाला व्यक्ति गाँव में कोई नहीं था। मैं और मेरे भाई-बहिन उन्हें गूदर चाचा कहा करते थे। वे हमारे परिवार से बहुत स्नेह रखते थे। स्वच्छता और पवित्रता उनके जीवन का अंग था। अयोध्या हमारे गाँव से ४० मील पश्चिम है। गूदर चाचा रामनवमी और कार्तिक पूर्णिमा के दिन प्रतिवर्ष स्नान करने के लिए पैदल अयोध्या जाते थे। स्नानार्थ ब्राह्ममुहूर्त में निकल जाते थे और उसी दिन ८० मील की यात्रा पूरी करके रात्रि ८ बजे तक वापस लौट आते थे। रात्रि में

लौटकर अयोध्या का प्रसाद हमलोगों को बुलाकर देते थे। उनके इस परिश्रम की गाथा बच्चों को काल्पनिक कथा प्रतीत होती है। अपने परिश्रम से उन्होंने सैकड़ों रुपये उस समय एकत्र कर रखे थे। अपनी सम्पत्ति मृत्यु से पूर्व उन्होंने अपने भाई और भतीजों को दे दी थी। हम लोगों के प्यार के प्रतिफल के रूप में उन्होंने हमारे घर के सामने का मकान हमें प्रदान कर दिया था।

पिताजी का विवाह पर आगमन—पिताजी ने कलकत्ते से पत्र द्वारा सूचित किया कि विवाह के आभूषण बन कर तैयार हैं। परन्तु एक सौ रुपये की कमी के कारण मैं नहीं आ पा रहा हूँ। माताजी को सौ रुपये बीमा द्वारा भेजने के लिए उन्होंने लिखा था। माताजी ने सौ चाँदी के सिक्के निकाल कर दिये और रामानन्द मांझी को बुलाकर कहा "इनके साथ टाण्डा जाकर यह रुपया बीमा द्वारा कलकत्ता भेज दो।" टाण्डा जाकर सिक्कों को बदलकर एक सौ रुपये का नोट लिया। श्री रामयश आर्य के पिता श्री महावीर शाव के पास गया और कहा "यह सौ रुपया कलकत्ता बीमा द्वारा भेज दीजिए।" उन्होंने सौ रुपये का नोट बीच से काट दिया। नोट को काटते देखकर मैं घबड़ा गया। उन्होंने कहा "घबड़ाओ मत! यह दो टुकड़े दो अलग-अलग बीमें में भेजे जाएँगे। एक गायब हो गया तो भी दूसरे से रुपया मिल जाएगा।" सौ रुपये का इतना महत्त्व था कि उसे इतनी सुरक्षा से भेजा गया था। दो टुकड़ा नोट कागज से जोड़कर चलता था। यह एक आम प्रथा थी। प्रायः सभी इसी तरह रुपया भेजते थे। आज सौ रुपये के नोट का कोई अधिक महत्त्व नहीं है।

पिताजी रुपया मिलने के बाद आभूषणादि लेकर घर आ गये। परिवार में नयी पीढ़ी में यह पहला विवाह था। अपनी स्थिति के अनुसार जो भी सामान खरीद कर लाये थे, उसे देखकर परिवार के सभी व्यक्ति प्रसन्न थे। आभूषण सभी चाँदी के थे। पिताजी ने कहा कि सोना बहुत मंहगा था, सोने का जेवर लेने के लिए उतना धन नहीं था।

पूछे जाने पर पिताजी ने बताया था कि असली सोना ३२ रुपये तोला और चाँदी एक रुपये की पौने तीन तोला भाव था।

पिताजी की प्रसन्नता समाप्त—पिताजी का सारा उत्साह ठंडा पड़ गया। सारी खुशी समाप्त हो गयी, जब उन्होंने माता जी से लड़की के विषय में पूछ-ताछ की। पिता जी के प्रश्नों के उत्तर में माता जी ने कहा कि लड़की साँवली है, विना पढ़ी-लिखी है। पिताजी बहुत क्रोधित हो गये। माताजी ने सारी जिम्मेदारी मामा श्री महादेव प्रसाद के ऊपर डालते हुए कहा "उन्होंने ही यह सम्बन्ध कराया है।" पिताजी मामाजी से इतना सख्त नाराज थे कि पिता जी के क्रोध के डर के कारण ही मामा जी विवाह संस्कार पर नहीं आये।

पिता जी ने मुझे समझाते हुए कहा "जो होना था हो गया। विवाह जीवन में एक बार होता है। कर्मानुसार ही पति-पत्नी मिलते हैं। अतः तुम्हें इसमें ही प्रसन्नता का अनुभव करना चाहिए।" कम अवस्था में ही विवाह हो गया। उस समय गाँव में गौना-संस्कार प्रचलित था, जिसके अनुसार, विवाह के तीन, पाँच या सात वर्ष बाद पत्नी पति के पास आती थी। आज भी यह प्रथा गाँवों में यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होती है।

अध्याय—३

पिताजी से परामर्श

मैंने पिताजी से अपनी आगे की पढ़ाई के विषय में इच्छा व्यक्त की। पिताजी ने कहा "तुम, तुम्हारी बहिन अनार कली देवी और दो भाई हरीराम और राधेश्याम मिलाकर चार हो गये हो मेरे ऊपर खर्च का भार अधिक पड़ रहा है। अब तुम पढ़ाई छोड़कर यहाँ पर किसी की दूकान पर काम करो। हरीराम की पढ़ाई की व्यवस्था करो। इस प्रकार मुझपर खर्च का भार कुछ हल्का होगा।"

पिताजी को इच्छा के अनुसार पाँच-छः मासतक टाण्डा, वस्ती जहाँ अपना परिचय था, नौकरी की तलाश की। परन्तु कहीं भी सफलता न मिली। इस समय मेरी उम्र १५-१६ वर्ष थी। पिताजी का पत्र मिला कि कलकत्ता चले आओ। यहीं तुम्हारे काम की व्यवस्था की जाएगी। मेरी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उस समय कलकत्ता का अकवरपुर से किराया लगभग पाँच रुपए था। सन् १९३९ में श्रावणी पर्व के दिन कलकत्ता पहुँचा था। उस समय पिताजी, चाचाजो, गाँव के रामेसर भगत आदि १७, वलाई सिंगिल लाइन में रामलाल रामभरोसे के वाड़ी में दो कमरे लेकर रहते थे। उस समय प्रायः यह परम्परा वन गयी थी, कि एक गाँव के लोग एक या दो कमरे लेकर सामूहिक रूप से रहते और एक साथ भोजन करते थे। रहन-सहन बहुत दयनीय था। मैं भी वहीं रहने लगा। इसके पूर्व मैं माता जी के साथ ४-५ वर्ष की अवस्था में कलकत्ता आया था। उस समय पिताजी ७७, कैलास बोस स्ट्रीट में एक बंगाली के मकान में रहते थे। ग्रामवासी एवं परिचित मुझे बहुत स्नेह से देखते थे।

पिताजी जो काम करते वह बहुत कष्ट-साध्य था। अतः पिताजी उसे मेरे अनुपयुक्त समझते थे। पिताजी की इच्छा थी कि मैं कहीं भी

आराम से रहकर कोई काम सीखूं। उन्हें धन से अधिक मेरे स्वास्थ्य का ध्यान था।

विद्यार्थी जीवन से श्रमिक जीवन की ओर

एक सप्ताह बाद पिताजी रामेसर भगत के साथ मुझे लेकर ३६-बी लोअर सरकुलर रोड, मलिक-बाजार श्री वासदेव शाव के पास गए। श्री वासदेव शाव फूलपुर के ही निवासी थे। वे किछौछा में रहने लगे थे। रामेसर भगत ने श्री वासदेव शाव से कहा कि इन्हें काम पर लगाना है। श्री वासदेव शाव ने अपने यहाँ काम पर रखने की स्वीकृति दी। उन्होंने कहा "हमें पढ़े-लिखे व्यक्ति की आवश्यकता है। इसे हमारे पास छोड़ दो, कोई कष्ट नहीं होगा। कितना रुपया मासिक देना होगा ?" रामेसर भगत ने कहा कि रुपए-पैसे की कोई बात नहीं है। घोड़े का दाम घोड़े की चाल पर निर्भर है।

एक सप्ताह में उनके व्यापार, रहन-सहन, लेन-देन, पूंजी आदि से परिचित हो गया। दुकान में बैठने के लिए एक चटाई तथा फोन के अतिरिक्त कुछ न था। इनका लेना उनको देना यही उनका कार्य था। किसी प्रकार कार्य चलता था। परिचित व्यक्तियों ने बताया कि दो बार व्यापार फेल हो चुका है। सायंकाल होते ही तगादा करने वाले पहुँच जाते थे। उन्हें धूर्त, बेइमान, मक्कार आदि शब्दों से सम्बोधित करते। मैं अपने मन में स्वयं को कोसता और कहता, 'क्या मैं पूर्व जन्म में इतना पापी था, जिसके फलस्वरूप मुझे इतने पतित व्यक्ति के सम्पर्क में रहना पड़ रहा है।' कभी-कभी पिताजी से मिलने जाता रहता था। वे पूछते "कैसे हो ?" मेरा उत्तर होता था "पिताजी ! मैं बहुत आराम से हूँ। बिल्कुल ठीक हूँ। किसी प्रकार की तकलीफ नहीं है।" अपने कष्टों को छिपा लेता था। क्योंकि मैं जानता था कि पिताजी मेरे कष्टों को सुनकर अपने पास बुला लेंगे। मैं मन में सोचता था—

रंग लाती है हिना पत्थर पर घिस जाने के बाद।
सुर्खरू होता है इंसां ठोकरें खाने के बाद।

'ईश्वर सहन शक्ति दे', यह भावना लेकर कार्य में लगा रहा। ऐसा भी समय सामने आया जब दिन-दिन भर भोजन नहीं मिला और न जेब में ही एक पैसा था कि कहीं जाकर उधार माँग कर भोजन की व्यवस्था कर सकूं। एक बार दो दिन से भोजन नहीं मिला था। तीसरे दिन एक व्यक्ति ने दो आना देकर फोन किया। उस २ आने में से तीन पैसा ट्राम किराया देकर चलता बगान गया। वहाँ गंगा प्रसाद शिवशंकर लाल फर्म के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री मुन्नीलाल जी को माल देने का सौदा किया। रसीद पर हस्ताक्षर करके एडवांस रुपए प्राप्त किये। उस रुपए से दो दिन भूखा रहने के वाद अपने और साथी कर्मचारियों के भोजन की व्यवस्था की। भोजन के लिए मिथ्या कहकर लाई हुई धनराशि वापस करने के लिए वहुत दौड़-धूप करनी पड़ी। स्क्राप खरीद कर उनको माल देकर अपने वचन का पालन किया। इतना कष्ट सहने के वाद भी पिताजी से कभी नहीं बताया।

आर्यसमाज के सम्पर्क में

मलिक वाजार में श्री जगमोहन महाशय से मेरा परिचय हुआ। उन्होंने आर्य-समाज की ओर प्रेरित किया। वे अपने साथ मुझे आर्य-समाज ले गये। आर्य-समाज के पास अपना निजी स्थान नहीं था। पार्क-सर्कस के केराया मोड़ के पास एक मकान में सत्संग होता था। यज्ञ के पश्चात् पण्डित शिवनन्दन जी काव्यतीर्थ ने मुझे यज्ञोपवीत दिया। सत्संग की समाप्ति के बाद मैंने आर्य-समाज का अकाट्य ग्रंथ सत्यार्थ-प्रकाश छः आने में खरीदा। इसके वाद मैं कभी-कभी आर्य समाज के जलसों में भी जाने लगा।

द्वितीय विश्व युद्ध

२ सितम्वर १९३९ को द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हो गया था। इस युद्ध में ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका तथा रूस एक ओर थे तथा जर्मनी, इटली

और जापान एक ओर। युद्ध अपना विकराल रूप धारण करता जा रहा था। इधर महात्मा गांधी द्वारा स्वाधीनता आन्दोलन भी चल रहा था। पिता जी की आज्ञा के अनुसार मैं कलकत्ता छोड़कर अपने गाँव फूलपुर आ गया था। विश्वयुद्ध बढ़ते-बढ़ते बर्मा, असम आदि तक फैल गया था। बहुत लोगों ने कलकत्ता छोड़ दिया था। हमारे परिवार के सभी लोग कलकत्ता छोड़कर चले गये थे। घर पर सभी बेकार बैठे थे। पिता जी ने कहा कि जब तक कलकत्ता में शान्ति नहीं हो जातो तब तक किराना एवं गल्ला का छोटा व्यापार घर पर ही किया जाए। व्यापार शुरू किया गया। जीवन-यापन आराम से होने लगा।

१९४४ में श्री वासदेव शाव हमारे घर आए। पिताजी से उन्होंने कहा कि कलकत्ता में अब शान्ति है। अब धीरे-धीरे सभी लोग कलकत्ता लौट रहे हैं। आप सीता राम को भी भेज दीजिए। पिताजी ने मुझे पुनः कलकत्ता भेज दिया।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति और कलकत्ता की चहल-पहल

१९४५ ई० में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हो गया। असम से लेकर बिहार तक, जहाँ कहीं स्थान खाली था, सभी स्थानों पर अमेरिकन सेना की गाड़ियाँ भरी हुई थीं। कलकत्ता और हावड़ा के आस-पास लड़ाई के सामान के अतिरिक्त कोई दूसरी वस्तु दिखाई नहीं पड़ती थी। अमेरिकन आर्मी के गोरे-काले, लम्बे-मोटे ओठ वाले तथा घुंघराले बाल वाले हब्शी जवान पूरे कलकत्ता में भरे हुए थे। सब जगह फौजी जवान और लड़ाई के सामान का विशाल भण्डार ही दिखाई पड़ता था। मोटरों के काफिले के बराबर अभी तक साइकिलों का काफिला भी देखने को नहीं मिला।

युद्ध की समाप्ति के बाद अमेरिकन वापस जाने लगे। बचे हुए सामानों की होली शुरू हुई। हजारों टन गोला बारूद नष्ट किया गया। कूड़े के भाव सामान की बिक्री प्रस्थान से पूर्व करने लगे। आसाम-बंगाल में अमेरिकन जी० एम० सी० टेन ह्वीलर ट्रक, ओपेन केरियर डज, डायमेन्टी ट्रक, जीप आदि शान्ति प्रसाद जैन को बेच दी। १७ रु० (सत्रह रुपये)

एक ट्रक की खरीद पड़ी थी। ६५० रु० की जी० एम० सी० टेन ह्वीलर ट्रक हमलोग कलकत्ता, जोधपुर डिपो, टालीगंज से छाँटकर लाते थे। १७ रु० की दर से फोर्ड का डिफ्रेंशल शिवपुर डिपो मैदाकल में मैंने स्वयं नीलामी में खरीदा था। जिसकी कीमत आज छः हजार रुपये है। उस समय मेहनत की कमाई नहीं थी। जो व्यक्ति उस क्षेत्र में ठीक से कार्य कर रहा था, वह चन्द दिनों में लखपति करोड़पति हो गया।
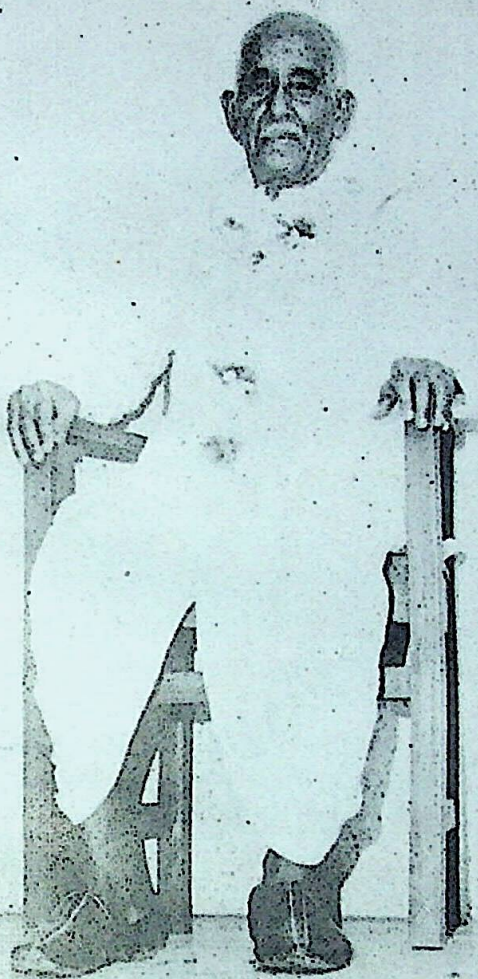
हमारे परिवार के सबसे अधिक उम्र के
वयोवृद्ध श्री छेदू राम साव, उम्र ११० वर्ष
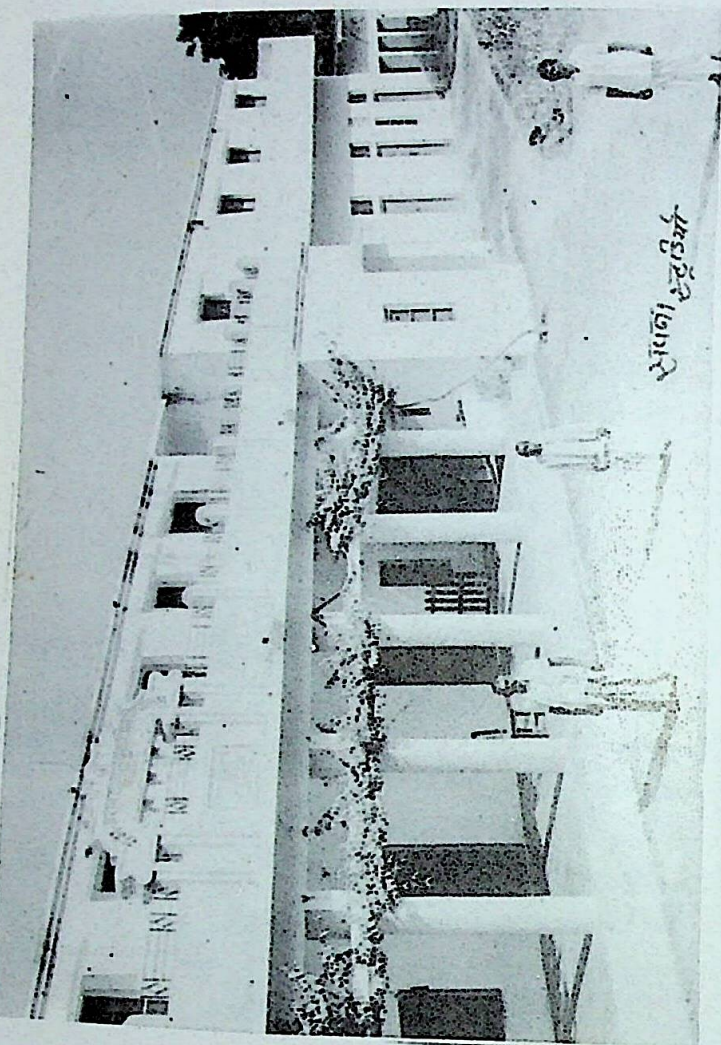
रामनारायण उच्चतर माध्यमिक विद्यालय,
फूलपूर का भव्य विशाल भवन
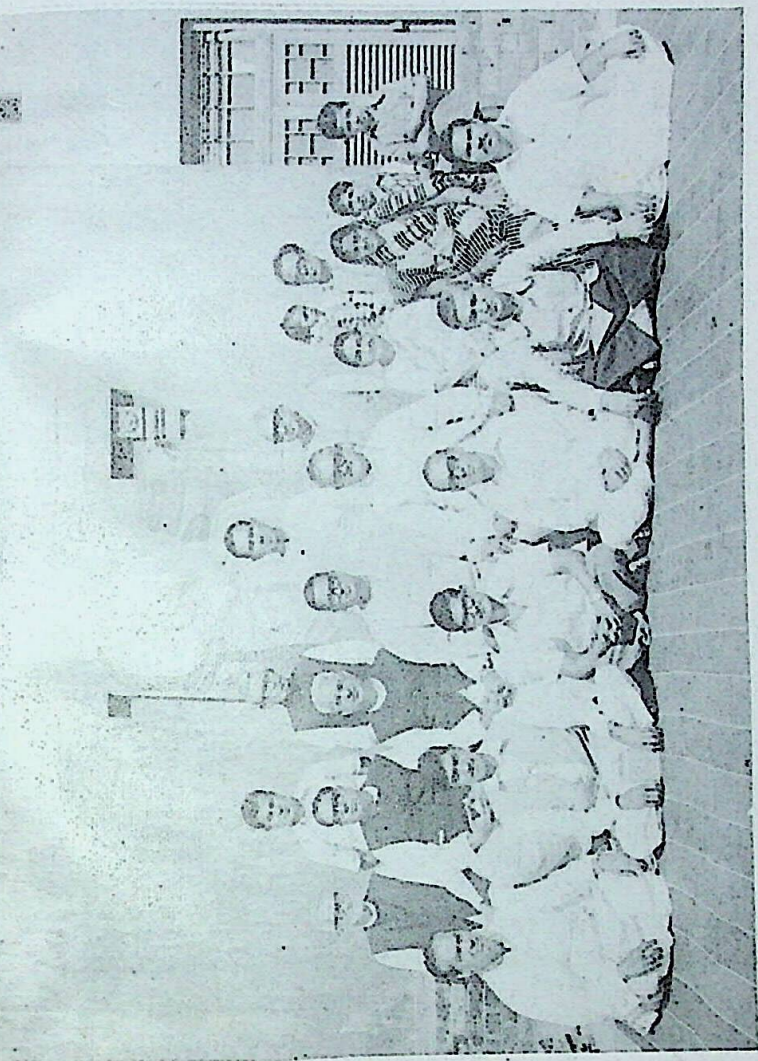
आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान पद (प्रथम बार)
के अवसर पर — साथ में सहयोगी गण
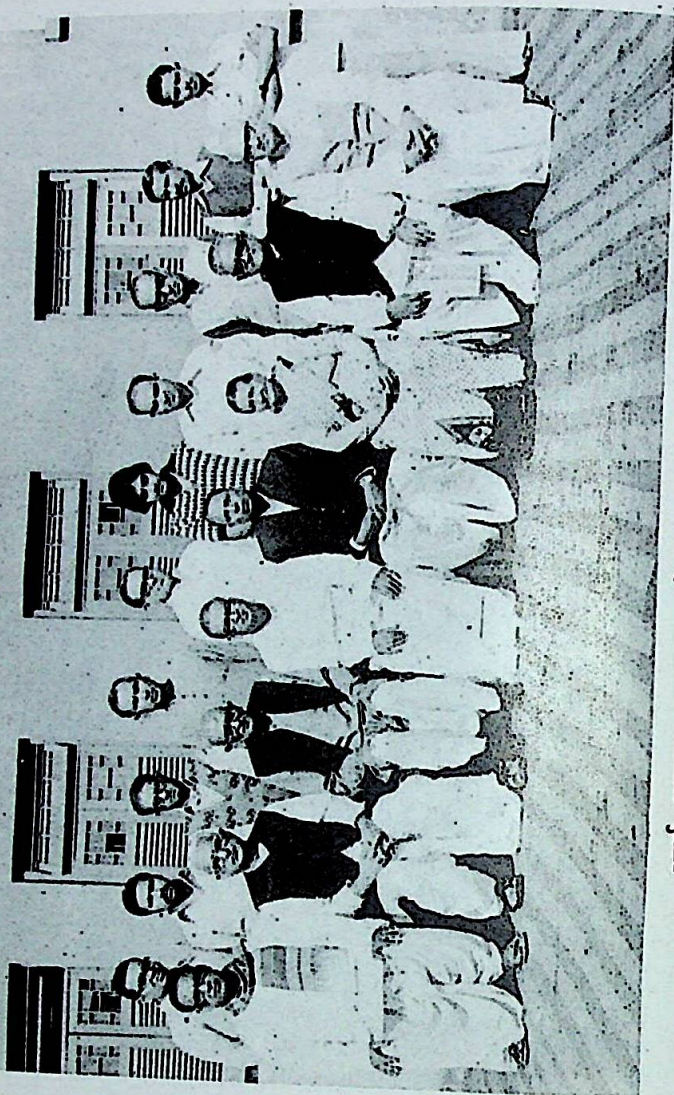
आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान पद (द्वितीय बार)
के अवसर पर — अन्य सहयोगियों के साथ

श्री राधेश्याम आर्य की पत्नी एवं उनके सुपुत्र
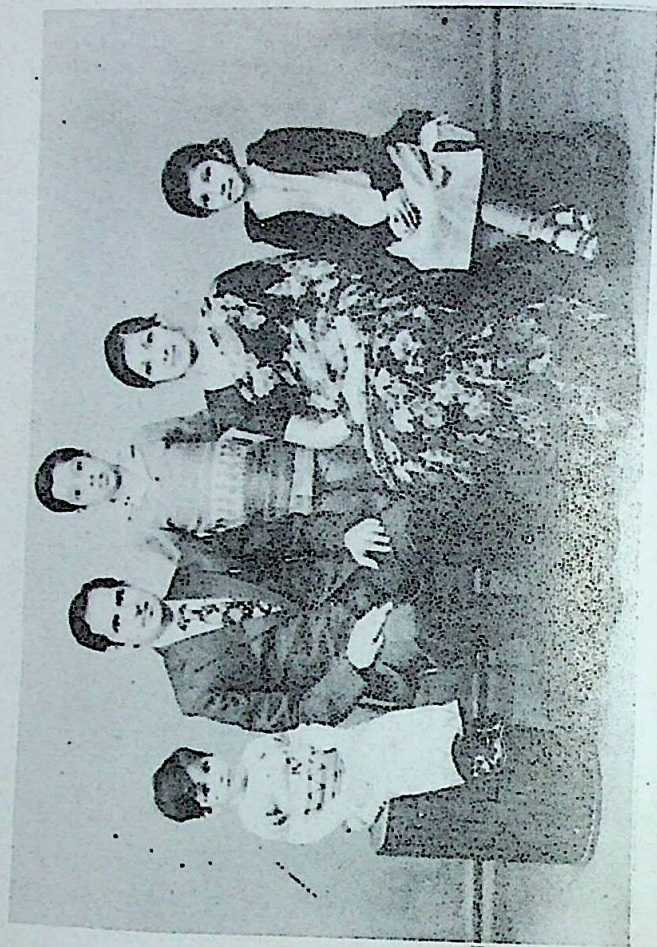
श्री राम आर्य, श्रीमती गीता आर्य एवं उनके बच्चे

श्री मनीराम आर्य, पत्नी एवं बच्चों के साथ
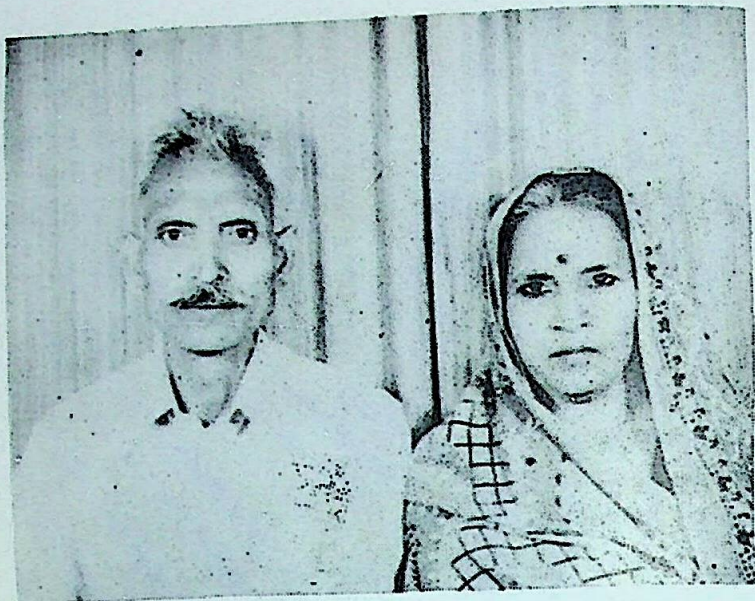
श्री बिश्राम जायसवाल एवं श्रीमती अनारा जायसवाल
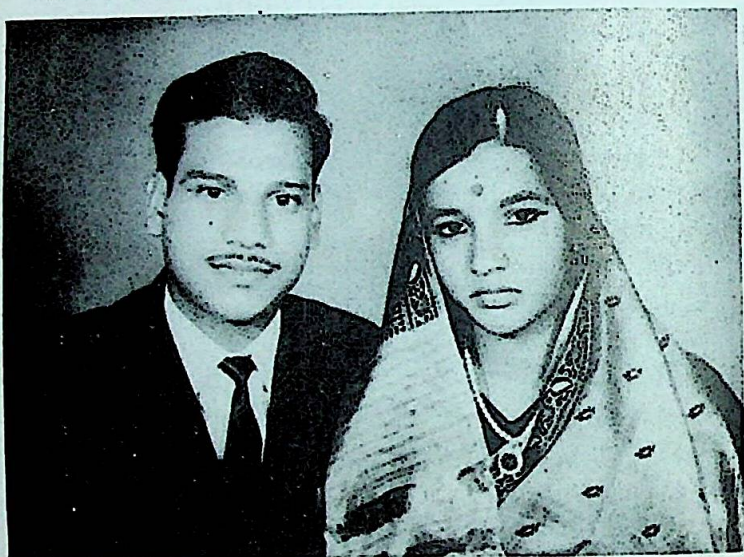
श्री राजेन्द्र कुमार आर्य एवं श्रीमती नीला आर्य

अध्याय—४

१५ अगस्त १९४६ : भारत में काल-रात्रि

१५ अगस्त १९४६ को पंजाब, सिन्ध, बलूचिस्तान, बंगाल आदि प्रान्तों में हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों के बीच दंगा प्रारम्भ हुआ। लाखों-व्यक्ति मौत के मुख में चले गए। कितने ही घर-विहीन हो गए। कितनी ही माताओं और बहनों का सुहाग लूटा गया। बच्चे अनाथ हो गए। हत्यारों ने भूमि को रक्त रंजित कर दिया कितने ही मकान और भवन धू-धू कर जलते हुए भस्मसात हो गए।

उस समय बंगाल में श्री सोहराब वर्दी मुख्य मन्त्री थे। उन्होंने मुसलमानों का खुलकर समर्थन किया था। किसी तरह मार-काट शान्त हुआ। परन्तु छुट-पुट घटनाएँ बराबर होती रहती थीं। रात में जय-हिन्द और अल्लाह-अकबर के नारों से आकाश गूंजता रहता था। जिस स्थान पर हिन्दुओं की संख्या कम थी, उन स्थानों को छोड़कर वे उन मुहल्लों में चले गए, जहाँ उनकी संख्या अधिक थी। इसी प्रकार मुसलमान भी अपने बहु-संख्यक मुहल्लों में भाग गए थे। दोनों सम्प्रदायों के बीच मोर्चा-बन्दी होती रहती थी। मलिक बाजार में मुसलमानों की संख्या अधिक थी। अतः हिन्दू यहाँ से हिन्दू-मुहल्लों में भाग रहे थे। श्री वासदेव शाव मलिक बाजार छोड़कर मानिक तल्ला चले गये थे। मैं रामचेत, जयराम शाव तथा कई कर्मचारी मलिक बाजार ही रुके रहे। क्योंकि केराया रोड पर स्थित गोदाम में माल अधिक था। धीरे-धीरे मानिक तल्ला पहुँचाया गया। दिन भर भूखा रहने के बाद भोजन बनाया जा रहा था, तब तक दंगा प्रारम्भ हो गया। श्री पृथ्वीपाल मिश्रजी जो जी० ई० सी० में दरबानी का कार्य करते थे, एक टैक्सी लेकर पहुँचे। हम सभी ८ व्यक्ति खाना बनता छोड़कर

टैक्सी में बैठकर भाग निकले मलिक बाजार में मुसलमानों की संख्या बहुत थी, अतः चारों ओर खतरा था। रात्रि १० बजे सेन्ट्रल एवेन्यू स्थित सेन्ट्रल कलकत्ता होटल पहुँचे। दिन भर भोजन नहीं मिला था, अतः भूख-प्यास लग रही थी। मैं कई वर्षों से कलकत्ता में रह रहा था, परन्तु आज तक कभी किसी होटल में भोजन या जलपान नहीं किया था। न कभी शीशे के गिलास में पानी ही पिया था। प्राण रक्षा हेतु होटल का भोजन स्वीकार किया। बैरे ने दोपहर का बचा भोजन-चावल, दाल, सब्जी लाकर दिया। कई बार उसे रोटी लाने के लिए कहा, परन्तु उसने रोटी नहीं दी।" उसने कहा "खाना हो तो जो दे रहा हूँ, वही खाओ।" रोटी क्यों नहीं दे रहा है ? यह पूछने पर पता चला कि श्री पृथ्वीपाल मिश्र इनके होटल की भी सुरक्षा करता है। हम सब पृथ्वीपाल के साथ आए हैं, अतः वह मुफ्त में भोजन दे रहा है। इसीलिए दिन भर का बचा सामान ही खाने के लिए दे रहा है। भोजन छोड़कर ऊपर कमरे में गए। रात में ११ बजे होटल का मैनेजर कमरे में आया। उसने एक-एक लाठी सबको देते हुए कहा कि पीछे ड्रम रखे हुए हैं, उधर से मुसलमान चढ़ आते हैं। जब वे आने लगें तो तुम लोग डण्डे से उनका मुकाबला करना। रात भर खतरा बना रहा। रात भर पहरेदारी में जागकर व्यतीत हुई। प्रातः होते ही मैंने रामचेत से कहा कि यहाँ से चलता बगान चला जाए। सेन्ट्रल एवेन्यू से चलता बगान के बीच कोल्हू टोला और जकरिया स्ट्रीट में मुसलमानों की बस्ती थी। अतः रास्ता खतरे से खाली नहीं था। परन्तु सभी ने हिम्मत बाँधी और बीच सड़क से होते हुए चलता बगान मानिक तल्ला पहुँच गए।

गोवाबगान में नया-बाजार—श्री वासदेव शाव, श्री वासदेव जीत बहादुर और श्री गंगा प्रसाद शाव तीनों ने मिलकर गोवाबगान में एक खाली प्लाट किराये पर लिया। सितम्बर १९४६ से वे वहाँ पर माल आदि के साथ रहने लगे। जो हिन्दू इधर-उधर से भाग कर आये थे, उन्होंने भी यहाँ बल्ली और चद्दर से दुकान बना लीं और स्वयं भी रहने लगे। दिन भर शान्ति रहती थी, परन्तु रात को मुसलमानों और हिन्दुओं

में मोर्चा-बन्दी होती रहती थी। जय-हिन्द और अल्लाह-अकबर के नारों से आकाश गूंजता रहता था। पैसे के अभाव के कारण केवल चार आने में दोपहर का तथा चार आने में रात का भोजन एक होटल में करना पड़ता था। भोजन बनाने की व्यवस्था नहीं हो पायी थी। अतः होटल की ही शरण कई माह तक लेनी पड़ी।

१९४६ में दीपावली के दिन पूजन आदि के बाद भोजन बनाने का प्रबन्ध हुआ। होटल की शरण से मुक्ति मिली। अब भी हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तनाव बना हुआ था। छुट-पुट घटनाएँ अब भी होती रहती थीं। व्यापार धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था। मोटर के कलपुर्जे आसाम, बंगाल, बिहार में कूड़े के भाव बिक रहे थे। दक्षिण और पश्चिम भारत में माल की कमी थी। अतः अधिकांश व्यापारी कलकत्ता ही आते थे। व्यापार के क्षेत्र में बहुत उन्नति हुई। १५ अगस्त १९४६ की घटना व्यापार की उन्नति और लाभ में विस्मृत होने लगी।

मैं माता-पिता को अपने कष्टों के बारे में बिल्कुल नहीं लिखता था। पत्र में यही लिखता था, "मेरी चिन्ता न किया करें। मैं बिल्कुल ठीक हूँ।....." आर्य-समाज से सम्पर्क टूट गया था। आर्य-समाज मलिक बाजार दक्षिण-कलकत्ता-आर्य-समाज के नाम से दक्षिण कलकत्ता में किसी स्थान पर चला गया था। बैजनाथ नामक कर्मचारी गोवा बगान आकर चन्दा वसूल कर लेते थे।

१५ अगस्त १९४७, भारत स्वतन्त्र

१५ अगस्त १९४७ को भारत लगभग डेढ़ हजार वर्ष मुसलमानों तथा डेढ़ सौ वर्ष अंग्रेजों की गुलामी के बाद स्वतन्त्र हुआ। आजादी प्राप्त करने के लिए लाखों नव-युवकों ने अपने प्राणों की बलि दी। चन्द्र शेखर आजाद, भगत सिंह, लाला लाजपतराय, सुभाष चन्द्र बोस, राम प्रसाद बिस्मिल, अस्फाकउल्ला, खुदीराम बोस जैसे हजारों युवकों और युवतियों के त्याग और बलिदान का फल ही था कि अंग्रेजी शासन को

झुकना पड़ा और हमें आजादी प्राप्त हुई। आजादी के इन दीवानों को न फाँसी के फन्दे की परवाह थी और न गोलियों से भून दिये जाने की। वे आजादी के दीवाने थे। अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए वे कफन सिर पर बाँध कर निकल पड़े थे। उनके ही बलिदान का फल है कि आज हम स्वतन्त्र-भारत में साँस ले रहे हैं।

अंग्रेजों ने आजादी प्रदान करने से पूर्व भारत माँ के दो टुकड़े कर पश्चिमी पंजाब सिन्ध और पूर्वी बंगाल के करोड़ों हिन्दुओं को गृह-विहीन कर दिया। कई पीढ़ियों से रह रहे हिन्दुओं को अपनी जन्म भूमि छोड़नी पड़ी। भारत में आकर वे शरणार्थी कहे जाने लगे। उन्हें पग-पग पर ठोकरें खानी पड़ीं। अंग्रेज! तूने जो कुकर्म किया, उसका तुझे फल मिले, तेरा नाश हो। एक तरफ आजादी की खुशी, दूसरी ओर भारत माँ का बँटवारा, मानव जाति की करुणा की पुकार का दुःख मन को बेचैन कर देता था।

महात्मा गांधी का चमत्कार

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतन्त्र हुआ। सरकार द्वारा निर्देश दिया गया कि सभी मकानों पर तिरंगा झण्डा फहराया जाए और सभी मकानों पर दीप जलाए जाएँ। आज भारत स्वतन्त्र हो चुका था परन्तु हिन्दू-मुस्लिम तनाव बना हुआ था। जहाँ मुसलमानों की संख्या अधिक थी, वहाँ से हिन्दू अपने मकानों को बन्द करके चले गए थे इसी प्रकार मुसलमान हिन्दुओं के मुहल्लों से भाग गये थे। आज लगभग एक वर्ष बाद बन्द मकानों के ताले खुलने की आशा थी। हिन्दू मुसलमानों की प्रतीक्षा में थे कि आज ताला खोलने आएँ और उनसे बदला लिया जाए। इसी प्रकार मुसलमान हिन्दूओं से बदला लेनी की तैयारी में थे। दोनों ने मारपीट करने की पूरी तैयारी कर ली थी। सभी लोग घबड़ाए हुए थे कि आज खून की नदी बहेगी। महात्मा गाँधी ने देखा कि आज फिर अनर्थ होने वाला है। हिन्दू और मुसलमान दोनों एक दूसरे का

खून बहाने के लिए तैयार हैं। महात्मा गाँधी हिन्दुओं के मना करने पर भी जकरिया स्ट्रीट चितपुर रोड पर स्थित जामा मस्जिद की ओर चल दिए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने कहा कि 'मारना हो तो मुझे मारो। अपने ही भाई का खून क्यों बहाते हो ?' महात्मा गाँधी ने दोनों को समझाया। मैं जीप लेकर निकला था। सायंकाल ६ बजे का समय था। ३ बंगाली मुसलमानों ने आकर विनती की "आप हमें राजा बाजार के मोड़पर छोड़ दीजिए। वे गोवा बगान के एक कारखाने में काम करते थे। पहले मैंने आना कानी की, परन्तु मेरे अन्तर्मन ने मानवता की ओर प्रेरित किया मैंने उन्हें जीप में बैठा लिया और राजा बाजार पहुँचते ही मुसलमानों ने जीप को चारों ओर से घेर लिया और हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई का नारा लगाने लगें।

महात्मा गाँधी ने जादू सा चमत्कार किया था। कलकत्ता जहाँ आज मार-काट की तैयारी में व्यस्त था, महात्मा गाँधी के चमत्कार से घंटे भर में वहाँ दुश्मनी दोस्ती में बदल गयी थी। हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई का नारा ही सुनायी पड़ रहा था। साल भर की दुश्मनी दोस्ती में बदल चुकी थी। भाई-भाई का नारा लगाते हुए और भी व्यक्ति मेरी जीप पर बैठ गए थे। मुझे थोड़ा और आगे ले गए। वहाँ मिठाई, नीबू के शर्बत और इत्र आदि से हमारा स्वागत किया। तिरंगा झण्डा लेकर सभी व्यक्ति सड़कों पर निकल आए थे। गैरजों में बन्द कारें सड़कों पर निकल आयीं थीं। सभी खुशी मना रहे थे। किसी की गाड़ी पर कोई भी बैठ जाता था, कोई मना नहीं करता था। मेरी जीप पर २२ व्यक्ति बैठे थे। स्यालदा होते हुए मैं चितपुर रोड पहुँचा। जो दृश्य देखने को मिला वह आज भी सजीव रूप में मानस पटल पर अंकित है। मैंने महात्मा गाँधी को अपने नेत्रों से शोधपुर गौशाला में देखा।

सोहराबवर्दी महात्मा गाँधी की गाड़ी चला रहे थे। उसकी पुत्री महात्मा गाँधी को सहारा दे रही थी। महात्मा गाँधी उसका सहारा लेकर चल रहे थे।

जुआ खेलने को प्रोत्साहन—दीपावली के दिन वासदेव शाव जुआ खेलते थे। दीपावली (१९४७) को सायंकाल उन्होंने अपने पुत्र जियालाल को बुलाया और जुआ खेलने के लिए रुपये दिये। उन्होंने मुझे भी जुआ खेलने के लिए पचास रुपये देते हुए कहा, "जाओ, आज तुम भी जुआ खेल लो।" मैं बहुत असमंजस में पड़ गया। मैं जुआ नहीं खेलता था। इस रुपये से जुआ खेलूं या न खेलूं इस दुविधा में फँस गया। मेरे मन में विचार उठने लगे कि यदि इस रुपये से जुआ खेलना प्रारम्भ कर दिया तो संभव है आदत खराब हो जाये और धीरे-धीरे मैं जुआड़ी बन जाऊँ। क्यों नहीं मैंने मना कर दिया कि मैं जुआ नहीं खेलता मैं रुपया नहीं लूंगा। तरह-तरह के विचार मन को उद्वेलित कर रहे थे। अन्त में निर्णय किया कि पचास रुपये का एक बार दांव पर लगा दो, हराम का तो है ही। जाएगा तो चला जाएगा। यदि जीत गया तो सौ रुपये हो जाएगा। गाँव में लोचन गोडिया का मकान बनवाने के लिए सौ रुपये पिता जी के पास भेज दूँगा। उसके पास मकान नहीं है। बहुत गरीब है। मजदूरी करके, तथा माँग कर के खाता है। दांव पर पचास रुपये दिये। और सौ रुपये जीत कर चला आया। दूसरे दिन मनीआर्डर से सौ रुपये पिताजी के पास भेज दिए और उन्हें लिखा कि इस सौ रुपये से लोचन गोड़िया का घर वनवा दें। पुरानी लकड़ी और खपड़े तथा १०० रुपये से पिताजी ने उसको घर वनवा कर उसे तथा उसकी वहन गुरदेई को दे दिया। जीवन पर्यन्त वह उस मकान में रहा। उसके मरने के वाद वह मकान गिर गया। बहुत दिनों तक उस मकान की चर्चा गाँव में रही।

सप्ताह में एक दिन भोजन न करने का निर्णय—देश स्वतन्त्र हो चुका था, परन्तु अंग्रेजों ने देश को खोखला बना दिया था। कृषि प्रधान देश होते हुए भी देश में खाने-पीने की वस्तुओं का अभाव था। तन ढकने के लिए वस्त्र का अभाव था। जीवनोपयोगी वस्तुएँ विदेशों से आकर बिकती थीं। शिक्षा-व्यवस्था बहुत सीमित थी। जन-

साधारण पशु तुल्य जीवन-व्यतीत करते थे। अंग्रेज वन्दरगाहों से कच्चा माल मुफ्त में विदेश ले जाते थे। उसी कच्चे-माल से नाना प्रकार की मशीनरी तया जीवनोपयोगी सामग्री तैयार करके भारत भेजते थे। वह बहुत मंहगे मूल्य पर वेचा जाता था। पेपर, पिन, कपड़ा, कपड़ा सिलने की सूई आदि तक विदेशों से बनकर आती थी। देश की आन्तरिक दशा बहुत दयनीय थी।

१८५५-५६ में महर्षि दयानन्द सरस्वती राजस्थान से बंगाल आए थे। युगदृष्टा महर्षि को अंग्रेजों की नीति समझने में देर न लगी। उन्होंने गुप्त रूप से आंग्ल शासकों के विरुद्ध जनता को भड़काने का कार्य किया। जिसका परिणाम था १८५७ की क्रान्ति। मंगल पाण्डेय नामक सैनिक ने सर्वप्रथम आंग्ल-शासकों के विरुद्ध विद्रोह किया। सैनिकों को जो कारतूस दिए जाते थे, उनपर सूअर और गौ का चमड़ा लगा रहता था, जिसे उन्हें मुख से खींचना पड़ता था। मंगल पाण्डेय नामक सैनिक ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को साथ लेकर विद्रोह कर दिया। विद्रोह बढ़ता चला गया। मंगल पाण्डेय के वलिदान से प्रेरणा लेकर नवयुवक अपने प्राणों की परवाह किए विना अंग्रेजों से लड़ते रहे और अन्त में स्वतन्त्रता प्राप्त की। देश को स्वतन्त्रता प्रदान करने के वाद अंग्रेज कूटनीति से भारत को परेशान करने की योजना में लग गए। इससे पूर्व उन्होंने भारत माँ का टुकड़ा करके पाकिस्तान वना दिया था। कलकत्ते में चटकल के कारखाने थे तथा जूट की खेती पूर्वी बंगाल में होती थी।

पूर्वी बंगाल जिसे पूर्वी-पाकिस्तान कहते थे (वर्तमान बंगाला देश) ने मौका देखकर जूट का दाम चौगुना वढ़ा दिया। इससे जूट मिलों के समक्ष एवं भारत-सरकार के समक्ष संकट पैदा हो गया। क्रान्तिकारी, त्यागी, महान् नेता एवं भारत के प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा "हम पूर्वी पाकिस्तान से जूट नहीं खरीदेंगे। छः मास मिलें वन्द रहेंगी। हम अपने देश में जूट पैदा कर लेने के वाद ही मिल चालू करेंगे।" जूट मिलें वन्द हो गयीं। पूर्वी-पाकिस्तान में हाहाकार मच गया। किसान माल

बेचने के लिए परेशान हो गए। जूट का भाव पहले से भी आधा हो गया। पाकिस्तान की दुर्दशा देखकर अमेरिका ने नयी कूटनीतिक चाल चली। देश में उस समय खाद्यान्न की कमी थी। अमेरिका से २० लाख टन गेहूँ खरीदने का सौदा हुआ था। अमेरिका रद्दी गेहूँ भेजता था। अमेरिका ने नयी शर्त यह रखी कि 'भारत सरकार को आधे गेहूँ के बदले यूरेनियम और जूट का सामान देना होगा तथा आधा गेहूँ मुफ्त प्राप्त होगा। जिसे जनता में वितरित करना होगा तथा साथ ही यह कहना होगा कि अमेरिका ने दान दिया है।'

भारत के ओजस्वी प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने लाल किले की प्राचीर से अश्रुपूरित नेत्रों से जनता से अपील करते हुए कहा "हम वही हिन्दुस्तानी हैं, जिन्होंने भूखे रहकर भी आंग्ल-शासकों से लड़कर आजादी प्राप्त की। आज देश में नौ माह के लिए खाद्यान्न पैदा होता है। तीन माह के लिए विदेशों से खाद्यान्न आयात करना पड़ता है। हमारे साथ गलत शर्तों द्वारा हमें पुनः गुलाम बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। हम अमेरिका की शर्तों को मानने को तैयार नहीं हैं। भूखे रहकर भी हम अपना गुजारा कर लेंगे। आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि यदि आप एक सप्ताह में एक दिन अन्न न खाएं तो दो माह का खाद्यान्न बचा सकते हैं और एक माह की कमी को पूरा करने के लिए साग-सब्जी का सेवन करें।"

पं० जवाहरलाल नेहरू की अपील को मैंने तथा परिवार के लोगों ने सहर्ष स्वीकार किया। परिवार के सदस्यों ने सप्ताह में एक दिन अन्न खाना छोड़ दिया। मैंने खुशी से सोमवार को उपवास करने का निर्णय किया। यह क्रम निरन्तर बना रहा। इस वर्ष मधुमेह की बीमारी के कारण डाक्टर की सलाह पर साप्ताहिक उपवास बन्द करना पड़ा। मेरे लघुभ्राता राधेश्याम अभी तक साप्ताहिक उपवास करते हैं। स्वास्थ्य के लिए एक दिन का उपवास बहुत लाभदायक है। यदि शरीर में किसी प्रकार का रोग न हो तो सप्ताह में एक दिन का अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिए। उस दिन दूध, फल आदि ग्रहण करना चाहिए।

व्यापार में प्रगति, परन्तु मेरी स्थिति यथावत्—देश गुलामी में जकड़े रहने के कारण अभावग्रस्त था। आजादी प्राप्त करने के बाद उन्नति करने का स्वर्ण-अवसर आया। व्यापार में उन्नति हुई। श्री वासदेव शाव का व्यापार भी बढ़ता गया। मुझे जीवन-यापन के लिए खर्च मिलता था। मुझे आश्वस्त किया जाता, "सब कुछ तुम्हारा ही है। उन्नति तुम पर ही निर्भर है।" मैं पूरी लगन के साथ व्यापार की उन्नति के लिए प्रयत्नशील रहता था। फर्म का व्यापार बढ़ता गया। सन् १९४२ की भगदड़ और १९४६ के हिन्दू-मुस्लिम दंगे के बाद श्री वासदेव शाव का लक्ष्य बंगाल से धन खींचकर उ० प्र० में अपने निवास स्थान पर स्थिर जायदाद बनाना हो गया था। कमाया हुआ धन ही नहीं अपितु उधार लिया हुआ धन भी घर भेजने में वे नही हिचकिचाते थे।

फर्म के लिए १९४० से संघर्षरत रहने के बाद अब लाखों की सम्पत्ति हो गयी थी। परन्तु श्री वासदेव शाव कर्ज लेकर गाँव में जायदाद बनाने में लगे रहते थे। कर्ज लेने के कारण भुगतान के लिए हुण्डियों की भरमार हो गयी थी। तीन माह में भुगतान करने का आश्वासन देकर कर्ज लेते थे और तीन माह से अधिक किसी न किसी बहाने गाँव पर रूके रहते थे। कर्ज का भुगतान करने से भागते थे। अतः पूरा कार्यभार मुझपर पड़ जाता था। मेरी कोशिश होती थी कि प्रत्येक हुण्डी का भुगतान समय पर हो जाए। अतः प्रातः उठते ही हुण्डी के भुगतान की चिन्ता प्रारम्भ हो जाती थी। कुछ भी हो हुण्डी का भुगतान करने में फेल नहीं होता था। अपना सिद्धान्त बना लिया था कि समय पर भुगतान होना चाहिए। हुण्डियों का भुगतान करने के बाद एक कहावत याद आती थी—

"वही रफ्तार बढ़ेगी, जो पहले थी वह अब भी है।"

दलालों को बुलाकर कहते—"उस सेठ से इतना रुपया ले आओ। उस सेठ से इतना रुपया ले आओ।" कर्ज इस तरह माँगते थे, जैसे कोई अपना उधार दिया रुपया माँगता है। अगर तीन लाख का भुगतान होता था तो साढ़े तीन लाख कर्ज माँगते थे। कर्ज लिया हुआ रुपया यदि व्यापार

में भी लगाते तो ठीक था। व्यापार में रुपया लगाने में लाभ ही था। सामान का दाम धीरे-धीरे बढ़ता ही जा रहा था। खरीदे हुए सामान में नुकसान होने की कोई सम्भावना नहीं थी। परन्तु जब हजार की औकात थी तब दस हजार और जब लाख की औकात हुई तो चार लाख कर्ज लेने लगे। इससे मन में खिन्नता रहती थी। कभी-कभी प्रतिरोध भी कर देता था।

व्यापार में मैं इतना लगनशील था कि अपने पास माल न होने पर बाजार से खरीदकर उसे बेचकर हजारों का मुनाफा कर लेता था। व्यापारियों से भी बहुत स्नेह हो गया था। पिताजी ने मुझे शिक्षा दी थी कि "मूर्ख दुकानदार अपना सामान बेचने के ही चक्कर में रहता है। बुद्धिमान दुकानदार वह है जो पहले अपने मृदु-व्यवहार से आकृष्ट करके बाद में उसे सामान बेचना चाहता है। यदि यह गुण उसमें है, तो सामान बेचते उसे देर नहीं लगती। वह अपनी इच्छानुसार सामान बेच सकता है।" पिताजी की इस शिक्षा पर मैं आज तक अडिग हूँ। अतः ग्राहक अभी भी मेरी तलाश में रहते हैं। महाकवि तुलसीदास की एक चौपाई स्मरण हो आती है—

तुलसी मीठे वचन से, सुख उपजति चहुँ ओर।
वशीकरण यह मंत्र है, तज दे वचन कठोर।।

'वाणी में मिठास, कठोर वचन का त्याग' सुखी व्यक्ति का लक्षण है। यह गुण होनें के कारण लाखों रुपये हुण्डियों के भुगतान करने के बाद भी कष्ट का अनुभव नहीं होता था। दलालों के कहने पर भी मैं कर्ज नहीं लेता था। कभी-कभी तो डाँट कर कह देता था 'कर्ज लेना पाप है। मैं क्यों पापी बनूँ।" सत्य है, जो सुखी रहना चाहता है, उसे कर्ज से दूर रहना चाहिए। यदि किसी व्यापारी को नफे का माल मिल रहा है और अपने पास धन का अभाव है। इस दशा में कर्ज लेकर व्यापार करके उसका धन वापस कर देने में पाप नहीं है। कर्ज़ लेकर अपने ऐश-आराम में खर्च कर देना पाप है।

अध्याय—५

समाज सेवा की ओर

कभी-कभी जन्म स्थान फूलपुर गाँव जाता रहता था। गाँव में फैली बुराइयों को देखकर अपने साथियों को समझाता था। शराब, मांस और जुआ का विरोध करता था। एक बार होली के अवसर पर मांस-खाना बन्द करने के लिए आन्दोलन शुरू कर दिया। कई वर्ष तक गाँव में होली के पर्व पर मांस विकना बन्द रहा। इस कार्य में जनसंघ के कार्यकर्ताओं का सहयोग मिलता था। मुख्यरूप से चिन्तन देव का नेतृत्व रहता था। गाँव में स्थित प्राइमरी स्कूल में घूमने जाता था, वहाँ छात्रों में फाउन्टेन पेन पेंसिल आदि बाँटता रहता था। मेधावी एवं निर्धन छात्रों की आर्थिक एवं पुस्तकीय सहायता करता। धीरे-धीरे यह जीवन का प्रमुख अंग बन गया।

पत्नी को शिक्षा की व्यवस्था—मानसिक शान्ति के लिए सात, आठ माह बाद १५–२० दिन के लिए गाँव जाता था। माता-पिता एवं पत्नी की समस्याओं एवं मन-मुटाव को देखकर दुःखित हो जाता। एक बार पत्नी ने क्रोध भरे शव्दों में कहा कि 'बार-बार कहती हूँ कि मुझे पढ़ना-लिखना सिखा दें। जिससे ज्ञानार्जन कर सकूँ।' मैंने कहा "दोनों समय रसोई का काम, माता-पिता की सेवा, वच्चों की देखभाल से समय नहीं मिलता तो पढ़ाई कैसे करोगी ?" पत्नी ने उत्तर दिया "मैं सब काम प्रसन्नता के साथ करने के बाद पढ़ूंगी-लिखूंगी। पढ़ना-लिखना सीखने के वाद आपके शिक्षा भरे पत्रों को पढ़कर अपने जीवन में परिवर्तन लाने की चेष्टा करूंगी।" मैंने पत्नी के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। मैंने कलकत्ता वापस आकर पिताजी को पत्र लिखा कि पिताजी ! पुत्र तथा पुत्रियों को सभी परिवार में पढ़ाने की प्रथा है। आप अपनी पुत्रवधू को अध्यापिका रखकर घर पर शिक्षा

दिलाकर एक आदर्श उपस्थित करें। पिताजी ने मेरे प्रस्ताव पर विचार कर पुत्र-वधू की शिक्षा की व्यवस्था करने का निर्णय किया। कु० संवारी देवी नाम की शिक्षित ब्राह्मण कन्या को पुत्र-वधू को पढ़ाने के लिए नियुक्त किया। सन् १९५० में पत्नी के जीवन में शिक्षा का सूत्रपात हुआ। कु० संवारी देवी के पश्चात् मेरे मित्र श्री जगदम्बिका प्रसाद घर पर माता जी की देख-रेख में बाहर दालान में पत्नी को पढ़ाते थे।

वेष-भूषा में परिवर्तन सन् १९५१ ई०—मैंने श्री हरीप्रसाद शाव को कपड़ा खरीदते हुए देखकर, उन्हीं के कहने पर सात रुपये छः आना गज डबल घोड़ा मार्का सिल्क की एक हाफ कमीज बनवा ली। सिल्क की कमीज देखकर श्री वासदेव शाव के परिवार में खलबली मच गयी। श्री वासदेव शाव ने लोगों से मेरी निन्दा करते हुए कहा कि इतना मँहगा कपड़ा तो हमारे बाप-दादा ने नहीं पहना।" यह बात सुनकर मेरे मन को बहुत ठेस पहुँची। सभी कपड़ों को तिलांजलि देकर एक रुपया छः आना गज की खद्दर खरीदकर पहनना प्रारम्भ किया। तब से आज तक खद्दर ही पहनता हूँ। कभी-कभी उससे भी सस्ती हैण्डलूम की खादी पहनता हूँ।

आर्य-समाज और कांग्रेस के कार्यों में रुचि

धीरे-धीरे आर्य-समाजी बनने के साथ-साथ कांग्रेस के सम्पर्क में भी रहने लगा। १९५२ के आम चुनाव में श्रीमती सुचेता कृपलानी को अपने गाँव फूलपुर ३० जनवरी १९५२ को ले गया था। रामलीला स्टेज सुलेमपुर में उनका भाषण करवाया था। उत्तर कलकत्ता कांग्रेस के आफिस में मीटिंग में आने जाने लगा था। कुछ समय बाद उत्तर कलकत्ता कांग्रेस का अध्यक्ष बन गया था। उस समय कांग्रेस की प्रमुख कार्य-कारिणी में श्रीमती इन्दिरा गाँधी भी थीं। एक मीटिंग में वह मेरे साथ थी।

दक्षिण कलकत्ता आर्य समाज का सदस्य था। दूर होने के कारण साप्ताहिक सत्संग में नहीं जा पाता था। श्री वैजनाथ जी चन्दा २ रु० माह में ले जाते थे। मैंने उनसे आग्रह किया कि आप चन्दा बराबर लिया करें। एक प्रमाण पत्र दें, जिससे मैं क्रान्तिकारी आर्य समाज कलकत्ता, कार्नवालिस स्ट्रीट का सदस्य बन सकूं। यह स्थान नजदीक है। मैं यहाँ पर साप्ताहिक सत्संग में जा सकूंगा। उन्होंने प्रभाण पत्र दे दिया। जिसके आधार पर मैं १९५३ ई० में आर्य-समाज कलकत्ता का साधारण सदस्य बन गया। इस आर्य समाज मन्दिर में भगत सिंह अपने क्रान्तिकारी साथियों के साथ रहते थे। यहीं रहकर उन्होंने बम बनाना सीखा था। आर्य-समाज के अधिकारियों ने उनका उत्साहवर्द्धन किया था।

पारिवारिक समस्याओं का समाधान

पारिवारिक परेशानी-भाइयों को पढ़ाना-लिखाना और उनका विवाह आदि की समस्या बढ़ती गयी। कनिष्ठ भ्राता हरीराम ने सन् १९५३ में हाई-स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। हरीराम का विवाह भी हो चुका था। मैंने पिता जी को सलाह दी कि 'हरीराम को कलकत्ता भेज दें। यहाँ मैं उसे किसी काम में लगा दूंगा। मेरा एकाकीपन समाप्त हो जाएगा। मुझे एक सहयोगी मिल जाएगा।' मैंने बचपन के एक मित्र श्री पन्नालाल से विचार-विमर्श किया। पन्नालाल ने कहा कि 'हरीराम को बुला लो। एक दूकान लेकर साथ में काम किया जाएगा। मैं भी चलता-फिरता ही काम करता हूं।' हरीराम कलकत्ता आ गये। श्री वासुदेव शाव ने इच्छा व्यक्त की कि 'इनको किछौछा गाँव भेज दो। घर की दूकान पर एक अपने व्यक्ति की आवश्यकता है या कहो तो मैं पुलिस में दरोगा के पद पर नियुक्त करा दूँ। इनका शरीर भी स्वस्थ एवं लम्बा है। पढ़े-लिखे भी हैं। मेरा अच्छा परिचय है। यह कार्य हो सकता है। मैंने उत्तर दिया, "न तो यह आपके यहाँ रहेगा और न

पुलिस में नौकरी करेगा। परिवार में पहला व्यक्ति मैं हूँ, जो नौकरी कर रहा हूँ और आपके पास ही रहूँगा। अब मेरे परिवार के व्यक्ति नौकरी न करके अब स्वतन्त्र रूप से कार्य करेंगे। जिससे हमारे परिवार की भी उन्नति हो सके। मुझे कुछ रुपये की आवश्यकता है, अगर आप प्रबन्ध कर देंगे तो ठीक है अन्यथा अन्यत्र प्रबन्ध करना पड़ेगा।"

माताजी-पिताजी ने प्रबन्ध करके छः हजार रुपया हरीराम को दिया। चार हजार रुपये श्री वासुदेव शाव ने खर्च में लिखकर मुझे दिये और कहा कि कर्ज लेना हो तो और ले लो। मैंने कहा कि कर्ज लेना होगा तो दूसरी जगह से लूँगा। फर्म में मेरा कमाया हुआ धन है, इसलिए फर्म से कर्ज नहीं ले सकता। जितना है उतने से ही व्यापार करने का निर्णय किया। श्री पन्नालाल ने भी दस हजार रुपये लगाये। आधे-आधे का भागीदार होकर चलता बगान में रामप्रसाद शाव की दूकान किराये पर लेकर चद्दर का व्यापार प्रारम्भ किया गया। एक वर्ष तक व्यापार ठीक तरह चलता रहा। व्यापार करना कई व्यक्तियों को अच्छा नहीं लग रहा था। पन्नालाल ने भी अपनी पूंजी और नफा निकाल लिया था। वासुदेव शाव ने बुलाकर कहा कि 'हरीराम की दूकान हमारे रिश्तेदार की है। हमने रामप्रसाद से कह दिया है कि हम दुकान खाली कर देंगे। दुकान एक माह में खाली कर दो।' दूकान खाली कर देनी पड़ी। पन्नालाल से भी साझा टूट गया। आमहर्स्ट स्ट्रीट पर एकान्त में एक दूकान लेकर हरीराम ने वहाँ पर कार्य प्रारम्भ किया। दूकान दिलाने में किसी ने मदद नहीं की। दूकान छोड़ देने का वचन बिना हमसे पूछे ही दे दिया था। मुझे अनुभव होने लगा कि मेरी सेवा का फल अच्छा नहीं मिल रहा है। कर्ज का भुगतान मेरे ऊपर छोड़कर और तीन-तीन माह तक व्यापार छोड़कर वासुदेव शाव गायब रहते थे। यह मुझे बहुत खराब लगने लगा। मैंने एक दिन श्रीमती वासुदेव शाव से कह दिया कि जो व्यक्ति अपना व्यापार स्वयं नहीं देखता तथा आय से अधिक व्यय करता है, वह अवश्य फेल होता है। शाव जी तो दो बार अपना

व्यापार फेल कर चुके हैं, नाना प्रकार की मुसीबतें उठा चुके हैं, फिर भी वही रवैया है। मैं न कभी फेल हुआ हूँ और न होना चाहता हूँ। यदि उनको फर्म फेल करनी है तो मुझे संकेत कर दें। मैं पहले कहीं भाग जाऊँगा और आपको अवसर मिल जाएगा कि मुनीम लेकर भाग गया, इससे फर्म फेल हो गयी। अपनी बदनामी मुझे स्वीकार है, परन्तु फर्म को फेल करके उसकी दुर्दशा देखना मेरे जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। मैं फर्म को अपने सामने फेल होते नहीं देखना चाहता। अन्ततोगत्वा मेरे हटने के बाद वही हुआ जो मैं नहीं चाहता था। फर्म भी फेल हुई और अपने दोषों को छिपाने के लिए मुझे अकारण बदनाम किया गया।

गाँव के प्राइमरी स्कूल के भवन की चिन्ता—जीवन नाना प्रकार की मुसीबतों से गुजर रहा था। बचपन में जिस प्राइमरी स्कूल में शिक्षा ग्रहण की थी, उसकी दशा दयनीय थी। बच्चों के बैठने का स्थान नहीं था। गर्मी और बरसात में बच्चे किसी तरह पढ़ते थे। मेरी उत्कट अभिलाषा थी कि प्राइमरी स्कूल का भवन बनना चाहिए। मैं धन-अर्जन करके परतन्त्र था, अतः गाँव के बच्चों की सेवा नहीं कर पा रहा था। मेरे गाँव के कई व्यक्तियों ने श्री वासुदेव शाव से प्रार्थना की कि वे गाँव में प्राइमरी स्कूल बनवा दें। मैंने भी कहा परन्तु उन्होंने प्रार्थना ठुकरा दी। मैं इसी चिन्ता में बैठा सोच रहा था, उसी समय मेरे परममित्र दुर्गा प्रसाद जी टाण्डा निवासी ने आते ही चिन्ता का कारण पूछा। मैंने गाँव के प्राइमरी स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों की स्थिति उन्हें बतायी। उन्होंने कहा "चिन्ता मत करो। मैं बनवा दूँगा।" मैंने प्रसन्नता से कहा कि मैं आपकी बात से बहुत प्रसन्न हूँ। परन्तु मेरी इच्छा है कि या तो श्री वासुदेव शाव बनवायें नहीं तो मैं स्वयं बनवाऊँगा। मेरे मन ने इसके लिए कुछ कोष एकत्रित करने के लिए प्रेरित किया। २४ अगस्त १९५४ को १२५ रु० बिडन स्ट्रीट पोस्ट आफिस में स्कूल के निमित्त जमा कर दिये। कुछ माह बाद मैंने प्रतिज्ञा की कि "जब तक फूलपुर में स्कूल नहीं बनवा दूंगा, तब तक जीवन में कभी भी मनोरंजन

का काम नहीं करूँगा। सिनेमा, थियेटर या अन्य किसी भी प्रकार के मनोरंजन को ठोकर मार रहा हूँ।" धीरे-धीरे धन एकत्र करना प्रारम्भ कर दिया। त्याग और बलिदान का फल मीठा होता है। मेरा त्याग एक दिन फूलपुर में अवश्य विद्यालय बनाकर रहेगा। इसी विश्वास से कार्य करता रहा। पहने हुए स्वर्णाभूषण-सोने की अँगूठी, चेन, बटन आदि उतार कर रख दिये। विद्यालय जब तक नहीं बनेगा, तब तक अपने शरीर को अलंकृत नहीं करूँगा, यह प्रण किया।

गंगा-स्नान और सन्ध्या—नित्य प्रातः ४ बजे उठकर, खड़ाऊ पहन कर, गोवा बगान से भूतनाथ घाट जाकर स्नान करके वहीं पर सन्ध्या करता था। सन्ध्या के बाद ईश्वर से प्रार्थना करता था कि 'मैं पूर्वजन्म के पापों का फल भोगने को तैयार हूँ, परन्तु अधमों, मूर्खों की संगति से मेरा शीघ्र उद्धार कर दो।' यदि किसी कारणवश स्नान करने नहीं जा पाता था तो किसी गरीब को भोजन कराने के बाद जलपान करता था। यदि कोई गरीब नहीं मिलता था तो उसके भोजन का पैसा दान के लिए निकालकर तब जलपान करता था।

द्वितीय पुत्र का जन्म

पत्नी ने सैकड़ों बार इच्छा व्यक्त की थी "मुझे एक बार कलकत्ता ले चलो।" मैं हमेशा यही कहता कि माता-पिता की सेवा करो और बच्चों का पालन-पोषण करो, जब समय आएगा तो ले चलूँगा। यह कहकर हमेशा टालता रहता था। जुलाई १९५५ में पत्नी के पेट में बच्चा मर जाने के कारण टाण्डा महिला अस्पताल में भरती करना पड़ा था। यंत्र द्वारा बच्चा निकाला गया। परन्तु पेशाब की थैली में तीन-चार सुराख हो गए। डाक्टरों ने सलाह दी कि तुरन्त किसी बड़े अस्पताल लखनऊ या कानपुर में भरती करें। इस मजबूरी में ३१ जुलाई १९५५ को कलकत्ता लाकर लोहिया मातृ सेवा सदन में भरती किया। डाक्टरों की सूझ-बूझ से २१ अक्टूबर १९५५ को पत्नी को अस्पताल से छुट्टी मिल गयी। २ माह २३ दिन तक हम दोनों को बहुत कष्ट झेलना पड़ा।

हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करके राधेश्याम आ गए थे। उनका नाम सिटी कालेज में लिखा दिया था। हरीराम और राधेश्याम अपनी दुकान का काम देखने लगे। वासदेव शाव से सम्बन्ध बिगड़ने लगा। मैंने भविष्य की ओर सोचते हुए निश्चय किया कि मुझे नौकर-चाकर का सहारा छोड़ देना है और आने वाली मुसीवतों के लिए तैयार रहना चाहिए।

४ अगस्त १९५६ ई० को सूर्योदय से पूर्व ३ बजकर २ मिनट पर आपरेशन द्वारा द्वितीय पुत्र का जन्म हुआ। आपरेशन के समय बच्चे को ललाट पर चाकू से तीन जगह घाव हो गया था। ईश्वर की कृपा से बच्चा और पत्नी दोनों स्वस्थ हो गए। मैंने बच्चे का नाम सत्यप्रकाश रखा और प्रतिज्ञा की कि 'आज से सत्य ही बोलूँगा।' पहला पुत्र जब पैदा हुआ था, उसका नाम ओम् प्रकाश रखा था और तभी से पूर्ण रूप से आर्य-समाज के सिद्धान्तों का अनुयायी हो गया था।

डाक्टर योगेशचन्द्र चक्रवर्ती द्वारा पत्नी को जीवन दान प्राप्त हुआ था। उनके लोअर सरकुलर रोड, पार्क स्ट्रीट के पास स्थित चेम्बर में उनके दर्शन करने गया। उन्हें हाथ में पारकर पेन देकर नमस्ते की और कहा "डाक्टर साहब आपने मेरे ऊपर बहुत बड़ा उपकार किया है। मैं गरीब हूँ। परन्तु आपको कुछ उपहार देना चाहता हूँ।" उन्होंने कहा कि 'तुम मुझे क्या दोगे? अगर देना है तो लोहिया मातृ सेवा सदन में खून टेस्ट करने की मशीन नहीं है, वहाँ खून-टेंस्ट करने की मशीन दे दो। अधिक मँहगी भी नहीं मिलेगी।' मैंने पूछा "डाक्टर साहब! कितने में मिल जायगी?" "दो सौ रुपए में मिल जायगी" डाक्टर चक्रवर्ती ने कहा। मैंने डाक्टर साहब से आर्डर देकर मँगाने के लिए कह दिया और उन्हें बिल का भुगतान करने का वचन दिया। फाउन्टेन पेन उन्हें देकर नमस्ते की और धन्यवाद देकर चला आया। खून-टेस्ट करने की मशीन १९१ रु० में आयी। उस बिल का भुगतान मैंने कर दिया। ईश्वर से प्रार्थना की कि 'मैं छोटी सी वस्तु अस्पताल को दान में दे रहा हूँ। अगर आपकी कृपा हो तो अस्पताल बनवाकर एक पुण्य का काम करूँ।'

निजी व्यापार करने की योजना

१९५७ में गोवा बगान का साहित्य-परिषद् स्ट्रीट का एरिया इम्प्रूव-मेन्ट ट्रस्ट ने ले लिया। वहाँ के दुकानदार कुछ कादापाड़ा और कुछ हावड़ा जाने लगे। मैंने हरीराम द्वारा कादापाड़ा में एक प्लाट लिया। श्री राम-चेत ने कहा कि मैंने हावड़ा में एक प्लाट लिया है। उसमें से आपको भी जगह दे दूँगा। मैंने श्रीराम के नाम हावड़ा में जगह ले ली और श्री कृष्ण की देख-रेख में दुकान पक्की बनवा ली। उस समय दुकान बनवाने में लगभग दो हजार रुपए लगे थे।

पिताजी का गाँव से पत्र प्राप्त हुआ कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा है। मैंने उन्हें कलकत्ता बुला लिया। पिताजी हरीराम के पास रहने लगे। डॉक्टरों को दिखाया। डाक्टर ने उन्हें टी० बी० रोग से ग्रस्त बताया और सबसे अलग रखने तथा दवा की उचित व्यवस्था करके आराम करने की सलाह दी। पिताजी को गाँव भेज दिया। उनसे घर पर दुकान का काम बन्द करके आराम करने के लिए कहा।

पिताजी को गाँव भेजने के पूर्व हरीराम ने हावड़ा की दुकान दिखा दी थी। पिताजी ने मुझसे कहा 'बेटा! दुकान तो बनवा ली। बहुत बड़ी है। इतनी बड़ी बनवाने की क्या आवश्यकता थी? इतना रुपया कहाँ है? जो माल खरीदकर रखोगे।" मैंने कहा कि इससे छोटी नहीं मिल रही थी अतः बड़ी खरीदनी पड़ी। पिताजी बहुत प्रसन्न हुए।

इधर फर्म में नाना प्रकार की हीनता का वातावरण बन गया था। मन अशान्त रहता था। सन्ध्या करते समय ईश्वर से यही प्रार्थना करता था कि १७-१८ वर्ष से कर्मों का फल भोग रहा हूँ। इस पचड़े से मेरा उद्धार कब होगा।

जीवन का सबसे सुखद दिन

पत्नी को बच्चा पैदा होने वाला था। मैं छुट्टी लेकर गाँव चला गया था। पत्नी के साथ ७ जून १९५८ को दून एक्सप्रेस से हावड़ा स्टेशन

पहुँचा। रामदास ड्राइवर प्लेटफार्म पर मिला। उसे देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि श्री वासदेव शाव ने मुझे लेने के लिए गाड़ी भेजी है। मैंने रामदास से पूछा, "गाड़ी कहाँ है ?" उसने मुझे अलग बुलाकर कहा "गाड़ी नहीं लाया हूँ। श्री वासदेव शाव ने कहा है कि सीताराम से जाकर कह दो कि वह हमारे यहाँ न आए।" यह सुनकर मैं अवाक् रह गया। मैंने कहा "ठीक है। जाकर श्री शाव से कह दो कि मैं सायंकाल अकेला आऊँगा। अगर उन्हें मेरी छुट्टी ही करनी है तो चार व्यक्तियों के सामने बात हो जाए।" पत्नी को बलाई सिगी लाइन श्री त्रिलोकी शाव की वाड़ी में श्री हरीराम के पास पहुँचा दिया। सायंकाल ४ बजे गोवा बगान दुकान पर गया। रात्रि ८ बजे तक वासदेव शाव से मिलने के लिए बैठा रहा। किसी से कोई बात नहीं हुई। अन्त में वापस चला आया। दूसरे दिन भी गया और प्रतीक्षाकर वापस चला आया। ९ जून १९५८ को मामा गुरु प्रसाद को साथ लेकर वासदेव जीत बहादुर के यहाँ गया। वार्तालाप प्रारम्भ हुआ। तीन दिन से लगातार आ रहा था, परन्तु किसी ने एक गिलास पानी भी नहीं पूछा। आज स्वयं पानी माँगकर पीया। सब मेरा परिश्रम से कमाया हुआ धन था परन्तु आज यहाँ पानी पूछने वाला कोई नहीं था। मन ऐसे स्वार्थी व्यक्ति को धिक्कार रहा था। वासदेव शाव ने कर्मचारियों को आदेश दे रखा था "जब मेरी सीताराम से बात हो, तब कोई भी कर्मचारी उपस्थित न रहे।" इसलिए सभी हट गए थे। वार्ता में मैं जीत बहादुर, वासदेव शाव, श्री गुरु प्रसाद और वासदेव शाव का पुत्र मदन उपस्थित थे। वासदेव साव ने कहा, "जियालाल ने इतना बड़ा काण्ड कर दिया। इसकी पूरी जानकारी इन्हें थी, परन्तु इन्होंने नहीं बताया।"

गुरु प्रसाद मामा ने मुझसे पूछा, "क्यों सीताराम तुम्हें मालूम था ?"

"हाँ"

"तब तुमने क्यों नहीं बताया।"

मैंने कहा, "मैंने कुछ माह पूर्व जियालाल के करतूतों की शिकायत दूसरों के माध्यम से कहवायी थी, जिसका परिणाम गलत निकला। यह

कहा गया कि सीताराम चाहते हैं कि जियालाल न रहे और हम आजादी से लूटकर खाएँ। तब से मैंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि घरेलू बातों को मुझे नहीं देखना है। इसीलिए मैंने पुनः कुछ नहीं कहा।"

इस पर वासदेव शाव ने गर्म होकर कहा, "मैंने यह बात नहीं कही है। तुम झूठ बोलते हो। तुमको इसका प्रमाण देना होगा। अन्यथा ठीक नहीं होगा।" ईश्वर की आराधना करते हुए मैंने कहा "आपने यह बात कही थी। मैं सत्य कह रहा हूँ। झूठ आप बोल रहे हैं। यह आपका पुत्र मदन बैठा है। इसके सामने आपने कहा है।"

इस पर मदन की ओर घूरते हुए श्री वासदेव शाव ने कहा "मदन मैंने कहा था ?"

मदन ने उत्तर दिया, "श्री रामजियावन मामा ने आपसे तथा माता जी से कहा था कि सीताराम ने जीतलाल की शिकायत करते हुए कहा है कि आप साव जी से कह दें कि जियालाल को समझा दें। इस पर आपने कहा था कि सीताराम जियालाल की शिकायत करता रहता है। वे चाहते हैं कि जियालाल न रहे और हम आजादी से लूटे-खाएँ।"

मदन के सत्य वचन सुनकर सब शान्त रह गए। मदन को डाँटकर वहाँ से भगा दिया गया। मन में ईश्वर को कोटिशः धन्यवाद दिया। ईश्वर से प्रार्थना की कि सत्य-वक्ता इस बालक को सदा सुखी रखे तथा उच्चकोटि की सुविधा प्रदान करे। मेरा रोम-रोम मदन को आशीर्वाद दे रहा था। मुझे बहुत दर्द हो रहा था कि असत्यवादी पिता के विपरीत सत्य को ग्रहण कर इस बच्चे ने मेरी इज्जत बचायी है। मैं इसे आशीर्वाद के अतिरिक्त क्या दे सकता हूँ।

श्री वासदेव शाव ने कहा कि 'हम दोनों ने मिलकर धन कमाया है। हमारे पास जो है, वह हमारा है और जो इनके पास है, वह इनका है। आज से इनसे मुझसे कोई मतलब नहीं हैं। न मैं अपना मुख इन्हें दिखाऊँगा और न इनका मुख देखूंगा। ये जाएँ कमाएँ खाएँ। न एक पैसा दूँगा, न एक पैसा लूँगा।" बात यहीं समाप्त हो गयी।

'आज ९ जून १९५८ का दिन मेरे बीते हुए एवं भविष्य के जीवन का स्वर्ण दिन होगा' यही सोच रहा था। १८ वर्ष से धन-अर्जन करते हुए भी मैं निर्धन बना रहा। तरह-तरह की ठोकरें खाता रहा। स्वतन्त्र होने की खुशी और फर्म छोड़ने का दुःख था। खुशी और गम के बीच तरंगों में उद्वेलित होता हुआ, आँसू वहाकर बलाई सिगी लाइन हरीराम के पास चला आया। अपनी पत्नी, भाई हरीराम, राधेश्याम, श्रीराम आदि को पूरा वृतान्त सुनाया। सबने राहत की सांस ली भविष्य की योजना पर विचार-विमर्श किया।

अध्याय—६

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स का शुभारम्भ

लघुभ्राता श्रीराम शंभूनाथ को सहयोगी बना कर दो माह से बिना नामकरण के हावड़ा की दुकान पर बैठ रहे थे। श्रीराम कालेज के समय कालेज पढ़ने भी जाते थे। ११ जून १९५८ को बंसाल कोर्ट में जाकर नार्थ इण्डिया आटो मोबाइल्स, ६ किंग्स रोड हावड़ा के पते पर श्रीराम को पार्टनर बनाकर रजिस्ट्रेशन कराया। अंग्रेजी समाचार पत्र हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड में विज्ञापन दिया कि आज से मैं नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स के नाम से व्यापार करूँगा। मुझे अब वासदेव राम बलदेवप्रसाद के कारबार से कोई मतलब नहीं है।'

बड़ा व्यापार करने के कारण पहले दिन जब दुकान पर जाकर बैठा, दुकान में आठ हजार रुपये का माल था। अतः शर्म से गद्दी पर एक कोने में बैठा रहा। श्री लक्ष्मण प्रसाद यादव जो सरदार जोगेन्दर सिंह के दुकान पर काम करते थे, उनसे कहा कि छोटे-मोटे सामान जो आपके दुकान पर न हों, उस ग्राहक को अन्दर गली में हमारे पास भेज देना। उन्होंने एक ग्राहक भेजा। उस दिन का खर्च उस ग्राहक के हाथ माल बेचने में निकल आया। मन प्रसन्न था। दो, तीन दिन अपने मित्रों से सहयोग करने को कहा। परन्तु कई ने आनाकानी की। श्री दुर्गाप्रसाद शाव (टाण्डा) ने पाँच हजार, श्री कृष्ण ने तीन हजार और राजाराम शाव (किछोछा) ने तीन हजार की सहर्ष सहायता की। श्री कुंजबिहारी शाव (दोस्तपुर) ने आश्वासन दिया कि 'तुम कार्य करो। जब तुम्हें जितने रुपये की आवश्यकता हो, हमसे ले जाना।' उनका आश्वासन मेरे जीवन में छाया के रूप में कार्य करता था। कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर उनसे

रुपये ले आता और दस-पांच दिन बाद वापस कर देता था। श्री दुर्गा प्रसाद प्रतिदिन समाचार पूछते थे और कहते थे 'कोई कष्ट हो तो मुझे बताओ'। वे हमारी उन्नति के लिए सदा प्रयत्नशील रहते थे। उनकी कृपा हमेशा बनी रहती थी। ईश्वर की कृपा से व्यापार दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा। आय भी अधिक होने लगी। खर्च कम ही था। व्यापार में मन अच्छी तरह लग गया था। बिक्री कर और आयकर के कार्यालयों में फर्म का रजिस्ट्रेशन कराया। मैंने निश्चय किया कि जिस तरह परिवार पर खर्च किया जाता है उसी प्रकार सरकारी कर भी अदा करते रहना चाहिए। तिमाही, छमाही टैक्स जमा करने लगा। बिक्री का एक प्रतिशत दान खाते में जमाकर गाँव में स्कूल बनवाने तथा परोपकारी कार्यों में लगाने का निश्चय किया। आय अधिक होते हुए भी खर्च कम से कम करने की चेष्टा रहती।

विजय का दिन

१६ अगस्त १९५८ को दिन में २ बजकर ४५ मिनट पर लोहिया मातृ सेवा सदन में तृतीय पुत्र का जन्म हुआ। परिवार में प्रसन्नता थी। ईश्वर की कृपा से हर्ष और उल्लास का वातावरण परिवार में बढ़ता जा रहा था। मैंने बच्चे का नाम विजय प्रकाश रखा। इस वर्ष मैं व्यक्ति की गुलामी से मुक्त हुआ। यह बालक मेरे जीवन की विजय का प्रतीक है। इसलिए बालक का नाम विजय प्रकाश ही रखा।

मेरी उन्नति एवं खुशी से कई लोग अप्रसन्न थे। जिनमें मेरे भूतपूर्व अधिकारी भी थे। वे मुझे विभिन्न यातनाएँ देने पर तुले हुए थे। परन्तु उत्तम कर्म करने वाले के विरुद्ध अधर्मी व्यक्ति को कभी सफलता नहीं मिलती। विवश होकर १९५४, में दुकान करने के लिए सहायता स्वरूप दिया गया चार हजार रुपये श्री हनुमान प्रसाद शाव के माध्यम से वापस माँगने लगे। मैंने कहा कि मेरा एक हजार रुपया आपके यहाँ बाकी है। अपना खाता देख लें। आपने कहा था कि न एक पैसा लूँगा और न एक

पैसा दूँगा; इसीलिए मैंने एक हजार रुपया बाकी भी नहीं माँगा था। अन्त में श्री कुंज बिहारी सेठ, वासदेव जीतबहादुर ने तय किया कि तीन हजार रुपए सीताराम दे देंगे। श्री कुंज बिहारी सेठ ने कह दिया था कि तुम सीताराम से रुपये गलत ले रहे हो। जिस दिन सीताराम के रुपये तुम्हारे पास आएँगे उस दिन तुम्हारा सत्यानाश हो जाएगा। फोन द्वारा मुझे इस निर्णय की सूचना दी गई और दो माह के अन्दर वासदेव जीत बहादुर को रुपए लौटाने के लिए कहा गया। मैं दुःखित हो गया।

दूसरे दिन दुकान पर बैठा था। अचानक एक अपरिचित व्यापारी एन. सी. बर्मन गोहाटी से आया। उसने दुकान का आधा माल खरीद लिया। बाजार में तहलका मच गया कि आज बहुत बिक्री हुई है। मन प्रसन्न हुआ। ईश्वर को धन्यवाद दिया कि कोई मुझे दण्ड देना चाहता है। तीन हजार रुपये दण्ड स्वरूप २ माह में देने हैं उसमें से आधा धन आज ही नफा स्वरूप मिल गया।

कहावत सत्य है—

जाको राखे साइयाँ, मारि सके न कोय।
बाल न बाँका करि सके, जो जग वैरी होय॥

१ अप्रैल १९५९ को २ माह की अवधिपूर्ण होने से पूर्व ही हरीराम द्वारा वासदेव जीतबहादुर के पास तीन हजार रुपया भेजकर मुक्त हो गया।

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स प्रगति की राह पर

नाममात्र की पूंजी से प्रगति करने का कारण १८ वर्षों से सर्विस का अनुभव, लघुभ्राता श्रीराम द्वारा दिन भर दुकान का काम देखना तथा सायंकालीन कालेज में अपनी पढ़ाई करना, रिश्ते के छोटे भाई शम्भूनाथ तथा बुधराम का सहायक के रूप में उत्साह से कार्य करना रहा। मेरा उद्देश्य और आदेश था कि किसी भी व्यापारी के साथ गलत व्यवहार न किया जाए। जो माल जैसा है, उसे वैसा ही बताकर दिया जाए। यदि

किसी प्रकार माल ले जाने वाला धोखे में पड़ जाए तो उसके वापस आने पर माल सहर्ष वापस कर लेना चाहिए। जिससे भविष्य में उसे विश्वास पैदा हो जाए और वह हमेशा के लिए अपना ग्राहक बन जाए। उस समय माल का अभाव नहीं था। पैसे के अभाव में अधिक माल स्टाक में नहीं रख सकता था। मामूली स्टाक पर बड़े-बड़े व्यापारी नहीं आते थे। कम पूंजी वाले व्यक्ति को चलता-फिरता व्यापार करने में ज्यादा लाभ होता है। एजेन्ट के रूप में काम करना होता है। एजेन्ट का स्वभाव सरल, मृदु और सत्य होना चाहिए। उसे चरित्रवान और ईमानदार होना चाहिए। इन सब गुणों से मैं भरपूर था। एजेन्ट में इन गुणों का होना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि एजेन्ट के पास न कोई माल है न कोई सेम्पुल है उसके पास केवल आर्डर-बुक है। खरीददार कुछ नहीं देखता उसे सिर्फ व्यक्तित्व और उसके वचनों पर विश्वास करना पड़ता है। परीक्षा के तौर पर वह छोटा आर्डर देगा। माल ठीक रूप से भेजकर भुगतान ले लेना, इसमें दोनों व्यक्तियों की परीक्षा हो जाती है। यदि दोनों परीक्षा में सफल होते हैं तो एजेन्ट और व्यापारी दोनों दिल खोल-कर व्यापार करते हैं। एक दुकानदार अपने दुकान पर बैठकर अकड़कर बातें करता है तो भी दुकान पर स्टाक के कारण उसकी दुकान चल सकती है। मैं उड़ीसा, बंगाल, असम, नागालैण्ड, मणिपुर, त्रिपुरा आदि बीहड़ प्रान्तों का दौरा करके एजेन्ट के रूप में कार्य करने लगा। ईमान-दारी और सद्व्यवहार के कारण दो वर्ष में मेरी गिनतो अच्छे व्यापारी में की जाने लगी। परिश्रम के फल से पूंजी का अभाव न रहा। धीरे-धीरे बम्बई दिल्ली आदि बड़े-बड़े नगरों का दौरा करने लगा। जो सफलता एजेन्ट के रूप में कार्य करके तीन वर्ष में प्राप्त की वह दुकान पर बैठकर बिक्री करके १३ वर्ष में भी नहीं मिलती। क्योंकि मोटर पार्टस् का व्यापार है दुकान पर ग्राहक जो सामान माँगने आएगा, वही बिकेगा। कितना सामान वर्षों वैसे ही पड़ा रह जाता है। व्यापार ग्राहक के ऊपर निर्भर रहता है। एजेन्ट के रूप में कार्य करने पर व्यापार ऊपर-ऊपर

निर्भर करता है। कोई भी माल बता कर बेचा जा सकता है। इच्छा-नुसार जितना परिश्रम किया जाए, उतना काम किया जा सकता है।

लगभग ५ वर्ष की दौड़धूप के बाद न खरीददार की कमी और न माल की कमी होने के कारण पूंजी बढ़ने लगी। खर्च कम था। अतः पूंजी की कमी नहीं रह गयी। सरकारी नीलामी और टेण्डर का भी काम करना प्रारम्भ कर दिया। सरकारी टैक्स जितने भी थे, जैसे ट्रेड टैक्स, म्यूनिस्पिल टैक्स, बिक्रीकर, केन्द्रीय बिक्रीकर, आयकर, सम्पत्तिकर तथा परिवार के सदस्यों का टैक्स नियमित रूप से अदा करना अपना नियम बना लिया था। जो व्यापारी नियमित रूप से टैक्स नहीं देते या टैक्स देने से कतराते हैं, उनका व्यापार कभी नहीं बढ़ सकता। टैक्स रोकना भी नहीं चाहिए। नियमित रूप से उसका भुगतान करते रहना चाहिए। टैक्स बाकी रखना बहुत बड़ा पाप है। बहुत से व्यापारी टैक्स अदा न करके अपनी फर्म फेल करके टैक्स बचा लेते हैं। उनकी यह चोर-प्रवृत्ति हमेशा उनको चोर बनाकर कमजोर कर देती है। वे कभी सफल नहीं होते। व्यापारी की सबसे बड़ी सफलता उसका सरकुलेशन (circulation) है। पूंजी हमेशा चलती रहनी चाहिए। यदि पूंजी को तिजोरी में बन्द करके रख दिया जाएगा तो उन्नति की गति रुक जाएगी। वह धीरे-धीरे शान्त होकर पतन के रास्ते पर अग्रसर हो जाता है। इस दृष्टिकोण को सामने रखते हुए मैं अपनी पूंजी को फाइनेन्स के काम में लगाने लगा। उससे जरूरत मंद लोगों को सहायता मिलने लगी। अपनी आय में वृद्धि होने लगी तथा बाजार में फर्म का नाम भी रोशन होने लगा। धन बढ़ता गया। परिवार बढ़ता गया। सब कुछ वृद्धि की ओर रहा परन्तु अपने मन को कभी नही बढ़ने दिया। मन पहले की तरह शान्त और निरभिमानी रहा। गिरधर कविराय की उक्ति स्मरण रहती—

दौलत पाय न कीजिए, सपने में अभिमान।
चंचल दिन यह चार की, ठाउ न रहत निदान।

ठोर न रहत निदान, जियत जग में यश लीजे।
मीठे वचन सुनाय, विनय सब ही की कीजे।
कहि गिरधर कविराय, सुनो अभिमानी मंद दौलत।
पाहुन निशि दिन चार, रहत सब ही घर दौलत।

जिस तरह मीठे-मीठे फल के वृक्षों में फल लग जाने के बाद उसकी डालियाँ झुक जाती हैं, उसी तरह व्यक्ति को धन प्राप्त कर लेने के बाद हमेशा नम्र बने रहने की प्रवृत्ति बना लेनी चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि मेरे आचरण से किसी निर्दोष को कष्ट तो नहीं पहुँच रहा है। मैंने स्वयं अनेक व्यक्तियों का बचपन तथा गरीबी देखी, उनकी अमीरी और जवानी देखी तथा अन्त में फिर उनकी लड़खड़ाती गरीबी तथा बुढ़ापा देखा। इसका मूल कारण उनके पास धन आ जाने पर अभिमानी हो जाना रहा अतः उनका पतन हुआ।

९ जून १९८३ ई० को ईश्वर की असीम अनुकम्पा से पूरे परिवार के साथ रजत-जयन्ती हर्ष और उल्लास के वातावरण में मनायी जा रही है। ईश्वर से प्रार्थना है कि परिवार के सभी सदस्यों की बुद्धि निर्मल रखे। जिससे सभी संगठित रूप में एक दूसरे के दुःख में हाथ बटाकर, अपने से बड़ों को सम्मान देकर, सामाजिक, पारिवारिक एवं देश की सेवा में संलग्न रहें। परिवार संगठित हो कर सभी क्षेत्रों में बढ़ता रहे। श्री राजा बलदेव प्रसाद बिड़ला, श्री नसरवान टाटा, श्रीहेनरी फोर्ड आदि के जीवन-चरित्र से ज्ञात होता है कि उन्हें सफलता प्राप्त करने के लिए कितने महान कष्टों का सामना करना पड़ा। उनकी योग्य सन्तानों ने उनके द्वारा स्थापित एक कड़ी में और भी कड़ियाँ जोड़ी। उस कड़ी को टूटने नहीं दिया। आज उनके द्वारा स्थापित फर्म विशाल रूप ग्रहण कर देश और विदेश में प्रसिद्धि प्रसारित कर रही है। लाखों व्यक्तियों को रोजगार मिल रहा है। उनके द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाओं से लाखों व्यक्तियों को शिक्षा और अस्पतालों से जीवनदान प्राप्त हो रहा है। यदि इन व्यक्तियों की सन्तानें अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित धन का

अपव्यय मौज और मस्ती में करतीं, आपस में खींचातानी करके ऐश और आराम के लिए अलग-अलग राग आलापते तो पूर्वजों द्वारा कठिन परिश्रम से अर्जित धन विनष्ट हो जाता। उनका तथा पूर्वजों का नाम और निशान भी मिट जाता। लाखों परिवार उन्नति के शिखर पर पहुँच कर विनष्ट हो गये। उनमें धन का अभिमान अलगाव को प्रोत्साहन देने की प्रवृत्ति तथा वैमनस्य ने जन्म ले लिया था। अतः स्वार्थ का परित्याग कर उन्नति के लिए विवेक से कार्य करना चाहिए। परिवार के सभी सदस्यों में धनोपार्जन की शक्ति नहीं होती। जिसके पास धनोपार्जन की शक्ति है, उसे अन्य लोगों को उपेक्षा के भाव से नहीं देखना चाहिए। मनुष्य के हाथ की छोटी-बड़ी सभी अंगुलियाँ मिलकर मुक्का बनकर एक अस्त्र का कार्य करती हैं तथा दुश्मन को परास्त कर देती हैं। उसी प्रकार परिवार के सभी व्यक्ति आर्थिक रूप से समान न होते हुए भी संगठित रहकर बड़े से बड़े दुश्मन का सामना कर सकते हैं। वेद के इस सुन्दर मंत्र से सदा प्रेरणा ग्रहण करते रहना चाहिए।

> सं गच्छध्वं सं वदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्।
> देवा भागं यथा पूर्वे, संजानानां उपासते॥

अर्थात् 'सब एक साथ मिलकर चलें। मिलकर बोलें। सबके मन और विचार समान हों। जिस प्रकार प्राचीन विद्वान् एकमत होकर अपना-अपना भाग ग्रहण करते थे, उसी प्रकार सब एकमत होकर अपना-अपना भाग ग्रहण करो।'

यदि परिवार का आचार-विचार, व्यवहार, खान-पान ठीक रहा तो अर्ध-शताब्दी और शताब्दी मनाने का भी सुअवसर प्राप्त होगा। हो सकता है तब तक मैं, माताजी और पत्नी न रहें परन्तु अन्य लोगों को संगठित रूप में रहने पर यह सुअवसर अवश्य प्राप्त होगा।

काला धन, सफेद धन—देश स्वतन्त्र होने के बाद शहरों में धन दो प्रकार का हो गया। काला धन और सफेद धन। साधारण व्यक्ति सुनकर

स्तब्ध रह जाते हैं कि यह काला धन कैसा है? उदर पूर्ति में लगे रहने वाले तथा मोटा-महीन पहन कर झोपड़ी में रहने वाले व्यक्तियों को काला-धन और सफेद-धन से क्या सरोकार। वे तो निर्धन ही हैं। बड़े-बड़े महलों में रहने वाले, चमचमाती कारों पर दिन भर रंग-बिरंगे वस्त्र बदल-बदल कर चलने वालों को पता है कि काला धन क्या है। काला धन वह है जो सरकार की निगाहों से छुपा कर रखा जाता है और जिस पर टैक्स अदा नहीं किया जाता। सफेद धन वह है जो बैंक, गोदाम और दुकान की शोभा वृद्धि करता है। मैं वैदिक सिद्धान्तों का अनुगामी होने के कारण काला-धन अर्जित नहीं करना चाहता, परन्तु सरकार की गलत टैक्स नीति तथा समाज में फैली कुरीतियों के कारण, गुण्डों-बदमाशों से बचने के कारण काला-धन अर्जित हो जाता है। उदाहरण स्वरूप जैसे—उत्तर प्रदेश या पंजाब में जाकर नीलामी में माल खरीदा गया। पूरा बिक्री कर देकर माल लाया गया। खरीद, टैक्स और खर्च जोड़कर उसका लागत मूल्य हुआ। ग्राहक को विक्री करते समय लागत मूल्य और बंगाल सरकार का टैक्स जोड़कर दिया जाने लगा। ग्राहक घबड़ा जाता है वह कहता है मैं दुगना टैक्स क्यों दूं? दूसरा दुकानदार तो आपके साथ माल खरीद कर लाया है, उसने भी टैक्स दिया है। वह भी रसीद पुर्जा दे रहा है और बंगाल सरकार का टैक्स नहीं ले रहा है। मैं आपसे माल क्यों लूं। उसे समझाया जाए कि वह अन-रजिस्टर्ड डीलर है। ऐसे ही खरीदता और बेचता है। वह जवाब देता है कि आप रजिस्टर्ड डीलर हैं अब ऐसे ही बैठे रहें। यदि टैक्स एक जगह ही देय होता तो ग्राहक नाराज क्यों होता। सरकार की इस अदूर-दर्शिता के कारण नम्बर दो का काम करके काला धन बटोरना पड़ता है। दूसरा कारण राज्य सरकार या केन्द्र सरकार के चुनाव में असामाजिक तत्त्वों को बढ़ावा दिया जाना है। जिसे आजकल शरीफ गुण्डा कहते हैं। उनके वोट रूपी स्वार्थ को पूरा करने के कारण उनका सभी जगह बोलबाला है। मैं नहीं चाहता कि सरकारी माल का मूल्य सरकार को न मिले। फिर भी सरकार का लाखों-करोड़ों का माल जगह-जगह निलाम होता है। प्रायः

नीलामी के समय सरकारी अफसरों के सामने भ्रष्ट अफसरों के सहयोग के द्वारा असामाजिक ईमानदार व्यापारी को दबोच कर अन्य नामों से माल खरीद कर फिर दुबारा उस माल को नीलाम करते हैं। व्यापारी को माल खरीदना पड़ता है। उस माल को इधर-उधर के नाम से लेकर बेचना, लाभ पाना और दुबारा नीलामी में हुए लाभ से प्राप्त धन को व्यापारी अगर अपने खाते में जमा करता है तो आयकर वाले नहीं विश्वास करते। विवश होकर व्यापारी नं० २ के खाते में उस हिसाब को रखता है। जिसको सरकार काला धन कहती है। इस भ्रष्टाचारी युग में ईमानदार व्यापारी को व्यापार करना लोहे के चने चबाना है। सरकार को टैक्स के नियमों को उदार बना कर उनमें संशोधन करना चाहिए तथा असामाजिक तत्त्वों को कड़े नियम द्वारा कुचल देना चाहिए। ईमानदार व्यापारियों से विचार विमर्श करते रहना चाहिए। मजबूरी से कमाए हुए काले धन समय-समय पर छूट का मौका मिलते ही ईमानदार व्यक्ति अपना इकट्ठा किया हुआ काला धन सरकार के हवाले कर देने में संकोच नहीं करता है। इसी प्रकार अन्य श्रोतों से भी काला धन एकत्रित होता है। इसका बन्द होना बहुत मुश्किल है। क्योंकि देश की शिक्षा पद्धति ही दूषित है। बच्चों को ईमानदार, चरित्रवान और देशभक्त बनने का पाठ नहीं पढ़ाया जाता। जिस देश के अधिकांश गुरुजन कर्तव्यहीन हो गये हों, उस देश के बच्चे कैसे नागरिक बन सकते हैं। बच्चे ही भविष्य में व्यापारी, शासक और सरकारी आफिसर बनते हैं। वे देश को अच्छे रास्ते पर कैसे ले जा सकते हैं। उर्दू में कहावत है—

खुद मियाँ फजीहत, तो औरों को क्या नसीहत।'

आवश्यकता है ऐसी सरकार की जिसमें अच्छे बुद्धिजीवी, मनीषी और चरित्रवान् व्यक्ति हों चाहे वे किसी भी पार्टी के क्यों न हों, उनमें भ्रष्टाचार समाप्त करने का संकल्प हो तभी देश का कल्याण हो सकता है। अगर इसी प्रकार दिन प्रति-दिन अच्छे विचारों का पतन होता रहा तो देश लड़खड़ाता रहेगा।

फूलपुर में स्कूल बनाने की योजना

१३ मई १९५९ को मैंने श्री कन्हैया लाल जायसवाल के समक्ष प्रस्ताव रखा कि 'आप अजमेरी बादशाहपुर में सड़क पर स्थित बाग के सामने की ८ बिस्वा जमीन मुझे दे दें।' उन्होंने कहा कि 'मैं पूरी जमीन बेचना चाहता हूँ' मैंने पूरी जमीन खरीदने में असमर्थता प्रकट करते हुए कहा कि 'आपको श्री जितईराम शाव ३०० रु० ८ बिस्वा का दे रहे हैं। मुझे सड़क की ओर की ८ विस्वा जमीन ३०० रु० में दे दें। मैं स्कूल बनवाऊँगा। "श्री कन्हैया लाल ने प्रसन्ता के साथ कहा कि 'अगर स्कूल बनवाना हो तो ले लो मैं दाम भी नही लूँगा।"

अन्त में उन्होंने ३०० रु० में से कुछ नगद और कुछ सामान के रुप में ले लिया मैंने भूल यह की थी कि उनसे कुछ लिखित नही लिया था। घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण मैंने यह आवश्यक नहीं समझा था। बात पर विश्वास करके रह गया। जिसके कारण नाना प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। भविष्य में कभी भी संस्था के लिये कोई काम करना हो तो जमींन की लिखा-पढ़ी अवश्य कराकर काम प्रारम्भ करना चाहिए।

वचन पर अडिग रहूँगा—छोटे भाई राधेश्याम के विवाह के लिए अपने मित्र श्री हनुमान प्रसाद शाव के कहने पर लड़की का फोटो देखे बिना और बिना कुछ लड़की के विषय में जानकारी प्राप्त किए अपने १० मित्रों के साथ अमरुपुर श्रीराम स्वरूप शाव के यहाँ प्रस्थान किया। कोयरीपुर स्टेशन से श्री राम प्रसाद जी ने दो इक्के किये। इक्के से हम उनके निवास स्थान पहुँचे। भोजनादि के पश्चात् लड़की को सबके सामने बुलाकर बैठा दिया। नाटे कद की लड़की, रंग फीका, कट भी बहुत सुन्दर नहीं था। देखते ही सबका मन खिन्न हो गया। कोयरीपुर से आए बेनी माधव ने कहा कि अगर आप सम्बन्ध पक्का करके नहीं जाते तो इनका बहुत अपमान होगा। आपने गलती की है। आपको पहले साधारण रूप से देख लेना चाहिए था, उसके बाद तैयारी से आपको आना चाहिए था। मैंने अपनी

गलती महसूस की और बिना किसी से विचार-विमर्श किए लड़की के गले में हार पहना दिया। मैं अपनी गलती से दूसरों को अपमानित नहीं करना चाहता था। मेरे साथ गए व्यक्तियों ने वहीं मेरी आलोचना प्रारम्भ कर दी। घर पहुँच कर परिवार के सदस्यों से बातें सुननी पड़ी। भोला-भाला भाई राधेश्याम भी नाराज हो गया।

सिर्फ पिताजी ने मेरा समर्थन करते हुए कहा कि जो यह कर रहा है, ठीक है। खुले दिल से पिताजी ने मेरा समर्थन किया। हमारे एक नजदीकी रिश्तेदार ने पत्र लिखा कि सांवली लड़की से विवाह कर रहे हो, यदि उससे लड़की होगी तो विवाह में बहुत परेशानी होगी। मैंने उत्तर में लिखा कि भविष्य में परेशानी का भय है तो अगर आप कहें तो मैं यह कर सकता हूँ कि विवाह के बाद कलावती का ऑपरेशन करा दूँ, जिससे कोई सन्तान पैदा न हो और न उसके विवाह के लिए कष्ट हो। परन्तु मैं यह सम्बन्ध नहीं छोड़ सकता। प्रसन्नता से तिलक संस्कार सम्पन्न हुआ। पिताजी बहुत अस्वस्थ थे। गाँव पर मकान के सामने तिलक संस्कार हुआ। पिताजी ने चारपाई पर लेटे संस्कार को देखा और आनन्दित हुए। संस्कार पर बहुत लोग आए थे।

पिताजी का बिछोह

पिताजी निरन्तर अस्वस्थ चल रहे थे। दो दिन से अधिक अस्वस्थ थे। सभी लोग उनकी चारपाई के पास बैठकर रो रहे थे। परिवार के सभी सदस्य दुःखी थे। पिताजी बातों-बातों में अपनी इच्छा व्यक्त कर देते थे। गाँव के तथा आस-पास के व्यक्तियों को बुलाते और कहते 'आप पर इतना रुपया बाकी है।'

'हाँ' का उत्तर मिल जाने के बाद कहते, "आपको माफ कर दिया।" इसी प्रकार उन सभी लोगों को बुलाते जिनके ऊपर कुछ कर्ज बाकी था, और उन्हें माफ कर देते। अन्तिम क्षणों में मुझसे कहा "मेरा दिया हुआ कर्ज किसी से मत माँगना। मैंने सबको माफ कर दिया है। श्री बैजनाथ

शुक्ल की दूसरी लड़की की शादी में भी पहली लड़की की तरह सहायता कर देना।" सिरहाने रखा हुआ दस आना निकाल कर बच्चों को दे दिया उनकी अपनी पूंजी में से १० आना ही उनके पास शेष बचा था।

अन्त में मेरा, छोटे भाइयों, बहिन नीला तथा माता जी का हाथ पकड़ कर कहा कि 'बेटा! अब सभी का हाथ तुम्हारे हाथ में है। अब सबकी देख-भाल तुम्हारे ऊपर है।"....यह कहते हुए परलोक सिधार गए। मेरे ऊपर संकट का पहाड़ टूट पड़ा। घर में विलाप का कोहराम मच गया। मैं भी रो पड़ा। गाँव के लोग इस दुःखद समाचार को सुनकर घर पर पहुँचने लगे और धैर्य धारण कराने लगे। अन्तिम संस्कार को तैयारी प्रारम्भ हुई। गाँव में चन्दन को लकड़ी और हवन-सामग्री सुलभ नहीं हुई। आम की लकड़ी और एक कनस्तर १७ कि० शुद्ध देशी घी से सरयू 'घाघरा' नदी के तट पर विधिवत् संस्कार किया गया। संस्कार के समय गाँव तथा आस-पास के हिन्दू और मुसलमान उपस्थित थे। उनका प्यार और स्नेह उन्हें वहाँ खींच लाया था। पिताजी में ऊँच-नीच, अमीर-गरीब का भेद-भाव नहीं था। लगातार १० वर्ष से उन्हें ग्राम-प्रधान निर्विरोध चुना जा रहा था। अपने ग्राम-प्रधान के काल में उनका यही प्रयास रहा कि गाँव का कोई भी झगड़ा कोर्ट या थाने में न जाने पाए। वे स्वयं झगड़ा निपटा देते थे। दोनों दलों को बुलाकर समझौता करा देते थे। जिस दिन ग्राम-सभा की बैठक होती थी, स्वयं टाट-पट्टी उठाकर ले जाते थे और बिछाते थे। उनमें सेवा भाव कूट-कूट कर भरा था। अहंकार उनकी छाया से भी दूर था। पिताजी हमसे पूछा करते थे "ईश्वर का भोजन क्या है ?'

"आप बताइये पिताजी।" मैं पूछता।

"ईश्वर का भोजन अहंकार है। जो अहंकार करता है, ईश्वर उसे खाता है। इसलिए अहंकार नहीं करना चाहिए।"

पिताजी के गुणों का वर्णन मैं नहीं कर सकता। उनके विचार बहुत

उच्च थे। उनका नाम रामनारायण था। परन्तु अपने उप नाम मुंशीजी से ही गाँव आदि में प्रसिद्ध थे।

अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में बड़े-से-बड़े व्यक्ति अपने धन, जायदाद तथा दिए हुए कर्ज आदि की सूची बनाकर दे देते हैं। परन्तु धन्य हैं! पिताजी आप। आपने अपनी स्थिति के अनुसार ही लोगों को कर्ज दिया था, वह भी अन्तिम क्षणों में माफ कर दिया। शायद ही कोई यह कार्य कर सकेगा। यह आपकी महानता और त्याग का प्रतीक है। आप अपने लिए धन एकत्रित नहीं करते थे। वे मुझ पर बहुत विश्वास करते थे।

पिताजी के स्वर्गवास के दूसरे दिन गाँव के व्यक्तियों ने घंट बंधवाने के लिए कहा। मैंने उन्हें बुलाकर पूछा "क्या घंट बंधवाने और महापात्र को दान देने से मृत व्यक्ति को ही स्वर्ग मिलता है? अन्य व्यक्ति को नहीं मिलता?" उन्होंने उत्तर दिया, "घंट बन्धवाने से मृत व्यक्ति को स्वर्ग लोक में सुख मिलता है तथा महापात्र को दान में दिया गया सब सामान स्वर्ग में मृत व्यक्ति को मिलता है।" मैंने कहा "अगर मैं यह सब करता हूँ तो पिताजी को स्वर्ग में मिलेगा।" सबने कहा "हाँ।" मैंने महा "यदि मैं नहीं करता तो पिताजी को नहीं मिलेगा।" सबने कहा, 'यदि आप यह सब करेंगे तो आपके पिताजी को मिलेगा, नहीं करेंगे तो नहीं मिलेगा।" मैंने कहा कि 'मेरे देने, न देने से आपको कोई फर्क नहीं पड़ता।

"नहीं" सबने उत्तर दिया। मैंने कहा "अगर आप लोगों को कोई लाभ-हानि नहीं होती तो मुझे सन्तोष है। मैं न घंट बाँधूंगा न महापात्र को ही कुछ दूंगा। यज्ञ करने के बाद आपको तथा गरीबों को भोजन कराऊँगा। इसी से मेरे पिताजी को शान्ति और सुख मिलेगा। मुझे भी शान्ति मिलेगी।" मैंने निश्चय किया कि फैली हुई कुरीतियों के प्रति मुझे सचेष्ट रहना है जिससे पाखण्ड समाप्त हो।

पिता जी के विछोह का दुःख धीरे-धीरे कम हुआ। मैं अपने व्यापार में लग गया। श्री रामदेव अहीर की माता तथा सरजू अहीर की पत्नी ने

एक दिन हमारे घर आकर कहा "मेरे ऊपर अस्सी रुपए आपके पिताजी के दिए बाकी हैं।" मैंने कहा, "पिताजी ने सभी को माफ कर दिया है। इसलिए मैं रुपये नहीं लूँगा।" यह सुनकर वह रोते हुए कहने लगी, "दो बीघा जमीन माँझा में मेरे बच्चों को जीवन यापन करने के लिए आपके पिता ने खरीद दिया था उस रुपये में अस्सी रुपया बाकी है। अगर आप यह रुपये नहीं लेते हैं तो मेरा उद्धार नहीं होगा। आप ये रुपये स्वीकार कर लें।" में धर्म संकट में पड़ गया। मैंने कहा "मैं पिताजी का एक स्मारक बनवाऊँगा तो ये रुपये तुम उसमें लगा देना।" यह सुनकर वह सन्तुष्ट हुई और चली गयी।

श्री राधेश्याम के विवाह की तिथि निश्चित हो चुकी थी। पिता जी की मृत्यु के कारण गाँव के पौराणिक मतावलम्बियों ने कहा कि एक वर्ष तक कोई शुभकार्य नहीं करना चहिए। परन्तु मेरा मत था कि शुभ कार्य के लिए शुभ घड़ी नहीं देखी जाती। विवाह की तैयारी प्रारम्भ हुई और समय से विवाह सम्पन्न हो गया।
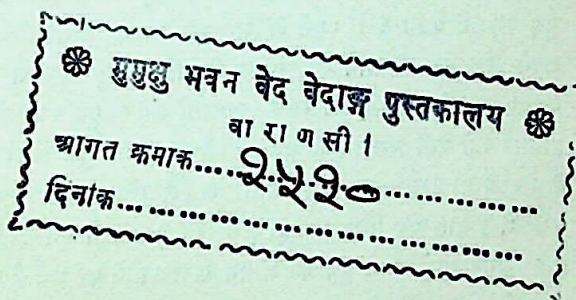
अध्याय—७

फूलपुर में स्कूल की स्थापना

गाँव के व्यक्तियों ने सलाह दी कि आप स्कूल बनवाना चाहते हैं तो हाई-स्कूल अपने पिताजी के नाम बनवा दें। ३ नवम्बर १९६१ को एच० टी० इण्टर कालेज टाण्डा के श्री शास्त्री जी द्वारा हवन कराकर श्री देवी प्रसाद मिश्र प्रधानाचार्य के कर-कमलों द्वारा उद्‌घाटन करवाया। श्री कन्हैया लाल से जमीन ले ली गयी थी। उसी पर २ झोंपड़ी बना दी गयीं थीं। ६ बच्चों से जिनमें ५ गाँव के थे और एक मेरा अपना पुत्र ओमप्रकाश था, तथा २ अध्यापक थे, स्कूल प्रारम्भ हुआ। मुशीर खाँ इण्टर पास करके घर पर बैठे थे उन्हें सहायक अध्यापक बना दिया था तथा पं० दुक्खी राम जिन्होंने अवकाश ग्रहण किया था, उन्हें प्रधानाध्यापक बना दिया। नवम्बर माह में छात्रों का मिलना कठिन हो गया था। अब तक बच्चे अन्य जगह प्रवेश ले चुके थे। मैंने अपने पुत्र का नाम कालेज से कटा कर लिखाया था। देवी हरिजन का पुत्र सन्त राम और मलगी का पुत्र रामदेव कक्षा ६ में पढ़ने के लिए दूसरी जगह जाते थे। मैंने दोनों को अपने विद्यालय में लाने का प्रयास किया, परन्तु असफल रहा। उनका कहना था कि झोपड़ी में स्कूल खुला है अगर टूट गया तो हमारा क्या होगा। मैंने देवी हरिजन को बुलाया और कहा कि तुम विद्यालय की कमेटी के सदस्य हो। हमारे घर पर वर्षों तक हलवाहे का काम तुमने किया है। तुम्हें मेरी बात पर विश्वास नहीं है। मैंने भी अपने पुत्र का नाम लिखाया है। अगर तुम्हे अपने पुत्र का जीवन खराब होने का भय है तो मैं जिम्मे-दारी लेता हूँ। मैं उसे पढ़ाऊँगा। योग्य बना कर नौकरी भी लगवा दूंगा। पूरा आश्वासन मिलने के बाद सन्तराम को उसने स्कूल भेजना प्रारम्भ

किया। रामदेव भी आने लगा। आठ छात्रों से कक्षा ६ की पढ़ाई प्रारम्भ हुई।

सर मुड़ाया ओले पड़े—स्कूल खोलने पर गाँव में लोग प्रसन्न थे। परन्तु कुछ व्यक्ति स्वार्थ वश और कुछ व्यक्ति ईर्ष्यावश असन्तुष्ट थे। असन्तुष्ट व्यक्तियों ने श्री कन्हैया लाल को समझाया कि आपने लिखित कुछ नहीं दिया है तो श्री सीताराम वहाँ कैसे स्कूल बनवा सकते हैं। चलो हम छप्पर उठाकर फेंक देते हैं। अन्त में एक दिन उन सबने मिलकर रात में छप्पर उठाकर सड़क पर फेंक दिया। प्रातः छप्पर सड़क पर फेंका हुआ देख कर प्रबन्ध समिति के सदस्यों, नारायणघर, मास्टर मुशीर खाँ तथा अन्य व्यक्तियों ने श्री कन्हैया लाल को बुलाकर समझाया फिर छप्पर रख दिया गया और पढ़ाई प्रारम्भ हो गयी।

मुझे तार द्वारा इस घटना की सूचना कलकत्ता दी गयी। मैं सूचना मिलते ही गाँव चला आया। व्यवस्था ठीक कर दी और आश्वासन दिया कि एक-दो वर्ष में छात्रों की संख्या अधिक हो जाने पर पक्की बिल्डिंग बनवा दूँगा। पढ़ाई अच्छी तरह होने लगी। पं० दुक्खीराम का अनुशासन कठोर था। वे सिद्धान्त के पक्के थे। उन्होंने अपने सगे पौत्र की अंक तालिका पर लिख दिया था 'अनुशासनहीन'। कई व्यक्तियों ने उन्हें समझाया कि अंक तालिका पर आपको यह नहीं लिखना चाहिए था। परन्तु उन्होंने कहा, "जो जैसा है, वैसा ही मैं लिखूंगा। चाहे अपना हो या पराया।" मेरे लघु भ्राता हरीराम, श्रीराम और मनीराम विद्यालय की उन्नति में लगे रहते थे। आस-पास के गाँव के बच्चों को बुलाकर उनका नाम विद्यालय में लिखवाते थे। अधिकांश बच्चों की फीस माफ रहती थी। विरोधियों के मुकदमे एवं विद्यालय को मान्यता के लिए फैजाबाद जाना पड़ता था। प्रातः उठकर टाण्डा से ६ बजे वाली बस से फैजाबाद जाता और रात्रि में १० बजे बस से टाण्डा लौटता। वहाँ से साइकिल से १२ बजे रात घर पहुँचता था। इस परोपकार के कार्य में मुझे बहुत आनन्द प्राप्त होता था। अतः मन में कभी घबड़ाहट या दुःख

नहीं अनुभव करता था। जिला विद्यालय निरीक्षक ने पाँच हजार रुपये एन्डावमेण्ट फण्ड में तथा एक हजार रुपये 'रिवर्ज फण्ड' में जमा करने का आदेश किया था।

तुरन्त दोनों फण्ड में रुपया जमाकर उन्हें सूचित कर दिया गया। वे विद्यालय का निरीक्षण करने के लिए आए। फण्ड, पढ़ाई-लिखाई आदि से पूर्ण संतुष्ट थे उन्होंने एक कमी बताई, जो थी—विद्यालय का भवन। मैंने कहा कि आप अस्थायी मान्यता प्रदान कर दें। मैं भवन तुरन्त बनवा दूँगा। तब तक विद्यालय भगवानदास जायसवाल के मकान में चलेगा। उन्होंने स्वीकृति दे रखी है। जिला विद्यालय निरीक्षक ने मकान जाकर देखा और श्री भगवानदास जायसवाल से लिखित स्वीकृति प्राप्त की। २८ नवम्बर १९६२ को श्रीराम नारायण जूनियर हाई-स्कूल को अस्थायी मान्यता प्राप्त हो गयी। पहले वर्ष ३० अप्रैल १९६३ को १२३ रु० की अनुदान राशि मिली। छात्रों से फीस नाम मात्र ली जाती थी फिर भी ईश्वर की कृपा से अध्यापकों का वेतन तथा अन्य जो भी खर्च होता था, हमें सहन करना पड़ता था। मैं अपने व्यापार से एक प्रतिशत धर्मार्थ निकाले हुए फण्ड से भुगतान करता था। किसी से चन्दा या सहायता नहीं माँगी।

भवन-निर्माण—विद्यालय के भवन का शिलान्यास टाण्डा के श्री आनन्द कुमार आर्य के कर-कमलों से १३ मई १९६४ को हुआ। ३ कमरे कक्षाओं के लिए २ कमरे आफिस के लिए तथा १ बरामदा बनाने के लिए नींव डाली गयी। विद्यालय की प्रगति देखकर विरोधी ईर्ष्या से जलते थे। उनकी बाधाओं के बाद भी विद्यालय प्रगति पर अग्रसर था। सन् १९६४ में पहली बार १७ छात्र जूनियर हाई-स्कूल परीक्षा में सम्मिलित हुए। १२ छात्र उत्तीर्ण हुए और ५ छात्र अनुत्तीर्ण हुए।

भवन का निर्माण कार्य सीमेंन्ट के अभाव में रुक गया था। दीवाल बन गयी थी। दरवाजे और खिड़कियाँ भी लग गयीं थीं। छत सीमेंन्ट के अभाव में नहीं पड़ पायी थी। ३ जुलाई १९६४ को श्री पन्नालाल ने

दीवानी में एक मुकदमा दायर किया। कोर्ट का एक व्यक्ति एवं श्री वासदेव शाव के मुख्तार श्री रामनरेश सिंह दो-तीन व्यक्तियों के साथ आए और उन्होंने कोर्ट का Stay Order दिखाते हुए कहा कि स्कूल का भवन बनवाना बन्द कर दो। मैं मन में घबड़ा गया। मैं, मेरे पिता या पितामह आज तक किसी भी झगड़े में नहीं पड़े थे न कभी कोर्ट गए थे। आज मुझे इन दुष्टों के कारण मुकदमेबाजी के लिए तैयार होना पड़ा। एक सांस ले कर शान्त हो गया। साहस करके मैंने श्री रामनरेश सिंह को अलग बुलाकर पूछा कि श्री वासदेव शाव की मैंने इतनी सेवा की है। यह क्या परिणाम मुझे दिया जा रहा है? उत्तर में श्री रामनरेश सिंह ने कहा कि यह दण्ड आपको बक्शीश के रूप में दिया जा रहा है। मैंने अपनी स्थिति प्रकट करते हुए पूछा कि "मैं अब क्या करूँ।" उत्तर में उसने कहा कि "आप घबड़ाएँ मत। मैं तो मुकदमेबाज व्यक्ति हूँ। आप भवन का एक नक्शा बनवाकर उसमें हुए निर्माण कार्य का विवरण दे दें। अब तक आपका जितना रुपया व्यय हुआ है वह भी नोट कर दें। आपका बत्तीस हजार रुपया व्यय हुआ है। पन्नालाल ने ३ छप्पर रक्खा दिखाकर साढ़े चार सौ रुपए की मालियत की कोर्ट फीस जमा की है। आपका व्यय बहुत अधिक है इसलिए दीवानी को यह केस देखने का अधिकार नहीं है। अतः पहली पेशी में ही मुकदमा खारिज हो जाएगा। यदि उन्हें मुकदमा लड़ना होगा तो हाईकोर्ट से Stay Order लाना होगा और ३२ हजार की कोर्ट फीस जमा करनी होगी। आप निश्चिन्त रहें। एक अच्छे वकील का प्रबन्ध करके पैरवी करा दें। कोर्ट से जो व्यक्ति आवें उन्हें कुछ बक्शीश देकर पूरा विवरण नोट करा दें।" श्री रामनरेश की सलाह के अनुसार ही कार्य किया गया। श्री रघुवीर शाव को लेकर अकबरपुर और फैजाबाद गया। दोनों जगह अच्छे वकीलों से सम्पर्क किया। जवाबदेही तैयार कराकर कोर्ट में जमाकर दी। श्री जगत नारायण श्रीवास्तव, जमनियाँबाग, फैजाबाद के एडवोकेट ने आकर अकबरपुर में बहस की। Stay Order खारिज हो गया। विद्यालय का कार्य तेजी से चलने लगा।

श्री पन्नालाल, श्री गयाप्रसाद आदि विरोधियों ने निराश होकर गुण्डों का सहारा लेना प्रारम्भ किया। आत्मरक्षार्थ मुझे भी अपने भाइयों के नाम सरकार से लाइसेंस प्राप्तकर वन्दूक और रिवाल्वर खरीदनी पड़ी। साइकिल से टाण्डा आना-जाना सुरक्षित नहीं था अतः एक जीप भी रखनी पड़ी। विरोधी ताक लगाए बैठे रहते थे। मैंने प्रण किया कि चाहे जो भी हो मुझे जूनियर हाई-स्कूल से हाई-स्कूल विद्यालय को वनाना है।

मौत के मुख से बचना—गाँव में कोई नक्शा आदि नहीं वनता। कार्य की देखरेख के लिए ओवरसियर या इंजीनियर नहीं होते। मालिक स्वयं समस्त कार्य देखता है। अतः विद्यालय का निर्माण कार्य मुझे स्वयं देखना पड़ता था। प्रातः और सायं कारीगरों को समझाना पड़ता था। सभी कार्य स्वयं देखता था। यदि कहीं ईंट खराव लगी देखता तो उसे निकलवाकर अच्छी ईंट लगवाता। दूसरी मंजिल का निर्माण कार्य चल रहा था। २४ दिसम्वर १९६७ को प्रातः मैं कार्य का निरीक्षण कर रहा था। एक गाटर वाहर निकला हुआ था। मैंने ध्यान नहीं दिया। गाटर से टकरा गया। माथे में चोट लगी और मैं धड़ाम से नीचे ईंटों पर जा गिरा। मेरे गिरते ही कोहराम मच गया। विद्यालय में दुःख की लहर छा गयी। चारपाई पर लेटाकर घर लाया गया। सभी जगह समाचार विद्युत गति से फैल गया। कुछ व्यक्तियों ने मर जाने की अफवाह फैला दी। हितैषी देखने के लिए दौड़ पड़े। विरोधियों में खुशी छा गयी। टाण्डा में डॉक्टर निशार से पट्टी बँधवायी और कलकत्ता चला आया। कलकत्ते में डाक्टर को दिखाया डाक्टर ने वेहोश करके हड्डी सेट की। वहुत प्रयत्न करने के वाद भी बाँए हाथ की एक अँगुली खराव हो गयी। हड्डी सेट नहीं की जा सकी। इसलिए आजतक वह अँगुली मुड़ती नहीं है। और जो चोट लगी थी वह सब ठीक हो गयी। स्कूल वनवाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ था। अपने सभी मनोरंजन त्याग चुका था।

१९६८ में विद्यालय को एक रुपया मात्र आर्थिक सहायता सरकार से प्राप्त हुई। फिर भी शिक्षकों का पूरा वेतन निश्चित समय पर दिया जाता

था। किसी प्रकार की कटौती नहीं की गयी। अपनी कमाई से धर्मार्थ-कार्य ठीक से चल रहा था।

अपने सिद्धान्तों पर ही चलना ठीक है—२४ जनवरी १९७० को मैं कलकत्ता में था। दुकान पर बैठा हुआ था। श्री राजाराम शाव दुकान पर आए और उन्होंने सूचना दी कि अकबरपुर से श्री मदनलाल के पास फोन आया है कि आज प्रातः श्री वासदेव शाव की शौच जाते समय मुसलमानों ने गेहूँ के खेत में हत्या कर दी। यह दुःखद समाचार सुनकर श्रीरामचेत, श्रीराजाराम, श्री इमरतीलाल आदि दून एक्सप्रेस से किछौछा जाने की तैयारी करने लगे। मुझसे भी कई व्यक्तियों नें कहा कि आप भी चलिए मैंनें मना कर दिया। मैंने कहा कि कई वर्षों से आजतक मेरी उनसे वात नहीं हुई। विरोध ही रहा। प्रेम की झलक तक नहीं दिखाई पड़ी। उनकी मृत्यु किछौछा में हुई है और मैं कलकत्ता में हूँ। २४ दिसम्बर १९६७ ई० को मैं फूलपुर में था। स्कूल की छत से नीचे गिर पड़ा था। मेरे मरनें की अफवाह फैल गयी थी। उनका घर १० मील पर है। परन्तु एक भी व्यक्ति मुझे देखने नहीं आया। यदि वे जीवित होते तो देखने जाता। किन्तु अव वहाँ जाना मेरे सिद्धान्तों के विपरीत है। तुलसीदास जी नें कहा है—

"आवत ही हर्षे नहीं, जावत नहीं स्नेह।
तुलसी वहाँ न जाइए, कंचन बरसें मेह॥"

कलकत्तें से कमाया हुआ या कर्ज लिया हुआ धन खींचकर किछौछा ले गए थे। वहाँ लड़ाई-झगड़ा और दुश्मनी करके जमीन ली। कलकत्तें का अपना कारवार चौपट करके अपनी इज्जत समाप्त कर ली। आज उसी तरह मौत के मुख में गए। यदि कमाए हुए धन से शान्तिपूर्वक कलकत्ता में अपनी जमीन-जायदाद वनाने में लगे रहते तो आज करोड़ों रुपए की सम्पत्ति होती, इज्जत पर भी आँच न आती और संभव था कि इतनी बुरी मौत भी न मारे जाते। अब उनकी जीवनलीला समाप्त हो गयी। अपने

कर्मों के अनुसार ही उन्हें पुनर्जन्म मिलेगा। उनका द्वितीय पुत्र श्री मदन लाल सत्यनिष्ठ एवं परिश्रमी है। उसे न अपनी जन्मभूमि से विशेष ममता है न कलकत्ता से घृणा। उसका भविष्य उज्ज्वल है। परिश्रम एवं लगन उसे उन्नति की ओर ले जाएगी।

आर्य-समाज कलकत्ता के प्राण-पुरोहित :
आचार्य रमाकान्त शास्त्री

आचार्य रमाकान्त शास्त्री आर्य-समाज कलकत्ता एवं बंगाल के प्रसिद्ध प्रचारक एवं विद्वान् थे। अपने सन्निकट आये नवयुवक को वे अपनी विद्वत्ता से प्रभावित कर अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। वे उसे वैदिक सिद्धान्तों का पूर्ण रूप से अनुयायी बना देते थे। अधकचरा अनुयायी बनाना वे अपने साथ धोखा देना समझते थे। कितने ही नवयुवकों को उन्होंने आर्य-समाज का कट्टर अनुयायी और प्रचारक बनाया। अपने घर पर अपने लघु भ्राता उमाकान्त और शिवाकान्त तथा पुत्र वाचस्पति को गुरुकुलीय पद्धति से शिक्षा प्रदान की। वैदिक साहित्य की शिक्षा देकर उन्हें आर्य-समाज की सेवा में लगाया। श्री श्याम कुमार राव नामक बाल-ब्रह्मचारी को आर्य-समाज का अनुयायी बनाकर संन्यास लेने की प्रेरणा दी। उसकी शिक्षा एवं भोजन की व्यवस्था स्वयं करते थे। वह बाल-ब्रह्मचारी आज देश में स्वामी अग्निवेश के नाम से वैदिक ज्योति को फैलाने में लगा हुआ है।

पण्डित जी को जलोदार हो गया था। उनका उपचार काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के सरसुन्दर लाल अस्पताल में चल रहा था। उनके दर्शनार्थ वाराणसी गया। रोग भयंकर होता जा रहा था। उनके चेहरे पर घबड़ाहट नहीं थी। उन्हें एक दुःख था कि वे कलकत्ता वासियों की अच्छी तरह सेवा नहीं कर सके। वे घर-घर जाकर वेद का प्रचार करना चाहते थे। मैं मिलकर कलकत्ता लौट आया। पण्डित जी की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। ८ जुलाई १९७० को वाराणसी में

उन्होंने इस लोक को त्याग दिया। इस दुःखद समाचार को सुनकर वहुत धक्का लगा। मन इस विचार से शान्त हुआ कि पण्डित जी ने अपना परिवार इस तरह का बना दिया है कि उनके बाद भी आर्य-समाज की सेवा होती रहेगी। उन्होंने पण्डित उमाकान्त, शिवाकान्त और डा० वाचस्पति को इस योग्य बना दिया कि वे आर्य-समाज की उनके बाद सेवा कर सकें।

विद्यालय को हाईस्कूल की मान्यता—विद्यालय में कक्षा १० की पढ़ाई होती थी, परन्तु मान्यता प्राप्त नहीं हुई थी। मैंने लघु भ्राता श्रीराम को तीन माह का अवकाश देकर इस कार्य के लिए भेजा। १० हजार रुपये एन्डावमेन्ट में जमा कर दिये। विद्यालय का भवन आदि सभी आवश्यकताओं को पूरा कर दिया था। मैंने श्रीराम को निर्देश दिया था कि तुम इस कार्य को पूरा करके ही कलकत्ता वापस आना। रुपया-पैसा जो भी खर्च हो उसकी चिन्ता मत करना। श्रीराम को प्रशासन योजना पास करवाकर गोरखपुर, इलाहाबाद, फैजाबाद और टाण्डा की भाग-दौड़ करनी पड़ी। अथक परिश्रम के बाद सन् १९७० में विद्यालय को हाईस्कूल की मान्यता प्राप्त हुई। श्रीराम ने तीन माह तक अथक परिश्रम करके यह प्रशंसनीय कार्य किया। इससे अध्यापकों एवं छात्रों में प्रसन्नता छा गई। मैंने ईश्वर को धन्यवाद देते हुए मन में कहा कि प्राइमरी स्कूल बनवाना चाहता था परन्तु ईश्वर की कृपा से जूनियर हाई-स्कूल बनवाया और अब वह हाई-स्कूल बन गया। व्यापार दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था। मन में इच्छा हुई कि क्यों न इसे कालेज बनाकर इंजीनियरिंग कालेज बनवा दूँ। मन में भावना थी कि यह विद्यालय जिले में एक आदर्श विद्यालय हो। मेरे उत्साह में वृद्धि होती गयी।

विद्यालय की उन्नति में रोड़ा—कठिन परिश्रम के बाद विद्यालय को १९७२ में सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त होने लगी। अध्यापकों एवं कर्मचारियों में प्रसन्नता छा गयी। सरकारी वेतत प्रतिमाह मिलने

लगा। सरकारी नियमानुसार बिना प्रशिक्षण प्राप्त किये अध्यापकों को नोटिस देनी पड़ी। वफादार अध्यापक श्री मुशीर खाँ को हटाना पड़ा। मुशीर खाँ रोगियों को दवाई देकर अच्छी आमदनी करने लगे थे अतः उन्हें यह कार्य करने की आवश्यकता भी नहीं रह गयी थी। कुछ व्यक्तियों ने रुष्ट अध्यापकों के बहकावे में आकर एकडल्ला में साधू ने एक जूनियर हाई-स्कूल खोल लिया था। वे अपने विद्यालय में आने वाले बच्चों को रोकते थे।

विद्यालय का कार्यभार श्री मिश्री लाल आर्य को सौंपना—जिला विद्यालय निरीक्षक द्वारा दो बार नोटिस प्राप्त हो चुकी थी कि कर्मचारियों को समय पर वेतन नहीं दिया जाता है। मैं व्यापार के सिलसिले में कलकत्ता चला आता था, अतः भुगतान समय पर नहीं हो पाता था। कमेटी की मिटिंग बुलाकर सर्वसम्मति से कमेटी के सदस्य और कोषाध्यक्ष श्री मिश्रीलाल जी आर्य को कार्यवाहक प्रवन्धक नियुक्त किया। पूरा कार्यभार उनके ऊपर सौंप दिया। उन्होंने कहा कि आप निश्चिन्त होकर व्यापार करें और अधिक से अधिक समय आर्य-समाज की सेवा में लगायें। सरकार के हस्तक्षेप के कारण विद्यालय की प्रवन्ध समिति का महत्व धीरे-धीरे कम हो रहा था।

पत्नी के पैर में वोन टी० बी० हो जाने के कारण मुझे तीन माह तक पटना रहना पड़ा। परिवार के सदस्य इतने कर्मठ थे कि मेरी अनुपस्थिति में भी सभी कार्य सुचार रूप से चलता रहता था।

अध्याय—८

देश पर विपत्ति के बादल, भारत-पाक युद्ध, १९७१ ई०

पाकिस्तान द्वारा भारत की पूर्वी और पश्चिमी दोनों सीमाओं पर युद्ध की तैयारी चल रही थी। घुसपैंठियों को काश्मीर में भेजकर तोड़-फोड़ की जा रही थी। पूर्वी पाकिस्तान में हिन्दुओं और बंगाली मुसलमानों पर अत्याचार हो रहा था। लाखों की संख्या में लोग मौत के घाट उतार दिये गए। ३ दिसम्बर १९७१ को पाकिस्तान ने भारत की पश्चिमी सीमा पर आक्रमण कर दिया। तत्कालीन भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी तथा रक्षामन्त्री श्री जगजीवन राम ने सेना को आक्रमण का मुंह-तोड़ जवाव देने का आदेश दिया। स्थल सेनाध्यक्ष जनरल मानेक शा के नेतृत्व में पूर्वी और पश्चिमी सीमा पर सेना के जवानों ने आक्रमण का जमकर मुकावला किया। पूर्वी सीमा पर भारतीय सैनिकों को मुक्तवाहिनी सेना का सहयोग मिला। भारतीय जवान पैंटेन टैंक हथगोलों से इस तरह तोड़ते थे जैसे कोई टीन का बना पानी का टैंक तोड़ रहे हों। पाकिस्तानी सेवरजेट विमानों को भारतीय जैट विमानों ने मार गिराया। देखते-देखते सैकड़ों टैंक और सेवरजेट विमान मिट्टी में मिला दिए। सरगोधा हवाई पट्टी और राडार ध्वस्त कर दिया। पूर्वी सीमा पर जैसोर हवाई अड्डे पर घमासान युद्ध चल रहा था। यह हवाई अड्डा अमेरिका ने वनाया था। यहाँ पाकिस्तानी सेना का भूमिगत अड्डा था। इस पर पाकिस्तानियों को वहुत अभिमान था। हमारे बहादुर जवानों ने पाकिस्तानी सैनिकों को पीछे धकेल दिया और जैसोर हवाई अड्डे पर अपना कब्जा कर लिया और ढाका की ओर वढ़नें लगे। आज मुसलमान फिर वही कहानी दोहराने लगे जो पृथ्वीराज चौहान को परास्त करने के लिए अपनायी थी। उन्होंने पृथ्वीराज

चौहान का सामना गौ-माता को अपनी सेना के आगे रखकर किया था। गौ-माता की रक्षा के लिए हिन्दुओं ने अपने आपको दुश्मन के हवाले कर दिया था। उसी प्रकार जब भारतीय जवान ढाका की ओर बढ़ रहे थे। पाकिस्तानी सेना ने हजारों नंगी युवतियों को सेना के आगे करके मोर्चा सम्भाला। धन्य है भारत के जवान जिन्होंने नारी के सतीत्व की रक्षा करना सीखा है। हमारे सैनिकों ने अपनी पगड़ी खोलकर उन्हें दी और कहा कि 'अपना तन ढककर हमारे मार्ग से हट जाओ'। तेजी से ढाका की ओर बढ़ते हुए जवानों ने चारों ओर पाकिस्तानी सैनिकों को घेर लिया। पाकिस्तानी सेना ढाका में चारों ओर से घिर चुकी थी। हर पाँच मिनट बाद पाकिस्तानी सेना को आत्म-समर्पण के लिए रेडियो के माध्यम से कहा जाने लगा। जनरल मानेक शा ने कहा कि "पाकिस्तानी सैनिकों अभी तुम्हें बचने का मौका है। यदि तुम जिन्दा बचना चाहते हो तथा अपने बच्चे और पत्नी का मुख देखना चाहते हो तो हथियार डालकर आत्मसमर्पण कर दो। तुम चारों ओर से घिर चुके हो, बचने का कोई मौका नहीं है।" पाकिस्तान की पराजय को देखते हुए अमेरिका ने १३ दिसम्बर को अपना सातवां जहाजी बेड़ा हिन्दमहासागर की ओर भेजा था। परन्तु इससे भारतीय जवान विचलित नहीं हुए। पाकिस्तानी सेना को पूर्वी सीमा पर अन्त में निराश होकर आत्म-समर्पण करना पड़ा। ८०-८५ हजार सैनिकों के साथ पाकिस्तानी सेना के ले० जनरल नियाजी ने भारतीय सेना के पूर्वी कमान के कमाण्डर ले० जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा के समक्ष १६ दिसम्बर को आत्म-समर्पण कर दिया। ८०-८५ हजार सैनिकों का आत्म समर्पण इतिहास में एक उदाहरण बन गया। १७ दिसम्बर को पाकिस्तान युद्धविराम के लिए सहमत हो गया। १७ दिसम्बर को युद्ध विराम हो गया। विश्व के मानचित्र से पूर्वी पाकिस्तान का नाम मिट गया। एक नए राष्ट्र बंगलादेश का उदय हुआ। जिस प्रकार राम ने लंका पर विजय प्राप्त कर वहाँ का शासन रावण के भाई विभीषण को दे दिया था उसी प्रकार भारत सरकार ने पूर्वी पाकिस्तान पर विजय प्राप्त

कर वहाँ का शासन देशवंधु शेख मुजीवुर्रहमान को दे दिया ।

ग्रामीणों द्वारा बहिष्कार—मेरे लघु भ्राता श्रीराम, रघुवीर शाव और जगदम्बिका लंगड़ तीर मेले में साथ-साथ जा रहे थे । रास्ते में एक व्यक्ति साफ-सुथरा कपड़ा पहने हुए पानी भर रहा था । सभी की इच्छा हुई कि यहाँ पानी पीकर आगे चलें । उस व्यक्ति से पानी पिलाने के लिए कहा । उस व्यक्ति ने लोटा सफाई से माँजा और पानी कूएँ से निकालकर पीने के लिए दिया । सभी ने हाथ मुंह धोया । किसी ने उससे पूछा 'तुम कौन सी जाति के हो ?' उसने बड़ी ही ईमानदारी से कहा 'मैं हरिजन हूँ ।' रघुवीर शाव ने यह सुनकर झिड़कते हुए कहा कि 'यह चमार है । मैं इसके हाथ का पानी नहीं पीऊँगा ।' मनुष्यता की पुकार और महर्षि दयानन्द सरस्वती के सिद्धान्तों का अनुयायी होने के कारण श्रीराम ने वेधड़क कहा "लाओ मैं पानी पीऊँगा" और उससे लोटा लेकर पानी पी लिया । यदि श्रीराम ने उसके हाथ का जल न पीया होता तो उसे स्वयं पर आत्मग्लानि होती और हरिजन होने पर कोसता ।

गाँव के कुछ अहीरों एवं हरिजनों में झगड़ा हो गया । हमारे लिए अहीर और हरिजन दोनों बराबर हैं । सात-आठ व्यक्ति दोनों वर्ग के अपने यहाँ काम करते हैं । दोनों वर्ग में मारपीट होने के कारण कुछ व्यक्तियों को चोट भी लग गयी थी । दोनों वर्ग के लोग भागकर श्रीराम के पास आए और चोट लगे व्यक्तियों को टाण्डा ले जाने के लिए जीप माँगने लगे । एक ही जीप थी । किसको दिया जाए और किसको न दिया जाए । जिसको नहीं दिया जायगा वही नाराज होगा । अतः श्रीराम ने कह दिया कि आप सभी अपने साधनों से जाएँ । दोनों वर्ग के व्यक्ति अनुनय करने लगे । श्रीराम ने कहा कि सिद्धान्त यह है कि जो कमजोर है, उसकी सहायता करनी चाहिए । परन्तु हमारे लिए दोनों ही बराबर हो इसलिए हम किसी की सहायता नहीं करेंगे । उच्च-वर्ग के व्यक्तियों ने इसका गलत अर्थ लिया और पंचायत करके हम लोगों का बहिष्कार कर

दिया। गायों को चराने न ले जाना, दूध न दुहना, दरवाजे पर चौकीदारी न करना, किसी प्रकार की मुसीबत इन पर आए तो इनका साथ न देना आदि। अन्दर से विरोध करने वाले व्यक्तियों को अच्छा अवसर मिल गया। उन्होंने प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि ये हरिजनों के साथी हैं। हरिजनों के हाथ का पानी पीते हैं। इसी प्रकार की अन्य वातों का प्रचार करने लगें। तीन दिन तक सभी काम वन्द रहा। सिर्फ गंगाजली नाम की गोड़िन आकर बर्तन साफ करती थी। उसे भी सब रोकने का प्रयास करते थे। परन्तु वह सेवा करती रही। उस समय श्रीराम की अवस्था कम थी अतः वह घवड़ा गया। उसने कलकत्ता मेरे पास पत्र लिखा। मैंने उसे पत्र में लिखा, "तुम बिल्कुल मत घवड़ाओ। तुम्हारा कदम विल्कुल ठीक है। सही मार्ग पर चलने पर अनेक बाधाएँ आती हैं, परन्तु वे क्षणिक मात्र होती हैं। कुछ दिन में सब कुछ ठीक हो जायगा। महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र पढ़ो। उन्हें जीवन में कितने संघर्षो का सामना करना पड़ा। सभी लोग उनके विरोधी हो गए थे। लेकिन वे सत्य के मार्ग पर अडिग रहे। अन्त में उनकी विजय हुई, विरोधियों की पराजय हुई। यदि घबड़ाकर वे सत्य मार्ग से विचलित हो जाते तो आज भारत की दशा जीर्ण-शीर्ण होती और भारत पूरा पाकिस्तान बन गया होता। यह तो महर्षि की दया है तथा आर्य-समाज का प्रचार है कि एक खण्ड ही पाकिस्तान बना। इसलिए ठोकरों की परवाह न करते हुए सत्य मार्ग पर चलते रहो। किसी उर्दू शायर ने कहा है—

अपने को क्या गर्ज, जमाना खिलाफ हो।
रास्ता वही चलेंगे, जो कि पाक साफ हो॥

आर्य-समाज की सेवा

आर्य समाजी मैं सन् १९४१ में ही बन गया था। परन्तु उपदेश सुनना ही मुख्य कार्य था। कभी-कभी अधिकारियों के आग्रह पर नाममात्र का आर्थिक सहयोग कर देता था। परन्तु १९७२ में अपने

गाँव पर स्थित विद्यालय का कार्यभार श्री मिश्री लाल जी आर्य को सौंप दिया था। अब वहाँ की चिन्ता से मुक्त हो गया था। अतः बंगाल में आर्य-समाज की सेवा करने का व्रत लिया। उड़ीसा के स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती अधिक अस्वस्थ हो गये थे। उनकी निष्ठा और विश्वास आर्य-समाज, १९ विधान सरणी, कलकत्ता के अधिकारियों पर अधिक थी। उन्होंने आग्रह किया कि गुरुकुल वैदिक-आश्रम, वेदव्यास, राउरकेला का प्रबन्ध आपलोग संभाल लें। अन्यथा यदि किसी पौराणिक व्यक्ति के हाथ में वह गुरुकुल चला जाएगा तो आर्य-समाज को बहुत हानि होगी। श्री पूनम चन्द जी, सुखदेव शर्मा, गजानन्द आर्य, फूलचन्द्र आदि आर्य बन्धुओं के परामर्श से एक कमेटी बनायी गयी, जिसमें ८ व्यक्ति कलकत्ता के और ८ व्यक्ति राउरकेला के थें। स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने मुझे प्रधान बनाने तथा श्री धर्मवीर गुप्ता को मंत्री बनाने का प्रस्ताव रखा। जो कि सर्व सम्मति से पास हो गया। मैं अपने सभी साथियों के सहयोग से गुरुकुल की सेवा करने में समर्थ हुआ। आज भी गुरुकुल की सेवा में लगा हुआ हूँ। स्वामी ब्रह्मानन्द जी रुग्ण होते हुए भी समय-समय पर गुरुकुल की देख-रेख किया करते हैं। उन्होंने अथक परिश्रम से उन हजारों वन जाति के आदिवासियों को पुनः हिन्दू बनाया जो कि प्रलोभन में आकर ईसाई बन गये थे। गुरुकुल तथा पाठशालाओं के माध्यम से आदिवासियों में शिक्षा का प्रचार किया तथा आर्य-समाज का प्रचार करके उन्हें ईसाई होने से बचाया। यह उनकी महान देन है।

समय -समय पर अपने जन्म स्थान पर बनाये श्री राम नारायण हाई-स्कूल का भी काम देखता रहता था। दुर्भाग्यवश कोई योग्य एवं विश्वसनीय व्यक्ति प्रधानाचार्य पद के लिए नहीं मिल पा रहा था। कार्य-वाहक प्रधानाचार्य का कार्य श्री जगत नारायण मिश्र एवं श्री वंशीलाल यादव करते थे। शिक्षा-विभाग के आदेशानुसार श्री ठाकुर प्रसाद दूबे को प्रधानाचार्य पद पर नियुक्त करना पड़ा। गबन के आरोप में ठाकुर प्रसाद को एक वर्ष में ही प्रधानाचार्य के पद से हटाना पड़ा। योग्य प्रधाना-

चार्य के अभाव में स्कूल के अध्यापकों एवं छात्रों में अनुशासनहीनता बढ़ती चली गयी और विद्यालय की प्रगति में बाधा पड़ने लगी।

आर्य-समाज की सेवा में पूर्ण योगदान—आर्य-समाज के वार्षिक उत्सव के समय श्री पूनमचन्द जी आर्थिक सहायता के लिए प्रति वर्ष आते थे। उन्होंने मेरे छोटे भाई श्रीराम को आर्य-समाज कलकत्ता का उपमंत्री बना दिया था। वे मुझे भी कोई अधिकारी पद देने की इच्छा प्रति वर्ष व्यक्त किया करते थे। मैं प्रार्थना करके टाल दिया करता था। तथा उनसे प्रार्थना करता कि हमें आप किसी अधिकारी पद पर न बैठाएँ। इसके अतिरिक्त जो सेवा हमसे संभव हो ले लिया करें। २७ सितम्बर १९७४ को लगभग ३ बजे मैं आर्य-समाज मन्दिर से चला। महात्मा गाँधी मार्गपर पैदल जा रहा था। रघुवीर प्रसाद गुप्ता एण्ड संस की दुकान पर बैठे श्री सोमदेव गुप्ता और दया शंकर जायसवाल ने मुझे बुलाया। कोका-कोला पेय रूप में प्रस्तुत करने के बाद उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट करते हुए कहा कि इस वर्ष हम आपको आर्य-समाज का प्रधान बनाना चाहते हैं। मैंने उत्तर दिया कि मेरे ऊपर बहुत अधिक परिवार तथा गाँव पर स्थित स्कूल का भार है। अतः मुझसे जो सेवा लेना चाहते हैं ले सकते हैं, परन्तु मुझे प्रधान न बनावें। इस पर श्री दयाशंकर ने विनम्र भाव से कहा कि स्वर्गीय श्री हरगोविन्द गुप्ता के बाद से आजतक कोई जायसवाल प्रधान नहीं बना है। इसलिए हमारी इच्छा है कि इस वर्ष किसी जायसवाल को प्रधान बनाया जाए और आप इसके लिए पूर्ण योग्य हैं। उत्तर में मैंने कहा कि आर्य-समाजी व्यक्ति को जातिवाद में नहीं पड़ना चाहिए। यदि जातिवाद का भाव मन में है तो वह सच्चा आर्य-समाजी नहीं है। मैं आपकी बातों पर विचार करूँगा। मैं वहाँ से उठकर चला आया।

२९ सितम्बर १९७४ को मैं प्रातः ९ बजे आर्य समाज मन्दिर पहुँचा ही था कि श्री छबील दास सैनी, सुखदेव शर्मा और पूनम चन्द जी ने मुझे घेर लिया और पुस्तकालय में ले गये। उन्होंने निवेदन किया कि

आप इस वर्ष प्रधान पद स्वीकार करें। अन्त में चुनाव का समय आ गया। प्रधान पद के लिए मेरा नाम प्रस्तावित करते हुए कहा "मैं श्री सीताराम आर्य का नाम प्रधान पद के लिए प्रस्तावित करता हूँ।" श्री छबील दास सैनी भूतपूर्व प्रधान ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया। श्री सोम देव आदि पहले से ही मुझे प्रधान बनाने के उत्सुक थे। सर्वसम्मति से मुझे प्रधान चुन लिया गया। मैं पीछे की पंक्ति में बैठा था। अनेक सभासद मुझे जानते भी नहीं थे। सब ने इच्छा प्रकट की कि नये प्रधान श्री सीताराम आर्य को मंच पर बुलाकर परिचय कराया जाए। मेरा मन भाव-विह्वल हो गया। धन्य है तू महर्षि दयानन्द सरस्वती ! और धन्य है तेरा आर्य-समाज ! यदि मैं आर्य-समाज के सम्पर्क में न आया होता तो क्या संभव था कि मेरे जीवन के प्रथम और द्वितीय भाग को देकर मुझे पवित्र धार्मिक संस्था आर्य-समाज के मंच पर बुलाया जाता। यह महर्षि की कृपा का फल है कि कितना भी नीच कर्म करने वाला व्यक्ति वैदिक सिद्धान्तों को अपनाकर तथा सन्मार्ग पर चलकर समाज में उच्चस्थान प्राप्त कर सकता है। वैदिक सिद्धान्त ही सत्य मार्ग है पौराणिक मतानुयायी जन्मजाति को प्रधानता देते हैं। कर्महीन और आचरणहीन व्यक्ति जन्मजात प्राप्त जाति के अनुसार पूज्य बने रहते हैं। उनकी दृष्टि में सत्यवादी, चरित्रवान् नीच कुल में उत्पन्न व्यक्ति सदा नीच ही है। सभासदों के आग्रह पर मैं मंच पर गया। मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि 'हे ईश्वर ! तू मुझे शक्ति दे। मैं आर्य-समाज की अधिक से अधिक सेवा कर सकूं।' सभासदों का धन्यवाद ज्ञापन करते हुए मैंने कहा कि आप लोगों में से बहुत लोग मुझसे परिचित नहीं हैं। मैं सन् १९४० से कलकत्ता में निवास कर रहा हूँ। पहले मैं आर्य-समाज मलिक बाजार का सदस्य था। १५ अगस्त १९४६ के हिन्दू-मुस्लिम दंगे के बाद दक्षिण कलकत्ता आर्य-समाज का सदस्य रहा। १९५३-५४ से इस आर्य-समाज का सदस्य हूँ। रविवार को सत्संग में आता था और पिछली पंक्ति में बैठकर उपदेशों को सुनकर वापस चला जाता था। समय-समय पर थोड़ा आर्थिक सहयोग कर

देता था। मन में मेरे कभी अधिकारी बनने की इच्छा नहीं थी। आज मुझको प्रधान बनाकर मेरे ऊपर आर्य-समाज का बहुत बड़ा भार सौंप दिया है। मैं आप लोगों से सहयोग की प्रार्थना करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि पिछले भेदभाव को भूलकर कंधे से कंधा मिलाकर समाज की सेवा में लग जाएँगे। जिससे आर्य-समाज का सुन्दर कार्यक्रम प्रस्तुत किया जा सके। जनता का अधिक से अधिक कल्याण हो,।"

आर्य-समाज शताब्दी

प्रसिद्ध इतिहासकार श्री रोम्यांरोला ने आर्य-समाज और उसके प्रवर्तक श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "आर्य-समाज सब मनुष्यों एवं सब देशों के प्रति न्याय और स्त्री-पुरुष की समानता को सिद्धान्त रूप में स्वीकार करता है। यह जन्मना जात-पात का विरोधी है और गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर वर्ण व्यवस्था को मानता है। इस विभाजन से धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। अस्पृश्यता से आर्य समाज को घोर घृणा है। महर्षि दयानन्द हरिजनों के हितैषी थे। उन्होंने हरिजनों के हितों की सबसे अधिक रक्षा की। आर्य-समाज में हरिजनों का प्रवेश समानता के आधार पर होता है। आर्य श्रेष्ठ और उन्नतिशील व्यक्ति को कहते हैं। आर्य कोई जाति नहीं है। स्त्रियों की दयनीय स्थिति सुधारने, समान अधिकार दिलाने और उनकी शिक्षा-रक्षा की उपयुक्त व्यवस्था करने में महर्षि ने बड़ी उदारता और बहादुरी से काम लिया। भारत में उस समय राष्ट्रीय जागरण की लहर चल रही थी। उसमें महर्षि दयानन्द का महत्वपूर्ण योगदान है। उनके द्वारा स्थापित आर्य-समाज ने १९०५ ई० में बंगाल में विप्लव का मार्गदर्शन किया था। ब्रिटिश सरकार का मत था कि महर्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्रीय संगठन एवं पुनर्निर्माण के उत्साही मसीहा थे। राष्ट्रीय जागरण बनाए रखने में उनका प्रमुख हाथ था।

सौ वर्ष पूर्व आर्य-समाज की स्थापना के समय देश की जो हालत थी,

उसकी परिकल्पना भी आज नहीं की जा सकती। सदियों की दासता से देश की आर्थिक स्थिति और सामाजिक-व्यवस्था बुरी तरह चरमरा गयी थी। सात सौ वर्ष तक मुगलों की तथा डेढ़ सौ वर्ष तक अंग्रेजों की गुलामी ने देश को हर क्षेत्र में खोखला कर दिया था। यदि यह स्थिति कुछ वर्षों तक और बनी रहती तो समाज, सभ्यता और संस्कृति की वसीयत के भी चिन्ह समाप्त हो गए होते। जिन्हें हमारे ऋषियों और मुनियों ने सैकड़ों और हजारों वर्षों से सुरक्षित रखा था। १८५७ की क्रान्ति के वाद अंग्रेजों ने अच्छी तरह समझ लिया था कि भारतीयों की शक्ति और साहस का केन्द्र इनकी धार्मिक आस्थाओं से जुड़ा हुआ है। जब तक इनकी जड़ें नहीं हिल जाती तब तक हमारी जड़ें नहीं जम सकतीं। क्रान्ति को दबाने की ओट में अंग्रेजों की क्रूरता पराकाष्ठा पर पहुँच गयी। भारतीयों के मुख पर ताले लगा दिये गये थे तथा कलम तोड़ दी गयीं थीं। धार्मिक और सामाजिक जीवन में भी अंग्रेजों ने हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया था। प्रलोभन के बल पर हिन्दुओं को ईसाई बनाना प्रारम्भ कर दिया। भारतवासी अपने ही धर्म से घृणा करने लगे। मन्दिर और उपासना स्थलों पर अंग्रेजों के गुप्तचर घूमते रहते थे। राजस्थान में अंग्रेजों के पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल ब्रूक्स जब अपना सेवा काल समाप्त करके इंगलैण्ड वापस जा रहे थे, उस समय एक विदाई समारोह का आयोजन किया गया था। उस समारोह में आर्यभक्त मण्डली के सदस्य आग्रह करके महर्षि दयानन्द को भी ले गए। जब उनसे कुछ कहने का अनुरोध किया गया तब महर्षि ने ब्रूक्स से केवल दो बातें कहीं "आप लंदन पहुँच कर महारानी विक्टोरिया से यह कह दें कि यदि भारतीयों के धार्मिक जीवन में शासन इसी तरह हस्तक्षेप करता रहा और गाय जो भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ एवं सांस्कृतिक जीवन का प्रतीक है, उसका वध जारी रहा तो १८५७ की क्रान्ति फिर दोहरायी जाएगी।" महर्षि के इस गम्भीर गर्जन को सुनकर सब अवाक रह गए। कर्नल ब्रूक्स समझ गए कि यह संन्यासी देश की नब्ज पर हाथ रख कर बोल रहा है।

सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात—एक ओर अंग्रेजी शासन अपनी स्थिति सुदृढ करने के लिए नयी-नयी चालें चल रहा था, दूसरी ओर रूढ़ि और अंधविश्वास में फँसा भारत का बहुसंख्यक समाज अपनी आत्महत्या के ताने बाने बुन रहा था। जात-पात और छूआ-छूत घुन बन कर समाज को खाता जा रहा था। महिलाओं को पढ़ाना लिखाना तो दूर रहा गायत्री मन्त्र का उच्चारण करने का अधिकार भी नहीं था। धर्माचार्यों ने 'स्त्री-शूद्रो नाधीयताम्' अर्थात् स्त्री और शूद्र को वेद नहीं पढ़ाना चाहिए, यह व्यवस्था कर रखी थी। बाल विवाह और वृद्ध विवाह पर कोई प्रतिवन्ध नहीं था। विधवा-विवाह तथा पुनर्विवाह की चर्चा तक करना अपराध माना जाता था। शूद्रों को अस्पृश्य समझा जाता था। उन्हें मन्दिरों में प्रवेश करने तक का अधिकार नहीं था। उच्च वर्ग के व्यक्तियों के कुंए से वे पानी नहीं पी सकते थे। आंग्ल शासक इन अंधविश्वासों को और बढ़ावा दे रहे थे। यज्ञ के स्थान पर पशु-वलि, सती-प्रथा जैसी बुराइयाँ शास्त्रों की आड़ में पनप रही थीं। शासन और समाज दोनों गलत मार्ग पर चल रहे थे। इस विषम परिस्थिति में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने समाज सुधार के लिए एक क्रान्तिकारी संगठन की नींव चैत्रशुक्ल प्रतिपदा संवत् १९३१ तदनुसार ७ अप्रैल १८७५ को वम्बई के गिरगाँव मुहल्ले में डाक्टर मानिक चन्द की वाटिका में रखी थी। यह संगठन था 'आर्य-समाज'। उस स्थान पर आज एक भव्य आर्य-मन्दिर है। प्रारम्भ में आर्य-समाज को वेदों और शास्त्रों की आड़ में पनप रही बुराइयों का दुर्ग ध्वस्त करने के लिए विरोधों का सामना करना पड़ा। तथाकथित धर्माचार्यों से शास्त्रार्थ करना पड़ा। स्वयं महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्य और असत्य प्रमाणित करनें के लिए हरिद्वार, काशी, पूना, लाहौर आदि नगरों की यात्रा की और धर्माचार्यों से शास्त्रार्थ किए। हरिद्वार और काशी में हुए शास्त्रार्थ से पौराणिक जगत् में खलवली मच गयी। महर्षि ने सत्य क्या है ? जनता के सामने प्रस्तुत किया।

महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट-मार्ग पर कार्य करते हुए आर्य-समाज ने

अपने सौ वर्ष पूरे किये। बंगाल में बंगाल आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत आर्य-समाज स्थापना शताब्दी समारोह समिति गठित की गयी। जिसके प्रधान श्री पुस्कर लाल, मन्त्री श्री कृष्ण लाल खट्टर चुने गए। बाद में श्री गजानन्द जी प्रधान रहे और समारोह के समय श्री रुलिया राम जी प्रधान थे। श्री मोहन लाल आर्य मन्त्री कोषाध्यक्ष श्री पूनम चन्द आर्य थे सभी सहयोगियों और दानी दाताओं के सहयोग से १२ अप्रैल से १५ अप्रैल १९७५ तक धूम-धाम से समारोह मनाया गया। समारोह के स्वागताध्यक्ष श्री लालमन आर्य थे। समारोह स्वामी सत्यप्रकाशजी सरस्वती की अध्यक्षता में मनाया गया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य-समाज शताब्दी का एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन दिनांक २४ दिसम्बर से २८ दिसम्बर १९७५ तक मनाने का निर्णय किया था। बंगाल के सभी आर्य बन्धुओं को इसकी सूचना दी गयी। आर्य बन्धुओं में उत्साह था। रेलवे की एक बोगी शयनयान दिल्ली के लिए रिजर्व करायी गयी। श्री पूनम चन्द के नेतृत्व में पूरा जत्था २४ दिसम्बर को प्रातः दिल्ली पहुँच गया। मैं तीस व्यक्तियों के साथ कैपिटल होटल में रुका था। अन्य व्यक्ति अपनी सुविधा के अनुसार रुके थे।

ऐतिहासिक जुलूस की शोभा-यात्रा : दिल्ली के सभी रिकार्ड भंग— दिनांक २५ दिसम्बर हम सभी अपने बैनर और झण्डों को सजाकर शोभा यात्रा के लिए तैयार हुए। देश और विदेश से आए लाखों नर-नारी प्रातः-काल से तैयारी में व्यस्त थे। झण्डों और बैनरों से दल को सजाने में व्यस्त थे। हम लोगों को मीलों पीछे शोभा यात्रा में खड़ा होना पड़ा। हमारे पीछे भी मीलों लम्बी कतारें लगी हुई थीं। आर्य-समाज अमर रहे, महर्षि दयानन्द की जय, स्वामी श्रद्धानन्द की जय, स्वामी विरजानन्द की जय, आदि नारों के उद्घोष से दिल्ली गूंजने लगी। सभी आर्य-समाजियों के मस्तक पर केसरिया टोपी थी। जिस पर लिखा हुआ था—'आर्य-समाज

शताब्दी समारोह'। १२ बजे शोभा-यात्रा प्रारम्भ हुई। अपने बैनर को हाथ में लिए भजन गाते हुए पंक्तिबद्ध रूप में देश के दूर-दराज से आये श्रद्धालु चल पड़े। शोभा-यात्रा में सबसे आगे कन्या गुरुकुल, बड़ौदा की बालिकाएँ घोड़े पर सवार होकर हाथ में नंगी तलवार लिए चल रही थीं। उसके पीछे गुरुकुलों और विद्यालयों से आए बालक बैण्ड बाजे के साथ चल रहे थे। पंजाब हरियाणा से आई हुयी देवियों का जलूस बहुत आकर्षक था। वे मस्ती के साथ भजन गाती जा रही थीं। शोभा-यात्रा इरविन रोड, खड्गसिंह मार्ग से प्रारम्भ होकर, कनाट प्लेस, मिन्टो रोड, थामसन रोड, अजमेरी गेट, नई सड़क, चाँदनी चौक, नेताजी सुभाष चन्द्र रोड, दरियागंज, दिल्ली गेट, जवाहरलाल नेहरू मार्ग होता हुआ रामलीला मैदान सायंकाल साढ़े पाँच बजे पहुँचा। मार्ग में सैकड़ों द्वार सजाए हुए थे। अजमेरी गेट से चाँदनी चौक तक का मार्ग चमकीले कागज के फूलों और सुगन्धित वस्तुओं से सजाया गया था। चाँदनी चौक में सड़क के दोनों ओर तथा आसपास के मकानों पर सुरक्षा के लिए पुलिस तैनात की गयी थी। इस स्थल पर स्वामी श्रद्धानन्द को छुरा मारा गया था। महर्षि के दीवानों को भूख-प्यास, धूप-गर्मी किसी की परवाह नहीं थी। महर्षि के गुणों को गाते हुए चलते चले जा रहे थे। कभी समाप्त न होने वाली शोभा यात्रा चली जा रही थी। दिल्ली के हर नागरिक के मुख से यही शब्द सुनाई पड़ते थे कि आज तक ऐसी विशाल शोभायात्रा दिल्ली में नहीं देखी और न सुनी। हजारों की संख्या में फोटोग्राफर इस ऐतिहासिक शोभायात्रा के अभूतपूर्व अनोखे दृश्य को अपने कैमरों में बन्द करने के लिए इधर से उधर दौड़ रहे थे। सुन्दर से सुन्दर दृश्य अपने कैमरे में बन्द करने की उनमें होड़ लगी हुई थी। भारत में आठ करोड़ आर्य-समाजी हैं तथा २० लाख आर्य-समाजी विदेशों में, इस तथ्य को लोग स्वीकार नहीं करते थे। परन्तु आज उन्होंने स्वीकार किया कि इनकी संख्या इससे भी अधिक हो सकती है।

सम्मेलन में भाग लेने के लिए मारीशस, फिजी, केन्या, युगाडा,

तंजानिया, दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका, वर्मा, सिंगापुर, अदन, ब्रिटेन, अमेरिका, सूरीनाम एवं अरब देशों से भी आर्य प्रतिनिधि आये थे।

इस शोभा-यात्रा की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि मार्ग में शोभा-यात्रा गिरजाघर के सामने से निकली तो वहाँ के पादरी ने फूलमाला, शरबत, पेय आदि से स्वागत किया। गुरुद्वारा के सामने से निकली तो सिक्खों ने सत श्री अकाल के नारे लगाकर स्वागत किया। जैन मन्दिर में सामने से निकला तो जैनियों ने हर्ष ध्वनि करके स्वागत किया। जब शोभा-यात्रा जामा-मस्जिद के पास पहुँची तब मुसलमानों के धार्मिक नेता सैयद अबदुल्ला बुखारी ने अपने साथियों सहित आर्य-नेताओं के प्रधान श्री लाला राम गोपाल शालवाले, मंत्री श्री ओम प्रकाश त्यागी आदि नेताओं का फूल-माला से लाद कर स्वागत किया। विदेशियों के लिए यह अभूतपूर्व और अनोखा दृश्य था। उनमें प्रसन्नता थी कि महर्षि दयानन्द के आर्य-समाज ने आज उन्हें उनके पूर्वजों का जन्म स्थान दिखा दिया। जहाँ से संस्कृति का प्रचार और प्रसार हुआ था।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने उत्तम व्यवस्था की थी। सराहनीय कार्य किया था दिल्ली के आर्य वन्धुओं ने, जिन्होंने बाहर से आये हजारों और लाखों आर्य-वन्धुओं के आवास, भोजन आदि की व्यवस्था की। दिन-रात उनकी सेवा में लगे रहे। दिल्ली में इतनी भीड़ किसी विज्ञापन या प्रयत्न के बाद नहीं एकत्रित हुई थी। अपितु सभी-आर्य-वन्धु अपनी श्रद्धा से इस सम्मेलन को सफल बनाने के लिए एकत्रित हुए थे। वर्षों से उनकी अभिलाषा थी कि वे इस सम्मेलन में सम्मिलित हों। वे अपने स्वप्न को साकार करने के लिए आये थे।

दिनांक २७ दिसम्बर १९७५। प्रातः साढ़े १० बजे से साढ़े बारह बजे दोपहर तक विश्व धर्म सम्मेलन का कार्यक्रम था। भारत के राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद मुख्य-अतिथि थे। विशाल पण्डाल खचाखच भरा हुआ था। हजारों की संख्या में पण्डाल के बाहर भी लोग दूर

तक लगे लाउडस्पीकर के माध्यम से सुन रहे थे। राष्ट्रपति आज मुख्य अतिथि थे इसलिए पुलिस की अधिक व्यवस्था थी। मैं तथा मेरे साथी अगली पंक्ति में बैठ कर कार्यक्रम सुन रहे थे। सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों तथा देश और विदेश के विद्वानों को बुलाकर मंच पर बैठाया गया था। मुझे आज बहुत दुःख था कि बंगाल के पण्डित उमाकान्त जी और श्री प्रियदर्शन सिद्धान्तभूषण जी को नहीं बुलाया गया। ये दोनों व्यक्ति मेरे पास बैठे थे। बंगाल प्रतिनिधि सभा ने आर्य-समाज कलकत्ता से निरर्थक द्वेष करके आज अशोभनीय कार्य किया था। बंगाल आर्य प्रतिनिधि सभा के वरिष्ठ अधिकारी श्री बटुक कृष्ण बर्मन मंच पर बैठे थे। पं० उमाकान्त जी और प्रियदर्शन जी आर्य-समाज के प्राण हैं। इसके माध्यम से आर्य-समाज कलकत्ता का बड़ा से बड़ा कार्यक्रम सफल होता है। पूरा सम्मेलन समाप्त होने के बाद प्रसन्नता के साथ हम लोग पूरे जत्थे के साथ कलकत्ता वापस आ गए। इसके पूर्व हम सबने विदेशों से आये प्रतिनिधियों को कलकत्ता आने का आमंत्रण दिया।

मारीशस, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम आदि देशों के चार-पाँच दल कलकत्ता घूमने के लिए पहुँचे। विदेशी आर्य-बन्धुओं की सेवा करने का कलकत्ता आर्य-समाज को सुयोग प्राप्त हुआ। आर्य-समाज में उनके आवास और भोजन की व्यवस्था की गयी। समाज में उनका स्वागत किया गया। आर्य कन्या महाविद्यालय के सचिव श्री सुखदेव शर्मा ने आर्य कन्या महाविद्यालय की बसों से कलकत्ता शहर का अवलोकन कराया। विदेश लौटते समय उन्होंने आर्य-समाज कलकत्ता की प्रशंसा करते हुए कहा कि हम सबकी इतनी सेवा किसी और आर्य समाज ने नहीं की।

अध्याय—९

विदेश-यात्रा

'आर्य-समाज स्थापना-शताब्दी-समारोह' में हजारों विदेशी आर्य-बन्धुओं को देखकर मन में इच्छा जागृत हुई कि हमें भी एक टोली बना कर विदेश घूमने और आर्य-समाज का प्रचार करने के लिए विदेश यात्रा का कार्यक्रम बनाना चाहिये। आर्य-बन्धुओं की एक गोष्ठी विचारार्थ बुलाई गयी। गोष्ठी में यह निर्णय लिया गया कि यूरोप, अमेरिका, कनाडा का भ्रमण किया जाए। अपने साथ आर्य-समाज के प्रचारार्थ आर्य-साहित्य अंग्रेजी में तैयार करा कर ले जाएँ। कुछ आर्य-साहित्य अंग्रेजी में तैयार था। श्री कृष्ण के ऊपर एक टेक्स्ट अंग्रेजी में लिखने का भार श्री पं० उमाकान्त को दिया गया। आर्य समाज और उसके उद्देश्य पर एक टेक्स्ट अंग्रेजी में लिखने का भार डा० कपिल देव द्विवेदी, ज्ञानपुर (वाराणसी) को दिया गया। श्री मोहन लाल आर्य को टी० सी० आई० से मिलकर यात्रा, आवास और भोजन आदि की व्यवस्था का भार दिया गया। पासपोर्ट बनने लगा, अन्य तैयारियाँ प्रारम्भ हो गयीं। विदेशों में स्थित आर्य-समाजों को कार्यक्रम की सूचना दी गयी। पोप जान पाल को भी पत्र लिखा गया कि हम अपनी यात्रा में आपसे धर्म के सम्बन्ध में वार्तालाप करना चाहते हैं।

यूरोप और अमेरिका यात्रा

दिनांक १० जुलाई १९७६। आर्य-समाज कलकत्ता के तत्वावधान में अपने निजी व्यय पर २० व्यक्तियों का एक दल यूरोप और अमेरिका यात्रा के लिए जाने को तैयार हुआ। इस दल में थे—सर्वश्री पं० उमा-कान्त जी, डा० कपिलदेव द्विवेदी, श्री लालमन आर्य, श्री मोहन लाल

आर्य, श्री पुष्कर लाल आर्य, श्री जगदीश तिवारी, श्री अलगूराम वर्मा, श्री विमल भूषण गुप्ता, श्री राजदेव शर्मा, श्री बनारसी लाल, श्री अमी देव हल्दार, श्री सत्य नारायण अग्रवाल, श्री राधे श्याम तुलस्यान, श्री राजेन्द्र प्रसाद शाही, श्री मुरारी लाल गोयल, श्री राम मंगल सिंह, श्री मदन सेन गुप्ता, श्री जनक लाल गुप्ता, श्रीमती वीना गुप्ता तथा मैं। दल बम्बई के लिए हावड़ा-बम्बई मेल (वाया-इलाहाबाद) से प्रस्थान करने के लिए स्टेशन पहुँचा। स्टेशन पर परिवार के सदस्य, मित्र मण्डली तथा सैकड़ों आर्य-बन्धु विदाई देने के लिए आये थे। फूल-मालाओं से लाद कर भावभीनी विदाई दी तथा यात्रा के लिए शुभकानाएँ व्यक्त कीं। हम सभी इष्ट मित्रों की शुभकामनाएँ स्वीकार कर विदाई लेते हुए यात्रा पर चल पड़े। दल के सदस्यों में उत्साह और प्रसन्नता का वातावरण था। मेरी यह प्रथम विदेश यात्रा थी। मन उल्लास और उत्साह से पूर्ण था। ट्रेन जिस स्टेशन पर रुकती थी, वहाँ के आर्य-बन्धु फूल-मालाओं से हम सबका स्वागत करते थे तथा अपनी शुभकामनाएँ प्रकट करते थे। ११ जुलाई को प्रातः ९ बजे ट्रेन इलाहाबाद पहुँची। इलाहाबाद स्टेशन पर आर्य कन्या इण्टर कालेज के प्रबन्धक श्री राजेन्द्र नारायण गुप्त के नेतृत्व में सैकड़ों आर्य-बन्धु स्त्री और पुरुष दल के स्वागतार्थ पहुँचे हुए थे। ट्रेन के प्लेटफार्म पर पहुँचते ही 'आर्य-समाज अमर रहे' और 'महर्षि दयानन्द की जय' के नारों से आकाश गूंज उठा। दल के सदस्यों का बड़े ही उत्साह से स्वागत किया गया। इलाहाबाद में ट्रेन दो घंटा रुकी। स्टेशन पर हम सभी के भोजन को सुन्दर व्यवस्था की गयी थी। विदेशों में बाँटने के लिए अपना कुछ साहित्य हम लोगों को दिया। ११ बजे ट्रेन रवाना हुई। 'महर्षि दयानन्द की जय' और 'आर्य समाज अमर रहे' के नारों के उद्घोष के साथ अपनी शुभकामनाएँ देते हुए आर्य-बन्धुओं ने हम लोगों को विदाई दी। इलाहाबाद के दैनिक समाचार पत्र में इस भव्य स्वागत का समाचार प्रकाशित हुआ था।

दिनांक १२ जुलाई। दोपहर १२ बजे बम्बई वी० टी० स्टेशन पहुँचे।

स्टेशन पर श्री पूनम चन्द जी, श्री गोयल जी, श्री अमीन जी और श्री सत्यप्रकाश जी तथा फोर्ड आर्य-समाज के सदस्यों ने फूल-मालाओं से सभी सदस्यों का स्वागत किया। फोटो भी खीचे गये। श्री सत्य प्रकाश जी एवं श्री रामरक्षपाल जी अपने साथ सभी सदस्यों को अपने यहाँ मालावार हिल पर अरुणा विल्डिग में ले गये। दल के सभी सदस्य यहीं रुके। भोजन और आवास की व्यवस्था उत्तम थी। सायंकाल टी० सी० आई० के अधिकारी ने कहा कि स्विटजरलैण्ड, इंग्लैण्ड, इटली और फ्रांस में हम आवास, भोजन और भ्रमण की व्यवस्था करेंगे। अमेरिका और कनाडा में भोजन की व्यवस्था हम नहीं करेंगे। आवास और भ्रमण की ही व्यवस्था हम करेंगे। भोजन की व्यवस्था स्वयं आपको करनी होगी। कारण पूछने पर उसने कहा कि हमारे एजेन्ट का पत्र आया है कि भारतीय भोजन अधिक करते हैं अतः यात्रियों से झगड़ा होने की नौबत आ जाती है। आप भोजन की जिम्मेदारी न लें। टी० सी० आई० के अधिकारियों ने यह बात पहले नहीं बतायी थी। विदेश जाने की धुन थी अतः अन्त में समझौता करना पड़ा। अन्त में उन्होंने अमेरिका और कनाडा में १५ दिन के भोजन के लिए १०० डालर दिये। १३ ता० को सायंकाल प्रेसिडेन्ट होटल में टी० सी० आई० के अधिकारियों ने एक मिटिंग बुला रखी थी। अधिकारियों ने सभी सदस्यों को पासपोर्ट टिकट आदि देकर यात्रा के सम्बन्ध में कुछ जानकारी दी।

फोर्ड आर्य-समाज ने सायंकाल दल के सदस्यों का स्वागत-समारोह रखा था। उन्होंने दल का स्वागत करते हुए कहा कि बम्बई वालों को यह कार्य पहले करना चाहिए था। हम यह कार्य न कर सके। कलकत्ता आर्य-समाज पहला दल प्रचारार्थ ले जा रहा है। ये सभी बधाई के पात्र हैं। हम सबकी ओर से पं० उमाकान्त जी, डा० कपिलदेव द्विवेदी जी और मैंने धन्यवाद ज्ञापन किया।

दिनांक १४ जुलाई। आज जिनेवा प्रस्थान करना था। अतः प्रातः ४ बजे अरुणा विल्डिग से शान्ताक्रुज के लिए टैक्सी से प्रस्थान किया।

५ बजे शान्ताक्रुज पहुँच गए। हवाई अड्डे पर ३७ यात्री और एक गाइड का दल बना। हमारे दल के २० व्यक्तियों के अतिरिक्त १७ व्यक्ति बंगाल, मद्रास, वाराणसी और बम्बई के थे। सभी यात्रियों में उत्साह था। बोइंग ७०७ से हवाई यात्रा प्रारम्भ हुई। बम्बई से जिनेवा ४८४० मील की दूरी ९ घण्टा ४५ मिनट में पूरी की जाती है। कैरों में इन्जन में कुछ खराबी आ जाने के कारण ५ घण्टा कैरो एयरपोर्ट पर रुकना पड़ा। अतः यात्रा में १५ घण्टे लग गये। अरब सागर, फारस की खाड़ी, अरब का रेगिस्तान, लाल सागर और स्वेज नहर के ऊपर से होते हुए कैरों भारतीय समयानुसार २–१५ पर पहुँचे। कैरो की घड़ी में उस समय प्रातः के १०-४५ बज रहे थे। कैरो अरब गणराज्य में मुस्लिम प्रधान देश है। वहाँ की भाषा अरबी, फारसी, होने के कारण हम लोग नहीं समझ पाते थे। हिन्दी, अंग्रेजी वे लोग नहीं समझते थे। एयर इण्डिया के प्रतिनिधि के माध्यम से जलपान की स्टाल पर पहुँचे। प्रायः सभी चीजों में माँस और अण्डा पड़ा हुआ था। मेरी इच्छा चाय या फल का रस पीने तक को नहीं हुई। कुछ व्यक्तियों ने चाय या फलों का रस लिया। कैरो एयरपोर्ट सुन्दर बना है इसका मुख्य भवन १२ मन्जिला है। कैरो से जिनेवा के लिए भारतीय समयानुसार सायं ७-५ पर प्रस्थान किया। उस समय कैरो की घड़ी में ३-३५ समय था। १८६० मील की यात्रा ४ घण्टा १० मिनट में पूरी होनी थी। ३१ हजार फीट की ऊँचाई पर जहाज जा रहा था। गति ५०० मील प्रति घंटा थी। भूमध्य सागर के ऊपर से निकले। स्थान स्थान पर वादलों का ढेर था। वर्फीले पहाड़ ऊपर से दिखने में छोटे लग रहे थे। भारतीय समयानुसार रात्रि ११ बजे (जिनेवा समय सायं ६-३०) पर जिनेवा पहुँचे। एयरपोर्ट पर हवाई जहाज से उतर कर अण्डर ग्राउन्ड और पट्टेदार सीढ़ी पर खड़े हो गए। कुछ समय वाद उससे निश्चित स्थान पहुँच गए। सभी ने चक्केदार घूमती हुई मशीन पर रक्खे अपने सूटकेस उठाए। पं० उमाकान्त जी का सूटकेस नहीं मिल रहा था। उसका कवर मशीन में फँसकर फटकर निकल गया था। बार-बार एक सूटकेस सामने

घूमकर आता था। उसी को उठाकर देखा गया। वह सूटकेस पण्डित जी का ही था। जिनेवा में रात १० बजे तक उजाला रहता है। होटल डी-ला-प्लीना-हैनरी डुनाट सिकन्ड जिनेवा में सभी यात्रियों के आवास की व्यवस्था थी।

जिनेवा १५ जुलाई। प्रातः ४ बजे घूमने के लिए निकले। सभी दुकानें बन्द थीं। शीशे के शो-केस में घड़ियों का ढेर लगा दिखाई दिया। सभी सामान दुकान का बाहर से साफ दिखाई दे रहा था। कोई पहरेदार नहीं था। साथियों ने कहा कि यदि कलकत्ता में इस प्रकार दुकान छोड़कर चले जाएँ तो शीशा तोड़कर लाखों की घड़ियाँ तुरन्त उठा ले जाएँ। दुकान के सामने सामान सप्लाई करने वाले रात में ३ बजे प्लास्टिक के बैग में सामान रखकर चले गये थे। दुकानदार प्रातः दुकान खोलकर सामान उठा लेते हैं। घूमकर वापस लौटकर जलपान किया। जिनेवा शहर देखने के लिए निकले। राष्ट्रसंघ का भवन देखा इसमें ३५००० कर्मचारी काम करते हैं। बोटेनिकल गार्डेन, कालेज आफ होटल मैनेजमेन्ट, इण्टरनेशनल रेडक्रास का आफिस, इण्टरनेशनल लेबर आर्गेनाइजेशन का १५ मंजिला विशाल भवन, वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन का भवन, एरियाना पार्क, सेंट पीटर चर्च तथा पुराना जिनेवा शहर देखा। जिनेवा शहर को सीटी आफ पार्क कहा जाता है। चारों ओर हरियाली है। सुन्दर पार्क चारों ओर दिखायी पड़ते हैं। फूलों का सौन्दर्य दर्शनीय है। यहाँ की विशाल झील और उसके बीच बना फव्वारा अद्भुत है। झील की लम्बाई ६० मील और चौड़ाई १६ मील तथा गहराई इतनी अधिक है कि छोटे-छोटे जहाज आसानी से चलते रहते हैं। फव्वारा ४०० फीट ऊँचा है। जिसकी फुहार चारों ओर फैलती रहती है। यहाँ की फूल घड़ी दर्शनीय है। फूलों द्वारा चिन्ह बने हुए हैं। घड़ी सही समय बताती है। मोरागों पार्क बहुत सुन्दर है। जिनेवा की भाषा फ्रेंच है अंग्रेजी तथा फ्रेंच मिली हुई बोलते हैं। शुद्ध अंग्रेजी बोलने वाले बहुत कम हैं।

१६ जुलाई प्रातः ८ बजे मैं होटल के कमरे में बैठा हुआ था। सब साथी जलपान करने चले गए थे। दरवाजे पर एक सुन्दर साढ़े पाँच फीट लम्बी २५-२६ वर्ष की नवयुवती हाथ में झाड़ू लेकर आयी, अंग्रेजी में कहा आप बाहर आ जाइए। मैं लैटरीन बाथरूम आदि की सफाई करूँगी। मैं बाहर चला आया। वह अन्दर गयी और उसने बाथरूम आदि की सफाई की तथा बिस्तरे की चादर आदि बदली। कमरे की सफाई करके वह चली गयी होटल के कमरे की एक मास्टर चाभी रहती है, जिससे वे प्रायः यात्रियों के बाहर चले जाने के बाद कमरे में ताला खोलकर कमरे की सफाई करके बिस्तर आदि बदल देते हैं। सामान सुरक्षित पड़ा रहता है। किसी भी प्रकार की चोरी की आशंका तक नहीं रहती। वहाँ ईमानदारी बहुत है।

शिमनी—आज शिमनी की यात्रा थी। शिमनी फ्रान्स राज्य में हिल स्टेशन है। यह स्थान जिनेवा से ६० मील दूर है। चारों ओर पहाड़ों से घिरा हुआ है। १० बजे शिमनी के लिए प्रस्थान किया। फ्रांस की सीमा पर पासपोर्ट आदि की जाँच हुई। फ्रान्स की सीमा में प्रवेश करने के बाद मार्ग में मो-ब्लां (माउन्ट ब्लाक) पर्वत श्रेणियाँ पड़ीं। यह पर्वत १४ हजार फीट ऊँचा है। यह ऊपर से नीचे तक बर्फ से ढका रहता है। इसकी दो-तीन चोटियाँ १३-१४ हजार फीट ऊँची हैं। शिमनी सुन्दर हिल स्टेशन है। यहाँ हजारों की संख्या में लोग कार से घूमने आये हुए थे। यहाँ संसार का सबसे ऊँचा केवुल स्टेशन है। चोटी पर जाने के लिए रोप-वे (Rope-Way) है। चोटी की ऊँचाई १२ हजार फीट है। रोप-वे से जाने का एक फ्रेंक (५ रुपया) लगता है। बस ड्राइवर पार्क में छोड़कर चला गया। वह कह गया था कि 'मैं ठीक एक बजे आऊँगा। आप सभी यहाँ मिलिएगा।' सभी लोगों ने अपना भोजन निकाल कर किया। पीने का पानी कहीं दिखायी नहीं पड़ रहा था। पानी पूछने पर लोग हँसते थे। क्योंकि यहाँ पर कोई पानी नहीं पीता है। फल का जूस, चाय, बियर आदि भोजन के बाद पीते हैं। सादा पानी केवल सफाई आदि के काम

आता है। पं० उमाकान्त जी पानी की खोज में चारों ओर गये और उन्होंने आकर बताया कि निकट ही एक बंगले की पुष्प वाटिका में शेर की मूर्ति बनी है उसके मुख से पानी निकल रहा है। जिससे क्यारियों की सिंचाई हो रही है। सभी साथियों ने वहाँ जाकर जल ग्रहण कर अपनी प्यास शान्त की। ठीक एक बजे बस आ गयी और सभी यात्री बैठ गये। ड्राइवर ने गिनती करके बताया कि एक यात्री कम हो रहा है। सभी अपने साथियों को देखने लगे। वाराणसी के एक सरदार नवयुवक ने बताया कि उसका साथी दर्शन सिंह पशलीचा अभी नहीं आया है। वह रोप-वे से पहाड़ी पर चला गया था। बस ड्राइवर रुकने को तैयार नहीं हुआ। उसने एक चक्कर लगाते हुए कहा कि देखिए कहीं खड़ा होगा तो उठा लेंगे। बस ड्राईवर और रुकने को तैयार नहीं हुआ। वह जिनेवा चला आया। सभी पश्चात्ताप कर रहे थे कि वह कैसे आयेगा ? हम सब होटल पहुँच कर चाय पी रहे थे तब तक पशलीचा पहुँच गया। वह हल्ला मचाने लगा कि आप लोग मुझे छोड़ कर चले आये। उसे समझाया गया कि बस ड्राइवर नहीं माना तब वह शान्त हुआ। उससे पूछा गया 'तुम कैसे आए ?' उसने कहा कि एक नवयुवती अकेले कार से आ रही थी, मैंने उसे रोक कर निवेदन किया कि 'मैं जिनेवा जाना चाहता हूँ।' उसने कार में पीछे की सीट पर बैठा लिया और मुझे होटल छोड़ गयी। धन्य ! वह लड़की और उसकी सभ्यता। एक अपरिचित व्यक्ति को अपनी कार में बैठाकर होटल पहुँचाकर चली गयी हमारे भारत वर्ष में इस विचारधारा के व्यक्ति बहुत कम हैं।

सायंकाल भोजन करने बैठे थे, उस समय होटल का नवयुवक जोर से चिल्लाकर सामने बैठी नवयुवती की ओर संकेत करता हुआ कह रहा था कि आप लोग ठीक समय भोजन कर लिया करें। कल रात मेरी पत्नी गुस्सा कर रही थी। प्रातः जिसे मैं मेहतरानी समझ रहा था वह होटल की मालकिन थी। दो भाई होटल चलाते हैं। दोनों स्वयं बैरे का काम

करते हैं। बड़े की पत्नी यात्रियों के लिए भोजन, जलपान आदि बनाती है। छोटे की पत्नी पाँच मंजिला होटल की सफाई, कमरों की सफाई करती हैं तथा चादर, तकिया आदि साफ करती है। एक बूढ़ी औरत काउन्टर का काम देखती है। कितने परिश्रमी हैं ये सब। पाँच व्यक्ति पाँच मंजिला होटल, बार और रेस्टोरेन्ट चलाते हैं। भारतीय इतना परिश्रम कभी नहीं करते। निर्धन व्यक्ति अभाव में चाहे जितना परिश्रम करता हो परन्तु धनी व्यक्ति अपना भोजन आदि स्वयं नहीं पकाते। अन्य व्यक्तियों द्वारा भोजन बनवाते हैं। मुझे इन लोगों के परिश्रम को देखकर शिक्षा प्राप्त हुई कि मनुष्य को परिश्रमी होना चाहिए।

सायंकाल ४ बजे 'हरेकृष्ण हरेराम' के मन्दिर में गया। श्री कृष्ण की मूर्ति के सामने स्त्री-पुरुष कीर्तन करके मस्ती से झूम रहे थे। स्त्रियां साड़ी पहने हुए थीं और पुरुषों ने धोती पहन रखी थी। पं० उमाकान्त जी ने कहा कि श्री कृष्ण के जीवन के विषय में हम आपसे कुछ बात करना चाहते हैं तथा आपको कुछ साहित्य देना चाहते हैं। उनके महंत ने इशारे से बैठ जाने के लिए कहा। पूजा समाप्त हो जाने के बाद उन्होंने कहा कि हमारे गुरु का आदेश है कि दूसरे का साहित्य कभी न लें। भागवत पुराण के विषय में कुछ बातें कहीं। जिस प्रकार भारत में इनके मतानुयायी श्रीकृष्ण के प्रति मनगढ़न्त भावनाएँ रखते हैं, वही भावनाएँ उन लोगों की भी हैं। १५ मिनट तक वार्तालाप हुआ। एक व्यक्ति ने प्रसाद के रूप में हलुआ और पूड़ी लाकर दी। इसी बीच एक व्यक्ति ने आकर कहा कि 'आप हमारा समय बरबाद न करें। आप सब जाएँ। अब हम नृत्य करेंगे।' मैंने मन में कहा कि भक्ति के विना कुछ नहीं होता। नवयुवकों तथा नवयुवतियों को मनोरंजन करने के लिए रासलीला लीला के रूप में यह अच्छा साधन मिल गया है। अतः नवयुवक और युवतियाँ यहाँ आते हैं। मन में संतोष था कि ये नास्तिकता से आस्तिकता की ओर अग्रसर हैं। कभी आर्य बन सकते हैं।

जिनेवा में आर्य-समाज की स्थापना

यहाँ पर अपने देश के हिमाचल प्रदेश निवासी श्री जय-सी-राम शाद तथा एक अन्य भारतीय नवयुवक श्री राजकुमार भारतीय दूतावास में अधिकारी पद पर कार्यरत थे। उनके पिता आर्य-समाजी विचारधारा के थे। उनसे विचार विमर्श के बाद हम सभी उनके निवास स्थान पर गए। वहाँ यज्ञ के पश्चात् आर्य-समाज की स्थापना की गयी। उन्हें सत्यार्थ प्रकाश तथा कर्मकाण्ड आदि साहित्य दिया गया। आर्य-समाज को चलाते रहने का आग्रह किया गया। उन्होंने बहुत ही स्वादिष्ट हलुआ बना कर प्रसाद रूप में वितरित किया।

लन्दन १७ जुलाई। सायंकाल ८-२० पर वायुयान द्वारा लन्दन के लिए रवाना हुए। रात्रि ९-४० पर लन्दन के हीथ्रो हवाई अड्डे पहुँचे। हवाई अड्डा देखकर आश्चर्य चकित रह गया। हवाई अड्डा बहुत विशाल था। हजारों की संख्या में कारें खड़ी हुई थीं। कार पार्किंग के लिए आठ मंजिला विशाल भवन था। बस से मार्डिस कोर्ट होटल, होगार्थ रोड, लन्दन, एस डब्लू–१ पहुँचे। मैं, डा० कपिल देव द्विवेदी, श्री अलगूराम वर्मा एक साथ एक ही कमरे में रुके। टी० सी० आई० के एजेन्ट ने श्री हट्टा नामक भोजनालय में भोजन की व्यवस्था कर दी थी। भारतीय ढंग के अनुसार अपनी पसन्द का शुद्ध भोजन मिलता था। प्रातः जलपान के बाद मन में प्रबल इच्छा जागृत हुई कि १० नम्बर डाउनिंग स्ट्रीट चल कर पार्लियामेंट हाउस देखा जाए। जहाँ क्रान्तिकारी नेता उधमसिंह ने मिस्टर डायर को गोली मार कर उनकी हत्या की थी। डायर ने जलियांवाला बाग में हजारों व्यक्तियों को गोलियों से भून दिया था। पार्लियामेन्ट देखने गए। साथ ही टैम्स नदी के नीचे से जाने वाली सुरंग देखी। जिसको बनाने में हजारों व्यक्ति काल के मुख में चले गए। टैम्स नदी पर जगह-जगह हैंगिंग ब्रिज बने हुए हैं। नदी की चौड़ाई १५० फीट है। लंदन के प्रमुख स्थल पार्लियामेंट हाउस, आर्ट गैलरी, पार्लियामेंट स्क्वायर, लंदन टावर, सबसे ऊँचा, लंदन

का विक्टोरिया टावर, आर्क विशप का मकान, ओल्ड टावर, वेस्ट मिनिस्टर ऐ वे, २२२ फीट ऊँचा मौनुमेंट ऑफ लंदन, ३६५ फीट ऊँचा हार्ट ऑफ लन्दन, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी आदि प्रमुख दर्शनीय स्थल देखे।

सायंकाल विण्डसर कैसिल देखने गए। यह स्थान लंदन से २५ मील दूर है। यह दर्शनीय स्थल है। तीन स्थानों पर २५ पैन्स के टिकट खरीदने पड़े। यहाँ जर्मनी फ्राँस आदि देशों से बहुत से लोग इस दर्शनीय स्थल को देखने आए थे। यहाँ बस टैम्स नदी के नीचे बनी सुरंग से होकर आयी थी। ऊपर नदी बहती है। नीचे सुरंग में सड़क बनायी गयी है। कारीगरी का अनोखा नमूना है। चैपल में लंदन के सभी राजा और रानियों की समाधि है। सभी समाधियों में वे संगमरमर की मूर्ति द्वारा सजीव रूप में सुलाए हुए हैं।

लंदन में चेंजिग ऑफ गार्डस् का दृश्य अत्यन्त मनोरम था। हजारों की संख्या में भीड़ इस दृश्य को देखने के लिए खड़ी रहती है। बीस वर्षों से लंदन में रह रहे अपने मित्र श्री जोगेन्दर सिह से मिलने के लिए मेट्रो से उनके निवास स्थान ईलिंग वेस्ट–५ गये। साथ में डा० कपिलदेव द्विवेदी, अलगूराम और पं० उमाकान्त जी भी थे। मेट्रो की व्यवस्था सुन्दर थी। पैसा डालकर टिकट लेना। मशीन द्वारा टिकट की चेकिंग करने के बाद अन्दर प्लेटफार्म पर जाना अजीब व्यवस्था है। लिफ्ट से ३ तल्ला नीचे स्टेशन पर जाते हैं। यह सब जीवन में पहली बार देखने को मिला। मन को बहुत संयमित करके रखना पड़ता था।

जिधर डाला नजर देखा, उधर ही एक नयी सूरत।
दिले नादान मचलता है, कि बस मैं अब यही लूँगा॥

सारे दृश्य लुभावने ही दीखते थे। ईलिंग वेस्ट पहुँचकर स्टेशन पर बैठे हुए एकमात्र व्यक्ति स्टेशन मास्टर से जाने का रास्ता पूछा। उसने संकेत से दीवाल पर बना हुआ नक्शा देखने के लिए कहा। ईलिंग का पूरा नक्शा था। रास्ता, मकान नं० आदि देखने के बाद हम तीनों

उनके निवास स्थान पहुँचे। परन्तु वह नहीं मिले। पत्र तथा होटल का पता उनके घर देकर चले आए। अपनी पत्नी के साथ वह हमसे मिलने आए। हम भी दो बार उनके घर गए। उनका परिश्रम, उनकी उन्नति और उनका मकान देखकर प्रसन्नता हुई। उन्होंने भोजन करने का आग्रह किया, परन्तु हमने उन्हें बताया कि टी० सी० आई० द्वारा भोजन की अच्छी व्यवस्था है आप कष्ट न करें।

१९ जुलाई। मेट्रो द्वारा हाउसस्टन लो में श्री जास्टन लाल अंचल के घर उनसे मिलने गए। वे अफ्रीका से आएं हुए भारतीय हैं। आर्यसमाज के पुराने कार्यकर्ता हैं। भारत से भेजे हुए पत्रों के अनुसार आर्य-समाजियों से मिलने का प्रयास करते थे। सभी का जीवन बहुत व्यस्त है। समय का अभाव है। केवल रविवार का ही समय इनके पास है।

सायंकाल मादाम तुसौक का वेक्स म्यूजियम (मोम के पुतलों का अजायबघर) देखने गए। इसमें मोम के बने हुए आदमी, बच्चे, स्त्रियाँ राजा, रानी, नेता, सामाजिक कार्यकर्ता तथा संसार के प्रमुख महापुरुष, अमीर गरीब, डाक्टर आदि की मूर्तियाँ मोम की बनी हुई हैं। भारतीय नेताओं में महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, इन्दिरा गाँधी आदि की मूर्तियाँ इतनी अधिक सजीव हैं कि हाथ से छूने पर ही नकली मालूम पड़ते हैं। देखकर उन्हें निर्जीव नहीं कहा जा सकता।

लंदन का हाइट पार्क बहुत बड़ा पार्क है। इसमें छोटी-छोटी कई झीलें हैं। चारों ओर बैठने के लिए बैंच बनी हुई हैं। जो झील की शोभा में वृद्धि करती हैं। कहीं कोई भीख माँगने वाला नहीं दिखायी दिया। मक्खी या मच्छर का नामोनिशान नहीं था। यहाँ के पुरुष बहुत पुरुषार्थी और वचन के पक्के हैं। कर्तव्य निष्ठा इनमें है। समय की पाबन्दी, ड्यूटी को धर्म समझना, व्यवहार में सच्चाई आदि गुण देखने को मिले। यहाँ पर भारतीयों की संख्या बहुत है। उनका व्यापार भी अच्छी तरह जमा हुआ है अंग्रेज यह नहीं पसन्द करते कि भारतीय यहाँ पर पनपें तथा यहाँ का धन

भारत ले जाएँ। अतः वे कुछ न कुछ उत्पात भारतीयों के साथ किया करते हैं।

यहाँ का पार्लियामेन्ट देखकर मन में अमर शहीद उधम सिंह के प्रति श्रद्धा का भाव आ गया कि धन्य हैं उधम सिंह जिसने जलियाँवाला बाग में अपने पिता तथा अन्य हजारों व्यक्तियों की मौत का बदला यहाँ आकर जनरल डायर की हत्या करके लिया और अन्त में फाँसी के फन्दे पर झूल गया। परन्तु आज कितने ही पुत्र ऐसे हैं जो यह मनाया करते हैं कि उनका पिता कितनी जल्दी मृत्यु को प्राप्त हो और हम उसके कमाए हुए धन से अय्याशी कर सकें।

लंदन में शाकाहारी भोजन की व्यवस्था अच्छी थी। बासमती चावल, दाल, आलू, टमाटर, दूध, दही आदि सभी कुछ मिल जाता था। एक समय के भोजन का डेढ़ पौण्ड (२६ रुपए) लगता था।

लन्दन से न्यूयार्क—२१ जुलाई १९७६ अपराह्न २ बजकर ४५ मिनट पर लंदन से न्यूयार्क प्रस्थान करना था। हम सभी हीथ्रो एयरपोर्ट पहुँचे। वहाँ पर ज्ञात हुआ कि कोई भी खाद्यपदार्थ खुला हुआ अपने साथ नहीं ले जा सकता है। केवल डिब्बों में पैक सामान ही ले जा सकते हैं। श्री जगदीश तिवारी की पत्नी ने चीनी, घी, और मैदा से शुद्ध सामान बनाकर उनके साथ बाँधा था। जो कि कई दिन चल सकता था। श्री लालमन जी अपने साथ बदाम की बर्फी लाए थे। दोनों व्यक्तियों ने अपना सामान निकाला। सभी ने मिलकर खाया। सब सामान समाप्त किया गया। लंदन से २-४५ पर वायुयान रवाना हुआ। इस समय न्यूयार्क की घड़ियों में प्रातः के ९-४० बजे थे। लन्दन से न्यूयार्क ३५७० मील है। यह यात्रा ७ घण्टे में पूरी होनी थी। न्यूयार्क की घड़ियों के अनुसार सायंकाल ५ बजे न्यूयार्क पहुँचे। यहाँ एडिसन होटल, २२८ वेस्ट, ४७ स्ट्रीट में रुके। यह होटल बहुत अच्छे होटलों में एक है। यह २२ मंजिला होटल है। इसमें एक हजार कमरे वातानुकूलित हैं। एक कमरे का किराया २०० रु० प्रतिदिन था।

जॉन कैनेडी एयरपोर्ट, जहाँ हम लोग उतरे थे, विश्व का सबसे बड़ा एयरपोर्ट है। यह लगभग २८ मील में फैला हुआ है। यहाँ प्रति मिनट एक प्लेन उतरता और उड़ता रहता है। एयरपोर्ट पर हजारों कारों की भीड़ लगी रहती है। शहर तथा अन्य स्थलों पर कार ही कार दिखायी पड़ती थीं।

पाँच टापुओं को मिलाकर न्यूयार्क नगर बसा है। एयरपोर्ट से होटल के बीच २ मील लम्बी चैनल है। ऊपर नदी बहती है। यहाँ पर हमें अपने भोजन की व्यवस्था स्वयं करनी थी। सीलौन इण्डिया नामक होटल में भोजन करते थे। यहाँ साधारण भोजन में ४ डालर (४० रु०) लगता था। यहाँ पर प्रायः सभी दुकानें स्टोर रुम में हैं। जीवनोपयोगी सभी वस्तुएँ मिल जाती थीं। अपने पसन्द का सामान ट्रे में लेकर काउण्टर पर दिखा कर उसका भुगतान करके ले जाएँ। यह व्यवस्था थी। कोई सामान दिखाने वाला या देने वाला नहीं होता है।

यहाँ की सबसे प्रसिद्ध दुकान मैसी स्टोर है। यह १० लाख वर्गफीट में ११ मंजिला भवन में है। इसमें जीवनोपयोगी सभी वस्तुएँ मिलती हैं। पूरा स्टोर देखने के लिए दो दिन का समय चाहिए।

न्यूयार्क के प्रमुख स्थल देखे। स्वतन्त्रता की मूर्ति यह समुद्र तट से २ फर्लांग दूर है। बड़ी-बड़ी नौकाओं को मिलाकर एक हैलीपैड बना रखा है। यहाँ से हेलीकाप्टर से ले जाकर स्वतन्त्रता देवी की मूर्ति के आसपास का दृश्य दिखाते हैं। देखने के लिए हजारों व्यक्तियों की भीड़ लगी रहती है। हैंगिंग ब्रिज और वर्ल्ड ट्रेड सेण्टर की ११० मंजिली बिल्डिग इस स्थान का महत्त्व और भी बढ़ाते हैं। काफेलर सेण्टर में न्यू एम्पायर स्टेट बिल्डिग १०२ मंजिला है। १९२९ में यह बना है। हम लोगों ने अन्दर से जाकर देखा। प्रतीत होता था कि यह इसी वर्ष बना है। हम लोग ऊपर की मंजिल में जाने के लिए टिकट ले रहे थे। काउण्टर पर बैठी महिला ने कहा कि इस समय आप टिकट न खरीदें आपका पैसा व्यर्थ जाएगा। इस समय ६० मंजिलें बादल में है। ऊपर आपको कुछ नहीं दिखायी देगा।'

इसके आस-पास की सभी बिल्डिंग ८०-९० मंजिल की हैं। यहाँ छोटे मकान बहुत कम हैं।

राष्ट्रसंघ भवन देखा। सुन्दर बना है। भवन के बाहर सभी राष्ट्र के ध्वज लहरा रहे थे। राष्ट्रसंघ भवन में एक साथ ५००० व्यक्ति बैठ सकते हैं। यहाँ का पोस्ट आफिस स्वतंत्र है। डाकटिकट आदि राष्ट्रसंघ का अपना है।

चाइना टाउन देखने गये। बस्ती बहुत गंदी थी। अतः मन खिन्न हो गया। अनुभव हुआ कि जहाँ गंदे लोग रहेंगे वहाँ की दशा ऐसी ही रहेगी। चीनी लड़के सड़क आदि की सफाई स्वयं कर रहे थे।

डा० द्विवेदी जी, अलगूराम वर्मा और मैं एम्पायर स्टेट से निकल कर आ रहे थे, तभी वर्षा प्रारम्भ हो गयी। कुहरे की तरह वर्षा हो रही थी। सड़कों पर कहीं पेड़ पौधे नहीं थे। कहीं कहीं बड़े-बड़े पीतल के गमलों में छोटे-छोटे ६-७ फीट के पेड़ लगा रखे थे। नीचे मेट्रो रेलवे है। इसलिए सड़क पर पेड़ नहीं हैं। थोड़ी देर हम लोग पब्लिक लाइब्रेरी में रहे। वहाँ प्रतीक्षा कर रहे थे कि शायद बादल खुल जाए तो हम लोग एम्पायर स्टेट बिल्डिंग की १०२ मंजिल पर चल कर न्यूयार्क का दृश्याव-लोकन करें। परन्तु बादल घिरता ही गया। अतः भोजन करके आने का निर्णय करके भोजन के लिए चल दिये। स्ट्रीट नं० ४३ के चौराहे पर पहुँचते ही देखा कि कोई बदमाश पुलिस पर गोली चला रहा है। उसने २० फीट की दूरी से पुलिस पर ६ गोलियाँ चलायीं। भगदड़ मच गयी। रास्ता चलने वाले तुरन्त सड़क के किनारे लेट गये। हम सब भी लेट गये। ईश्वर की कृपा से हम सब बालबाल बच गये। एक पचास वर्ष का हट्टा-कट्टा व्यक्ति गोलियों की आवाज सुनकर लेट गया था। देखने से प्रतीत होता था कि उसका हार्टफेल हो गया। बिल्कुल शान्त पड़ा था। सांस भी नहीं ले रहा था। हम सभी वहाँ से तुरन्त चल दिये कि कहीं यह मर गया हो और पुलिस हम लोगों से आकर जाँच पड़ताल करे। तुरन्त पुलिस आ गयी। ५ मिनट बाद पुनः रास्ता चालू हुआ। सड़कों पर कहीं

भी एक कागज का टुकड़ा तक नहीं था। सफाई का सभी ध्यान रखते हैं। सड़कों पर कूड़ेदान दो प्रकार के बने रहते हैं। एक तरल पदार्थ के लिए और एक सूखे। पं० उमा कान्त जी ने एक दुकानदार से पूछा कि 'यह अखबार किसका हैं' दुकानदार ने उन्हें बताया कि वह कूड़ेदान है किसी ने अखबार पढ़ने के बाद उसमें रख दिया है। अगर आप पढ़ना चाहें तो उठा सकते हैं। कूड़ेदान अत्यन्त साफ था। अतः अखबार उठा लिया गया और पढ़कर फिर ६४ पृष्ठ का अखबार उसी में रख दिया गया। मक्खी और मच्छर कहीं भी नहीं दिखायी दिये। आज न्यूयार्क में रुकने का अन्तिम दिन था। कल २४ जुलाई को प्रातः फिलाडेल्फिया प्रस्थान करना था।

फिलाडेल्फिया २४ जुलाई। प्रातः न्यूयार्क से ग्रेहोम कोच से चल कर फिलाडेल्फिया आ गये। दो सौ वर्ष पूर्व आज के दिन ही अमेरिका को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई थी, अतः स्थान-स्थान पर खुशियाली मनायी जा रही था। फिलाडेल्फिया में ही स्वतन्त्रता की घोषणा सबसे पहले हुई थी। घोषणा से सम्बन्धित सभी कागजात, पेंसिल आदि सभी सुरक्षित रखे हुए हैं। भवन अन्दर से हम सभी ने देखा। बाहर पार्क में नवयुवक और नवयुवतियाँ नृत्य कर रहे थे। मैंने अपने साथियों से कहा कि भारत को आजादी प्राप्त हुए २९ वर्ष ही हुए हैं, परन्तु आजादी की खुशी भारतीयों के अन्दर उतनी नहीं है, जितनी की अमेरिकावासियों को २०० वर्ष स्वतन्त्रता प्राप्ति के बीत जाने के बाद आज भी है। साथ में एक बंगाली डाक्टर थे, उन्होंने कहा कि आजादी के लिए जितना खून अमेरिकनों ने दिया है, उतना भारतीयों ने नहीं दिया। इसीलिए आजादी का मूल्य बहुत कम लोग समझते हैं।

वाशिंगटन दोपहर १२ बजे। फिलाडेल्फिया से वाशिंगटन के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में बाल्टीमोर बन्दरगाह तथा कई शहर पड़े। सड़कें इतनी चौड़ी थीं कि ५ कतार में गाड़ियाँ आ रही थीं और ५ कतार में

जा रही थीं। आने और जाने के मार्ग अलग-अलग हैं। बीच में पेड़ लगाने के लिए काफी स्थान छोड़ा गया है। सायंकाल ५ बजे वाशिंगटन पहुँचे। होटल वुडनर में रुके। यह होटल १२ मंजिला है। तीन बिस्तर वाले कमरे का किराया ३५० रु० प्रतिदिन है। वाशिंगटन शहर बहुत सुन्दर है। यहाँ अधिकतर मकान कॉटेज टाइप बने हुए हैं। चारों ओर हरियाली ही हरियाली है। यहाँ पर नीग्रो की संख्या काफी है। यहाँ अधिक भीड़-भाड़ नहीं है। इण्डियन रेस्टोरेन्ट में जाकर भोजन किया। साधारण भोजन में एक व्यक्ति का ६ डालर (६० रु०) लगा। यहाँ का सिद्धार्थ भोजनालय भारतीय शाकाहारियों के लिए अति उत्तम है। वाशिंगटन सिटी आफ ट्रीज़ कहा जाता है। ह्वाइट हाउस राष्ट्रपति का निवास स्थान है। भवन संगमरमर का बना हुआ है। विशाल नहीं है। भारत के राष्ट्रपति भवन से बहुत छोटा है। यहाँ का कैनेडी सेन्टर बहुत सुन्दर तथा दर्शनीय है। सभी देशों ने यहाँ अपने उपहार दे रखे हैं। भारत ने भी यहाँ के लिए १०-१२ बहुत वड़े-बड़े पीतल के गमलों में वृक्ष लगा कर दिये हैं। लिंकन मेमोरियल में लिंकन की विशाल मूर्ति दर्शनीय है। जफरसन मेमोरियल सुन्दर है। जफरसन अमेरिका के तीसरे राष्ट्रपति हैं तथा अमेरिका के संविधान निर्माता हैं। रात्रि ९—४५ पर डा० कपिल देव द्विवेदी और अलगूराम वर्मा बाहर घूमने जा रहे थे। बाहर निकलते ही देखा कि होटल की १२वीं मंजिल पर आग लगी है। दमकल वाले आगे बुझाने में लगे हुए थे। होटल वाले सभी निश्चिन्त थे। मैनेजर आदि निश्चिन्तता से कार्य कर रहे थे। मोटर में लगी सीढ़ी बटन दबाते ही १२ मंजिल तक पहुँच गयी। २ मिनट में आदमी १२वीं मंजिल पर पहुँच कर आग बुझाने लगे। २० मिनट में आग बुझाकर चले गये।

वाटरगेट काण्ड का वाटरगेट होटल देखा। यह होटल ही राष्ट्रपति निक्सन के पतन का कारण था। कैपिटल भवन दर्शनीय है। इसमें कई बड़े हाल हैं। जिसमें नेताओं के फोटो लगे हुए हैं। सदन के दोनों कक्ष देखे। सामान्य सदस्यों की संख्या सदन में ४३४ है तथा अपर-हाउस के

सदस्यों की संख्या १०० है। उस दिन सदन की कार्यवाही नहीं हो रही थी। यहाँ गाइड की व्यवस्था अत्यन्त प्रशंसनीय है। सदन की कुर्सियों पर थोड़ी देर बैठे। आपस में मनोरंजन की बातें कीं।

देत्रवात २६ जुलाई। वाशिंगटन से देत्रवात के लिए बस द्वारा ९-१५ पर प्रातः प्रस्थान किया। देत्रवात वाशिंगटन से ५५० मील है। यह यात्रा बस द्वारा ११ घंटे में पूरी होती है। मार्ग में घने वन थे। अनेक स्थानों पर कार्यालयों के समीप सैकड़ों कारें खड़ी थीं। एक भी व्यक्ति घूमता दिखायी नहीं पड़ता था। मीलों तक मक्का के खेत फैले हुए थे। खेत के किनारे भी कारें खड़ी हुई थीं। सड़कों पर फालतू घूमता हुआ कोई व्यक्ति दिखायी नही देता। सड़के सीमेंट की ढली पक्की बनी हुई हैं। चौराहों पर फ्लाइंग ब्रिज बने हुए हैं। अतः गाड़ी रोकने की आवश्यकता कहीं नहीं पड़ती। गाड़ियाँ कम से कम ६० मील प्रति घण्टे की रफ्तार से दौड़ती हैं। रास्ते में कहीं-कहीं गाय और घोड़े दिखायी पड़े। भैंस दिखायी नहीं पड़ीं। खेती का काम प्रायः मशीनों से होता है। यहाँ सभी व्यक्ति कर्मठ होते हैं। काम न करने वाले को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। सभी कार्यों को प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाता है। मक्का, गेहूँ, चावल उड़द आदि की खेती हो रही थी। पचासों मील तक एक ही चीज बोई जाती है। यहाँ की खेती दर्शनीय है। देत्रवात सायंकाल ८ बजे पहुँचे। यहाँ होटल काडीलेक में रुके। यह होटल २९ मंजिला है। यहाँ पर गुण्डागर्दी काफी है। रात्रि ९ बजे के बाद बाहर निकलना खतरे से खाली नहीं है। होटलों में कालगर्ल्स की संख्या काफी रहती है। १० बजे रात्रि में हमारे दल के कुछ सदस्य भोजन की व्यवस्था के लिए बाहर निकले थे। उनके साथ कुछ लड़कों ने अशिष्ट व्यवहार किया। विलम्ब के कारण भोजन की व्यवस्था न हो सकी। जल पी कर वैसे ही सो गये।

२७ जुलाई। फोर्ड कम्पनी का कारखाना देखने गये। कारखाना किसी कारणवश आज बन्द था। यहाँ प्रति २ मिनट पर एक मोटर कार

बन कर निकलती है। द्वितीय विश्व युद्ध के समय प्रति मिनट एक कार बनती थी। फोर्ड कम्पनी का आयरन प्लांट देखा। यहाँ सब काम आटोमेटिक मशीनों द्वारा होता है। लोहे को गला कर सिल्ली बनाकर फिर चादर बनायी जाती है। फिर उसका रोल बनाया जाता है तथा उसे रेलवे बैगन में लाद दिया जाता है। यह सब काम आटोमेटिक मशीन से होता है। एक चादर की लम्बाई ३ हजार फीट होती है। चौड़ाई भी काफी होती है। फोर्ड कम्पनी में २५ हजार कर्मचारी हैं। हेनरी फोर्ड ने अपने परिश्रम से इस फोर्ड कम्पनी को चालू किया था। उसका इतिहास पास के ग्रीनविच ग्राम में दिया हुआ है। पहली मोटर कार किस रूप में बनी थी, यह वहाँ प्रदर्शित किया गया है। छोटे से मोटर गैरेज में कार बनाना प्रारम्भ किया था। फोर्ड के पुरुषार्थ की निशानी आज भी वहाँ सुरक्षित है। यह कारखाना विश्व के सबसे बड़े कारखानों में एक है। यहाँ पर ३०-४० मंजिला मकान हैं। फोर्ड की एक बिल्डिंग की ऊपरी मंजिल चारों ओर घूमती है।

नियाग्रा-प्रपात—सायंकाल तीन बजे देत्रवात से नियाग्रा प्रपात के लिए प्रस्थान किया। यहाँ से २४७ मील है। ४ घंटे में यात्रा पूरी की गयी। मार्ग में हरी-भरी भूमि, बड़ी-बड़ी झीलें आदि सुन्दर दृश्य देखने को मिले। फारगूसन ट्रैक्टर का विशाल कारखाना रास्ते में देखने को मिला। रात्रि ८ बजे नियाग्रा पहुँचे। यहाँ यार्क होटल में रुके। मैं तथा अलगूराम वर्मा भोजन के लिए स्टोर्स की तलाश में निकले। एक नवयुवती से पूछा 'स्टोर किधर है ?' उसने संकेत से स्टोर की ओर इशारा किया। स्टोर में जाकर देखा कि केवल एक डबल रोटी बिना अण्डे वाली बाकी थी। दुकानदार एक कनाडियन पचास वर्ष का लम्बा चौड़ा काउन्टर पर बैठा था। मैंने अलगूराम से कहा कि एक ही डबल रोटी बाकी है। हो सकता है कि बासी हो। मेरा यह कहना दुकानदार ने सुन लिया। वह बड़े स्वाभिमान से बोला 'यहाँ फैक्ट्री एयर कंडीशन्ड हैं। एयर कंडीशन्ड कोच द्वारा सप्लाई की जाती है और दूकान भी

एयर कंडीशन्ड है। यहाँ कोई भी चीज पुरानी या मिलावट वाली नहीं मिलेगी।" मैं चुप हो गया और डबलरोटी, मक्खन, सेव तथा केला लेकर चला आया। आपस में हम दोनों ने विचार-विमर्श किया कि क्या हम भारतीय इतने स्वाभिमान से यह कह सकते हैं ? हमारे देश में प्रायः सभी वस्तुओं में मिलावट करके वेचना आदत का अंग बन गया है।

२८ जुलाई। नियाग्रा जल प्रपात विश्व के आठ आश्चर्यों में से एक है। इसके चारों ओर ३५ मील का बगीचों का घेरा है। २८ हजार कारों की पार्किंग की जगह है। नियाग्रा प्रपात दो भागों में बँटा हुआ है। अमेरिका की ओर का प्रपात ११०० फीट चौड़ा है। आधा फर्लांग दूर कनाडा का का प्रपात है। यह अर्धगोलाकार है। जूते की नाल के आकार का होने के कारण इसे 'हार्स-शू फाल' कहा जाता है। इसकी चौड़ाई २२०० फीट है। यहाँ पर १८६ फीट की ऊँचाई से लाखों गैलन पानी गिरता है। दोनों प्रपात के बीच की भूमि को 'कोच आइलैण्ड' कहा जाता है। प्रपात में पानी इतने वेग से गिरता है कि उससे बादल वन जाते हैं और प्रपात के आसपास २ फर्लांग तक वर्षा हो जाती है भूमि हमेशा नम रहती है। यह एरि और ओन्टोरिया दो झीलों के मध्य है। इसमें ५ झीलों का पानी आता है। यहाँ से नियाग्रा नाम की वहुत बड़ी नदी निकलती है। यह स्थान अत्यन्त दर्शनीय है। यहाँ पर प्रतिवर्ष डेढ़ करोड़ यात्री घूमने के लिए आते हैं। यहाँ पर स्काईलीन टावर ६०० फीट ऊँचा बना हुआ है। यहाँ से पूरा दृश्य वहुत मनोरम दिखायी देता है। ऊपर जाने का २ डालर लगता है। यहाँ की 'फ्लावर क्लाक' (Flower Clock) भी दर्शनीय है। इसमें चालीस रंग के फूलों के पेड़ मिनट का संकेत करते हैं। यहाँ पर गाइड मिस्टर फोर्ड लम्बा-चौड़ा खूबसूरत पचास वर्ष का जवान था। अपने साथ एक पच्चीस वर्षीया कन्या को गाइड की ट्रेनिंग दे रहा था। वाराणसी का एक सरदार, जो बम्बई से हम लोगों के साथ हो गया था, उसने गाइड कनाडियन युवती को पकड़ लिया और उसके साथ फोटो खिचवायी। उसने उसके साथ कुछ बदमाशी भी की। लड़की ने अपने

पिता से जाकर कहा कि 'आप तो कहते थे कि भारतीय बहुत अच्छे होते हैं, परन्तु उसने हमारे साथ बुरा व्यवहार किया।' यह सुनकर हम सबने उस सरदार को बहुत डाँटा फटकारा और कहा कि 'तुम नालायक हो हमारे देश की बदनामी कराने आए हो। अगर फिर किसी प्रकार की हरकत की तो बहुत पीटा जाएगा।'

टोरन्टो २९ जुलाई। नियाग्रा से ९-३० पर बस से टोरन्टो के लिए प्रस्थान किया। ११-३० पर टोरन्टो पहुँच गए। यहाँ होटल लार्ड सिमकोई में रुके। यहाँ विश्व की सबसे ऊँची बिल्डिंग 'सी-एन-टावर' है। इसकी ऊँचाई १८१५ फीट है। यह १० भाग में विभक्त है। इसमें चार ऐलीगेटर लगे हुए हैं। इसमें २.७५ डालर का टिकट लगता है। एलीगेटर की स्पीड एक मिनट में १२०० फीट है। ऊपर चाय, भोजन, पुस्तक, उपहार के सामान आदि की दुकानें हैं। टोरेन्टो में शाकाहारी भोजनालय एलम स्ट्रीट पर महाराजा रेस्ट्रां है।

मांट्रियल ३१ जुलाई। प्रातः ६ बजे बस द्वारा मांट्रियल के लिए प्रस्थान किया। मांट्रियल ३५४ मील है। ६ घंटे की बस यात्रा है। मार्ग में छोटी बड़ी सैकड़ों झीलें पड़ी। फोर्ड और फियट कम्पनी की शाखाएँ भी पड़ीं। यहाँ ओलम्पिक खेल चल रहे थे। शेरेटन रायल होटल में रुकना था, परन्तु ओलम्पिक खेलों के कारण होटल में जगह नहीं थी। इसलिए एयरपोर्ट पर हिल्टन होटल में रुके। सायंकाल ४ डालर का खेल का टिकट लेकर टैक्सी द्वारा वेलोड्रम स्टेडियम में जूडो (जापानी कुश्ती) देखने गए। ओलम्पिक खेलों के लिए तीन विशाल स्टेडियम वनाए गए थे। सबसे बड़े स्टेडियम में एक साथ ७२ हजार दर्शकों के वैठने की जगह थी। सबसे छोटा स्टेडियम कलकत्ता के नेता सुभाषचन्द्र वोस स्टेडियम से भी बड़ा था। तैराकी और दौड़ प्रतियोगिताओं के लिए अलग स्थान थे। वीरान स्थल पर स्टेडियम वनाकर सुन्दर स्थल बना दिया था। पर्याप्त धन और परिश्रम के बाद ये स्टेडियम पाँच वर्ष में वनकर तैयार हुए थे। आने जाने में टैक्सी का खर्च बहुत अधिक लगता था, इसलिए होटल के

कमरे में ही बैठ कर टेलीविजन पर समापन समारोह देखा। होटल में सभी कमरों में टेलीविजन और हीटर लगा हुआ था।

पं० उमाकान्त जी को एक आर्य-बन्धु ने भोजन पर आमंत्रित किया था। पण्डित जी ने हम दस व्यक्तियों को होटल में भोजन करने से मना कर दिया। दिन में १ बजे उस सज्जन का फोन आया कि आप होटल के बाहर आ जाएँ। हमारा व्यक्ति गाड़ी लेकर जा रहा है। हम १० व्यक्ति बाहर आकर खड़े हो गए। गाड़ी आ गयी। हम लोगों की एक-दो-तीन करके दस गिनती की और दुबारा फिर हम लोगों की गिनती करने लगा। मैंने कहा 'भाई हम १० व्यक्ति हैं। एक कार में नही आएँगे। दूसरी टैक्सी बुला लेते हैं।' उस व्यक्ति ने कहा कि भोजन तो ४-५ व्यक्तियों का ही बना है। पण्डित उमाकान्त जी धर्मसंकट में पड़ गए कि किसको छोड़ें और किसको न छोड़ें। उन्हें धर्मसंकट में फँसा देखकर मैंने कहा 'पण्डित जी आप, श्री लालमन आर्य, श्री जनकलाल जी और उनकी पत्नी चार व्यक्ति चले जाएँ।' पण्डित जी उदास होकर चले गए। बाजार होटल से बहुत दूर था आने जाने का टैक्सी का किराया २०० रु० से कम नहीं लगता था। होटल के रेस्टोरेन्ट में मांस आदि बनता था, अतः उस दिन जलपान करके रह गया। दूसरे दिन सोमवार का व्रत था। उपवास करके रह गया। तीसरे दिन दोपहर के बाद भूख जोर से लग रही थी। श्री पुष्कर लाल जी ने कहा कि 'प्रधान जी आत्म-रक्षार्थ कुछ खा लीजिए। तीन दिन भूखे रहना ठीक नहीं है। होटल के रेस्टोरेंट में चल कर इधर-उधर देखे बिना स्लाइस ब्रेड और मक्खन तथा चाय ले लीजिए। कल चलकर कहीं भोजन का प्रबन्ध किया जाएगा।' उनकी सलाह मानकर रात्रि में चार टुकड़े ब्रेड के खाए तथा चाय पी और सो गया।

बोस्टन २ अगस्त १९७६। ९-१५ पर प्रातः बस द्वारा बोस्टन के लिए प्रस्थान किया। बोस्टन ३३३ मील है। सायं ५-३० पर बोस्टन पहुँचे। यहाँ होटल एसेक्स में रुके। यह बहुत अच्छे होटलों में है। यहाँ का बन्दरगाह दर्शनीय है। बन्दरगाह पर २०० वर्ष पुराना युद्धपोत आज

भी सुरक्षित है। इसी जहाज द्वारा अमेरिका ने अंग्रेजों को परास्त किया था। इसकी सुरक्षा की सुन्दर व्यवस्था है। उस पर लगी ४२ तोप आज भी सुरक्षित हैं। यहाँ का ऐतिहासिक चर्च भी देखा। इसमें स्वतंत्रतायुद्ध का सामान सुरक्षित है। यहाँ का चर्च आफ क्रिश्चियन साइंस भी दर्शनीय है। इसका भव्य भवन बहुत विशाल है। पूरे शहर में चर्च ही चर्च दिखाई पड़ते हैं। इसमें क्रिश्चियन साइंस पर किए जाने वाले प्रश्नों के उत्तर टेप किए हुए हैं। इच्छित प्रश्न का उत्तर जानने के लिए संबद्ध संख्या दबानी पड़ती है। एक पूरा कमरा ग्लोब की तरह बना हुआ है। उसमें विश्व का पूरा नक्शा सारी बिल्डिंग में दिया हुआ है। भूगोल के मानचित्र की दृष्टि से यह सुन्दर और आकर्षक है। बोस्टन में कैनेडी के माता-पिता का घर भी देखा। साधारण है। सायंकाल नटराज होटल में भोजन किया। सत्संग के नाम पर वहाँ के दो-तीन व्यक्ति ही आए। कनाडा एवं अमेरिका में ज्ञानचन्द्र शास्त्री आर्य-समाज का प्रचार कार्य करते हैं। अच्छे व्यक्ति हैं। वह उस समय बाहर गए हुए थे। अतः उनके दर्शन न हो सके।

बोस्टन से न्यूयार्क—४ अगस्त १९७६। बस द्वारा बोस्टन से न्यूयार्क रवाना हुए। न्यूयार्क यहाँ से २५४ मील है। अमेरिका-कनाडा में बस की व्यवस्था अत्यन्त सुन्दर थी। बस एयरकंडीशन्ड थी। बस में लैट्रीन-बाथरूम पीछे बने हुए थे। चैसिस के नीचे बने बॉक्स में सामान रखा जाता था। निश्चित समय से २ मिनट पहले ही बस स्थान पर पहुँच जाती थी। बसें प्रायः ग्रेहाउन्ड कोच थे। उन पर दौड़ते हुए कुत्ते का मार्क बना रहता था। रास्ता सीधा और समतल था। बीच-बीच में कई जगह घने जंगल मिले। यात्रा समुद्र के किनारे-किनारे हुई। रास्ते में सभी जगह मोटल सुन्दर ढंग के बने हुए थे। मोटल पर बस जाकर रुक जाती थी। ड्राइवर गाड़ी में इंधन भरवाता था। यात्री सजे हुए स्टाल में जाकर हाथमुँह धोकर लघुशंका आदि से निवृत्त हो सकते थे। स्वयं इच्छा-नुसार सामान लेकर खा लेना और पैसा देना आदि सुन्दर व्यवस्था थी। आगे आने वाले शहर के विषय में बस में छपी हुई पुस्तिकाओं का ढेर

पड़ा रहता था। उसे पढ़कर शहर के सभी दर्शनीय स्थल बिना किसी से पूछे देखे और समझे जा सकते थे। २ बजकर ३० मिनट पर न्यूयार्क एयरपोर्ट पहुँचे। दल के वरिष्ठ साथी श्री जगदीश तिवारी का स्वास्थ्य सर्दी के कारण खराब हो गया था। न्यूयार्क पहली बार पहुँचते ही वे न्यूयार्क से वापस जाना चाहते थे। परन्तु एयर इण्डिया के अधिकारियों ने कहा था कि यदि यहाँ से वापस जाएँगे तो १० हजार रुपया किराया देना होगा। आप सभी टूरिस्ट कन्सेशन टिकट से आए हैं, वापसी में न्यूयार्क से बिना रोम, पेरिस रुके आप कलकत्ता जा सकते हैं। अतः वे बीमार हो सभी जगह होटलों में आराम करते रहे।

न्यूयार्क से लन्दन—न्यूयार्क से लन्दन के लिए प्रस्थान किया। लन्दन ३६०० मील है। वायुयान से ६ घण्टे लगते हैं। रात्रि १०–२० पर वायुयान रवाना हुआ। यह जम्बो जेट विमान था। इसमें ४०० यात्री बैठे थे। ३०-४० कर्मचारी भी थे। ३१ से ३५ हजार फीट की ऊँचाई में जहाज जा रहा था। बगल में अलगू राम वर्मा को एक सोने की चैन गिरी हुई मिली। उन्होंने मुझसे पूछा 'क्या किया जाय' एयरहोस्टेस को बुलाकर चैन उसको दे दी गयी और कहा गया कि उद्घोषणा करके पता कर लो किसकी सोने की चैन गिरी है? जिस महिला की हो वह ले जाए।' पर्याप्त समय बीत गया। परन्तु उसने उद्घोषणा नहीं की। मैंने बुलाकर उससे कहना चाहा कि क्यों नहीं अभी तक पता किया? तब तक अलगूराम ने कहा कि 'यह चैन किसी बड़े व्यक्ति की ही होगी। यह तो गरीब लड़की है। अब वह सोने की चैन देना नहीं चाहती। इसे ही रखने दो।' अतः उसे टोकने का विचार त्याग दिया। परन्तु जब वह परिचारिका सामने आती तो उसकी निगाह शर्म से झुक जाती थी। विमान लन्दन पहुँचने वाला ही था। मैंने उस परिचारिका को बुलाया। वह घबड़ा गयी क्योंकि उसने अभी तक उद्घोषणा नहीं की थी। नियमानुसार उसे तुरन्त घोषणा करनी चाहिए थी। उसके मन में पाप था। पापी की आत्मा कमजोर हो जाती है। वह सहमे हुए पास आयो। मैंने कहा लन्दन से जो परिचारिका

कलकत्ता जाएगी, तुम उससे कह देना कि हमारे साथी श्री जगदीश तिवारी का ध्यान रखे। वह अस्वस्थ हैं।' एयरपोर्ट पर विमान उतर गया। सीढ़ी पर उतरते समय उसने नमस्ते की। हम लोगों के उतर जाने पर उसका मन प्रसन्न हुआ कि 'अव मैं निश्चिन्तता पूर्वक सोने की चैन अपने पास रख सकती हूं।' श्री अलगूराम वर्मा की कृपा से वह मुफ्त का माल ले गयी। परन्तु मुफ्त का माल कोई भी हजम नहीं कर सकता। उसका भुगतान उसे किसी न किसी रूप में करना ही पड़ता है।

पेरिस—५ अगस्त। लन्दन से पेरिस के लिए रवाना हुए एयर इण्डिया के जहाज में खरावी आ जाने के कारण फ्रान्स एयर बस द्वारा १२-२० पर पेरिस के लिए रवाना हुए। लन्दन से २८० मील है। पेरिस में चार एयर-पोर्ट हैं। एयर इण्डिया का विमान जिस एयरपोर्ट पर उतरना था, वहाँ हम लोगों की वस पहुँची हुई थी। परन्तु हम फ्रान्स एयर बस द्वारा दूसरे एयरपोर्ट पर पहुँचे। २ घण्टे वाद बस आयी। तव तक हम सब हवाई अड्डे की सुन्दरता देखते रहे। बस द्वारा होटल मिनरवे, १३ रुईडिस इकोलेस, पेरिस-१३ पहुँचे। यहाँ आवास की व्यवस्था थी। होटल अमेरिका-कनाडा से वहुत घटिया था। प्रातः काल पेरिस शहर घूमने के लिए निकले। यहाँ का एफिलटावर अत्यन्त प्रसिद्ध टावर है। लोहे और सिमेन्ट से बने ४ विशाल खम्भे हैं। उनपर ९८४ फीट ऊँचा टावर बना है। टावर में ऊपर रेस्तरां, दुकान आदि हैं। यह पेरिस शहर का सौन्दर्य है। यहाँ का विशाल फव्वारा देखने के लिए दिन-रात दर्शकों की भीड़ लगी रहती है। आर्ट गैलरी देखने गए। यहाँ पर चित्रकार घूमते रहते हैं। क्षण भर में आपका चित्र हाथ से वनाकर दे देते हैं। पं० उमाकान्त जी का एक व्यक्ति ने विना कहे ही चित्र वना दिया और दो फ्रेंक माँगने लगा। पण्डित जी तथा हम सबने कहा कि हमने वनाने के लिए नहीं कहा था। हम पैसा नहीं देंगे। उसका झगड़ना देखकर श्री पुष्कर लाल जी ने डेढ़ फ्रेंक निकाला कर दिए। क्योंकि हम लोग झगड़ा नहीं करना चाहते थे।

यहाँ का जापानी बगीचा दर्शनीय है। सायंकाल वारसाई देखने गए।

बारसाई पैलेस का सुनहरा गेट दर्शनीय है। यहाँ पर ७-८ विशाल कक्ष हैं। जिसमें परियों आदि के चित्र हैं। फ्रान्स के राजा, रानी तथा महा-पुरुषों के भी चित्र हैं। इसके दो विशाल हाल २०० गज लम्बे ४० फीट ऊँचे हैं। इसकी छत पारदर्शक है। अतः सूर्य की किरणें पड़ने से हाल चमकता रहता है। मखमली कालीन बिछे हुए हैं। बहुत से नग्न चित्र भी बनें हुए हैं। यहाँ का नोट्रडाम चर्च आकर्षक है। इसका विशाल हाल ५० फीट ऊँचा है। इसमें २५०० आदमियों के वैठने का स्थान है। हाल वहुत ही आकर्षक है। ईसा आदि की मूर्ति के सामने एक फीट ऊँची मोमवत्तियाँ जला रखी थीं। इसी हाल में नैपोलियन का राज्याभिषेक हुआ था। हाल के वाहर नैपोलियन की मूर्ति बनी हुई है।

सायंकाल यहाँ के रंगीले वाजार में घूमने गए। पेरिस के इस क्षेत्र में नाइट क्लव, रंगेलियों वाले नृत्य-गृह हैं। यहाँ सायंकाल ६ बजे से रात्रि ३ बजे तक युवक और युवतियों की भीड़ लगी रहती है। शाकाहारी भोजनालय के लिए ३-४ मील का चक्कर लगाया। एक भारतीय नवयुवक ने वताया कि पिज्जा रोटी मिलती है। परन्तु वह वहुत दूर होने के कारण वहाँ न जा सके। पेरिस का नाम वहुत प्रसिद्ध रहा है। परन्तु जव से न्यूयार्क वसा है, उसके बाद से पेरिस उतना प्रसिद्ध नहीं रह गया।

पेरिस से रोम—पेरिस से ७ अगस्त को वायुयान द्वारा पुनः वापस आ गए। लन्दन से विमान द्वारा रोम गए। लन्दन से रोम ९९० मील है। विमान के कर्मचारियों ने केवल १० व्यक्तियों के लिए ही शाकाहारी भोजन रखा था। शाकाहारी भोजन करने वालों की संख्या अधिक थी। इस पर वाद-विवाद हुआ। वाद में प्लेन के अधिकारियों ने माँफी माँगी। कुछ लोगों को भूखा रह जाना पड़ा। इटली पहुँचने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि अव वम्बई आ गए। शहर में कोई सुन्दरता नहीं है। टूटे-फूटे मकान दिखाई पड़ रहे थे। भारतीय शहरों की तरह का शहर है। यहाँ होटल पारकर में रुके। मैंने होटल के मैनेजर से पूछा कि क्या हमारे नाम फादर के पास से कोई पत्र आया है?' उसने अचम्भें से मेरी ओर देखा और

पूछा 'क्यों फादर का पत्र और आपके पास आएगा ?' मैंने पूछा 'क्यों नहीं आ सकता ?' उसने कहा कि फादर कोई मामूली व्यक्ति नहीं हैं। वर्ष में वह एक बार बाहर निकलते हैं। बड़े दिन के समय लोगों को दर्शन देते हैं। बड़े-बड़े राजा और प्रधान मन्त्री से केवल मिलते हैं। मैंने कहा कि ठीक है हम परसों वहाँ जाएँगे।

पम्पई—८ अगस्त। प्रातः ९ बजे बस द्वारा १२५ मील पर स्थित पम्पई और नेपुल्स घूमने के लिए प्रस्थान किया। बस का ९ बजे छूटने का समय हो गया था। हमारे दल के ६-७ व्यक्ति मोहन लाल आदि स्नान आदि करके तैयार नहीं हुए थे। उन्हें तैयार होने में १०-१५ मिनट लगते। मैंने ड्राइवर से रुकने का निवेदन किया, परन्तु उसने कहा कि एक मिनट भी नहीं रुकेगा। अन्त में मैं बस में बैठ गया। साथियों के छूट जाने का पछतावा रहा। रास्ते में अंगूर, सेव आदि के बगीचे मीलों तक फैले हुए थे। अंगूर, सेव आदि फल यहाँ पर बहुत होते हैं। पम्पई शहर ७वीं शती ई० पू० का शहर है। यह भयंकर ज्वालामुखी द्वारा नष्ट हो गया था। ७ मील में ज्वालामुखी का लावा भर गया था। १७ वीं शती में यह नगर खुदाई में निकला। खुदाई में प्राप्त वस्तुओं में से उल्लेखनीय हैं—सूर्य-मन्दिर, अपोलो की मूर्ति, बड़ा हाल, एक बड़ा चौक जिसके चारों ओर दुकानें थीं। यहाँ बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी चलाने के लिए छोटी-छोटी सड़कें, पत्थर वाली नालियाँ गर्म पानी वाला स्नानागार, दो मृत व्यक्तियों का सफेद सिमेन्ट से प्लास्टर किया हुआ शव, पुराने केतली जैसे वर्तन आदि दर्शनीय थे। पुराने हालों के बीच साथियों के खो जाने का भय रहता है। हजारों की संख्या में यात्री यहाँ प्रतिदिन पहुँचते हैं। नयी पम्पई में आकर रेस्तरां में भोजन किया। पीने का पानी माँगने पर उसने सोड़ावाटर की बहुत बड़ी बोतल लाकर दे दी। उसका पाँच रुपया चार्ज किया। इस पर उससे विवाद हो गया। उसने कहा कि केवल सादा पानी पीना था तो वाशवेसिन पर पी लेते। उसका भुगतान करना पड़ा।

नेपुल्स—दोपहर बाद नेपुल्स गये। नेपुल्स बीसों मील तक समुद्र के किनारे फैला हुआ है। समुद्र का किनारा आकर्षक है। यहाँ समुद्र में लड़के, लड़कियाँ, बच्चे हजारों की संख्या में नहाते और तैरते रहते हैं। भूमध्य सागर के किनारे ३० मील तक की यात्रा की। यहाँ का समुद्री किनारा आकर्षक है। हरियाली अधिक है। घर के चारों ओर अंगूर की लता फैली हुई थी। यहाँ से सोरेन्टो गये। हम लोग सड़क के किनारे घूमते हुए जा रहे थे, एक नवयुवती अपनी दुकान से उठकर आयी और अलगूराम के पेट पर हाथ फेरते हुए थपथपाते हुए बमब्रम कहती हुई चली गयी। हंसी का फव्वारा फूट गया। यहाँ के लोग परिश्रमी, पतले, लम्बे और सुडौल होते हैं। किसी व्यक्ति के मोटापा या पेट आदि नहीं निकला रहता। अलगूराम का निकला हुआ पेट उसके लिए नयी चीज थी। सायंकाल होटल वापस आ गए।

वेटिकन सीटी---९ अगस्त। पोप की नगरी वेटिकन सीटी देखने गये। यह पोप की स्वतन्त्र नगरी है। यहाँ का सिक्का, स्टाम्प आदि सब इनका अपना है। यहाँ का सेण्ट पीटर चर्च विश्व का सबसे महान चर्च है। चर्च का मेन हाल कला की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मुख्य हाल की लम्बाई ७५० फीट और चौड़ाई ४५० फीट और ऊँचाई १४० फीट है। चारों और दीवारों पर सोने का काम किया हुआ है। इसको बनाने में १२० वर्ष लग चुके हैं तथा अभी काम चल रहा है। हजारों दर्शकों की भीड़ हमेशा लगी रहती है। रविवार का दिन था अतः सत्संग चल रहा था। एक फादर बैठकर उपदेश कर रहे थे। सत्संग में केवल ५०-६० व्यक्ति थे। आश्चर्य हुआ कि इतना विशाल चर्च, रविवार का दिन और उपस्थिति बिल्कुल नगण्य। इससे अधिक उपस्थिति तो आर्य-समाज, विधान-सरणी, कलकत्ता के रविवासरीय साप्ताहिक सत्संग में होती है। लगभग ढाई-तीन सौ व्यक्ति आर्य-समाज के सत्संग में आते हैं। सस्ता सामान, खाने-पीने की अय्याशी करने आदि की छूट के कारण प्रायः ईसाई धर्म अपनाए हुए हैं। इनमें धर्मपरायणता नहीं है। दिखावे के लिए

धार्मिक बने हुए हैं। चर्च के वाहर गेट पर दो चौकीदार हथियार लेकर खड़े थे। कोई कहता यह स्टेच्यू है। कोई कहता ये असली आदमी है। इसका निर्णय करने के लिए कुछ देर वहाँ खड़े रहे। थोड़ी देर बाद उसकी पलकें झपकीं तब निर्णय हुआ कि ये तो असली आदमी है। यहां के हाल में सात हजार व्यक्ति बैठ सकते हैं। ऊपर गैलरी बनी हुई है। चर्च के सामने बहुत बड़ा मैदान है। यहाँ जुलियस सीजर्स की बिल्डिग, मुसौलिनी आदि का कार्य-स्थल देखा। यहाँ का सिक्का संसार का सबसे छोटा सिक्का कहा जाता है। उसे लीरा कहते हैं। एक रुपया सौ लीरा के बराबर है। योरप अमेरिका कनाडा आदि देखने के बाद यहाँ का चर्च देखकर वहुत प्रभावित हुआ। राष्ट्रसंघ भवन और केनेडी पैलेस की तुलना में यह कम नहीं। यहाँ के लोग अंग्रेजी कम जानते हैं।

रोम से बम्बई—१० अगस्त। रोम से १६-४५ (भारतीय समय २०-१५) पर बम्बई के लिए जम्बो जेट एम्परर अकवर से प्रस्थान किया। यह यात्रा ७ घंटा २० मिनट की है। भारतीय समयानुसार प्रातः ४ बजे बम्बई शान्ताक्रुज हवाई अड्डे पर पहुँचे। बम्बई पहुँचने पर ज्ञात हुआ कि सभी लोगों का सामान सूटकेस, बैग आदि इटली में अधिक सामान होने के कारण छूट गया है। कल दूसरे प्लेन से आएगा। कई लोग एयर पोर्ट में रुक गये। एयर इण्डिया ने भोजन आवास आदि की व्यवस्था की। मेरे लघु भ्राता श्री श्रीराम एयरपोर्ट पर हम लोगों के स्वागतार्थ आये थे। जाते समय श्री मनीराम छोड़ने के लिये आये थे। मैं वर्मा जी और द्विवेदी जी बम्बई शहर आ गये। दूसरे दिन काकड़वाड़ी आर्य-समाज में पूरे दल का स्वागत था। प्रातः एयरपोर्ट जाकर अपना सूटकेस आदि लिया। कस्टम अधिकारी ने सामान खोल कर चेक कराने के लिये कहा। मैंने कहा 'हम वैदिक धर्म के प्रचारार्थ गये थे। इसमें स्मगलिंग का सामान नहीं है। मेरी चाभी कमरे पर छूट गयी है।' परन्तु उसने ताला तोड़कर सामान चेक किया। कोई आपत्ति जनक सामान न पाकर उसने शर्मिन्दा होते हुए कहा कि 'आप लोग बहुत सच्चे व्यक्ति हैं।' हमने आर्य-

समाज का परिचय दिया। उसने १५ रु० देकर 'लाइट आफ ट्रुथ' पुस्तक खरीद ली और कहा कि मैं आर्य-समाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के विषय में इससे जानकारी प्राप्त करूँगा। श्री पुष्कर लाल के सामान की जाँच एक महिला अधिकारी कर रही थी। श्री पुष्कर लाल ने कहा कि 'क्यों अटैची खुलवाती हो? इसमें एक साड़ी के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है साड़ी चाहती हो तो तुम ले लो या मुझे ले जाने दो।' उसने विश्वास न करके सूटकेस खुलवाया। उसमें से केवल एक साड़ी निकली। इस पर दूसरे अधिकारी से कहने लगी 'कैसा बेवकूफ व्यक्ति है कि पूरा यूरोप, अमेरिका, कनाडा घूम कर आया है और केवल एक साड़ी लाया है।' श्री पुष्कर लाल ने उसकी बात सुन ली और उसे जोर से फटकारते हुए कहा कि 'हम स्मगलिंग करते तो शरीफ व्यक्ति होते। ईमानदारी से चल रहे हैं और देश के साथ गद्दारी नहीं कर रहे हैं तो बेवकूफ हैं?' इस पर वह महिला बहुत शर्मिन्दा हुई। हमारे दल के जो सच्चे आर्य-समाजी थे, वे चरित्रवान् और देशभक्त थे। वे किसी भी रूप में अपने देश को अपमानित नहीं होने देना चाहते थे। भारतीय वेशभूषा-धोती, कुर्ता, कमीज और महिलाओं ने साड़ी पहनकर पूरा योरप और अमेरिका का भ्रमण किया। भारतीय सभ्यता से लोगों को प्रभावित किया। हम लोग जहाँ जाते थे सभी व्यक्ति हमें सम्मान की दृष्टि से ही देखते थे और कहते थे ये भारतीय हैं।

१२ अगस्त। १० बजे काकड़वाड़ी आर्य-समाज पहुँचे। यहाँ के सदस्यों ने हमारे दल के सदस्यों का स्वागत किया। उनके स्वागत के उत्तर में पण्डित उमाकान्त जी और डा० कपिल देव द्विवेदी ने विदेशों में आर्य-समाज की गतिविधियों पर प्रकाश डाला। मैंने भी कुछ शब्दों में धन्यवाद देते हुए कहा कि भारत के लोग योरप और अमेरिका की तुलना नहीं कर सकते। वहाँ के लोगों में ईमानदारी, परिश्रम, सत्य बोलना, छल कपट की बातें न करना आदि गुण हैं। इन्हें वे अपना धर्म समझते हैं। हमारे देश में अच्छे गुण केवल पुस्तकों तक ही सीमित हैं। बहुत

कम लोगों के जीवन में वे गुण हैं। हमारे देश के लोग परिश्रम से कतराते हैं। हरामखोरी से गुजर हो जाये उसे बुद्धिमानी समझते हैं। जब तक भारतीयों के जीवन में त्याग, परिश्रम, ईमानदारी और परोपकार की भावना उनके जीवन का अंग नहीं बन जाती तब तक हम उनकी समानता नहीं कर सकते। यदि उनमें खानपान की शुद्धता हो जाये तो वे आर्यसमाज के नियम आसानी से स्वीकार कर सकते हैं।

बच्चों के लिए सामान आदि खरीदा और रात्रि में ट्रेन से कलकत्ता के लिये प्रस्थान किया। १४ ता० को प्रातः हावड़ा पहुँच गया। यात्रा सकुशल समाप्त हुई। जीवन के लिए बहुत प्रेरणादायक बातें देखने को मिलीं। एक बात का दुःख रहा कि हमारे दल के वरिष्ठ सदस्य श्री जगदीश तिवारी पूरी यात्रा में साथ न दे सके। अस्वस्था के कारण उन्हें बीच में ही लौटना पड़ा।

अध्याय—१०

आर्य-समाज के प्रचार-प्रसार का कार्य

वेटिकनसिटी के चर्च को देखकर मन में विचार उत्पन्न हुआ कि ऐसे भी धार्मिक विचारधारा के लोग हैं जो १२० वर्षों से अपने धार्मिक-स्थल के निर्माण में लगे हुए हैं। क्यों न हम भी आर्य विचारधारा के धार्मिक व्यक्ति आर्य-समाज मन्दिर, १९ विधान सरणी को भव्य और विशाल बनावें। वयोवृद्ध आर्य नेता महाशय रघुनन्दन लाल की प्रबल इच्छा है कि आर्य समाज के ऊपर अतिथिशाला और एक सभाकक्ष तथा भोजनालय का निर्माण हो। समाज के अन्य अधिकारियों एवं सहयोगियों से श्री लक्ष्मण सिंह—मंत्री, श्री रुलिया राम गुप्त, पूनम चन्द आर्य श्री छबील दास सेनी, श्री सुखदेव शर्मा, श्री नाथ दास आदि से परमर्श करके ऐजेन्डा द्वारा अन्तरंग के सदस्यों से आर्य-समाज के ऊपर भवन निर्माण की स्वीकृति ली और रविवासरीय सत्संग के अवसर पर इसकी घोषणा की। मैंने स्वयं १० हजार रुपया देने की घोषणा की और कहा कि दानी महानुभावों से दान लेकर भवन बनवाया जाएगा। कई सदस्यों एवं सहयोगियों ने एक हजार-दो हजार रुपया दान देने की इच्छा व्यक्त की। मैंने उनसे कहा कि मैं अभी आपसे रुपए नहीं लूंगा। पहले दो-तीन व्यक्तियों से ही पूरा पैसा लेकर बनवानें का प्रयास करूंगा। यदि सफलता नहीं मिलेगी तब कई व्यक्तियों से दान लेकर निर्माण कार्य कराया जाएगा। अपने साथियों के साथ श्री सेठ कृष्ण लाल पोद्दार से मिला। उनके पिता श्री दीपचन्द्र पोद्दार, आर्य-समाज कलकत्ता के प्रधान रह चुके थे। पोद्दार परिवार का आर्य-समाज से घनिष्ठ संबन्ध है। उनके सहयोग से आर्य कन्या महाविद्यालय तथा रघुवर आर्य विद्यालय का निर्माण हुआ है। श्री पोद्दार को अपनी योजना से अवगत कराया। उनसे आग्रह किया कि आप श्री

लक्ष्मी निवास बिड़ला से कहें कि आर्य समाज में ऊपर अतिथिशाला रानी बिड़ला के नाम से बनी है। उसके ऊपर भी वे भवन उनके नाम से ही बनवा दें। हम नहीं चाहते कि महान् दानी बिड़ला के पूर्वजों के नाम के ऊपर किसी अन्य व्यक्ति का नाम लिखा जाए। श्री कृष्णलाल पोद्दार ने श्री लक्ष्मी निवास बिड़ला से सम्पर्क करके उन्हें पूरी योजना से अवगत कराया। उन्होंने मन्दिर का चित्र, इंजीनियर की रिपोर्ट और नक्शा मांगा। सब उनके पास भेज दिया गया। बाद में उन्होंने पूछा 'अनुमानित व्यय कितना होगा ?' अतिथिशाला बनवाने का अनुमानित व्यय एक लाख पच्चीस हजार बना कर उनके पास भेजा गया। श्री लक्ष्मी निवास बिड़ला ने निर्माण कार्य कराने के लिए अपनी स्वीकृति दे दी। सभा-कक्ष बनवाने के लिए श्री बद्री प्रसाद पोद्दार से कहा गया। उसका अनुमानित व्यय एक लाख था। परन्तु उसमें संगमरमर का पत्थर आदि लगवा देने से अन्त में व्यय एक लाख पैंतीस हजार पहुंच गया। फिर भी श्री बद्री प्रसाद पोद्दार ने पूरा भुगतान किया। निर्माण कार्य दिनांक २१ जनवरी १९७८ को प्रारम्भ हो गया। पीछे भोजनालय का निर्माण कराया गया। इसमें मैंने १० हजार रुपए, तथा श्री जसवन्त चोपड़ा ने १० हजार रुपए दिए। अन्य दानी दाताओं का भी धन इसके निर्माण में लगा।

फोर्ड आर्य-समाज, बम्बई के अधिकारियों ने अर्ध शताब्दी के उत्सव पर बम्बई पधारने का आग्रह किया था। उनके आग्रह को न टाल सका। १७ दिसम्बर १९७७ को गीतांजलि एक्सप्रेस द्वारा पत्नी, पुत्र विजय प्रकाश और भतोजा विवेक के साथ प्रस्थान किया। १८ दिसम्बर १९७७ को रात्रि में ११ बजे बम्बई वी० टी० स्टेशन पहुंचा। इतनी रात को कहां चला जाय ? यह सोच ही रहा था कि आर्य-समाज के कर्मठ कार्यकर्ता श्री बजरंग लाल गोयल प्रतीक्षा में खड़े दिखायी पड़े। हम लोगों को वे एम० एल० ए० हास्टल ले गए। एक बड़े कमरे में हमारे रहने का प्रबन्ध उन्होंने कर रखा था। यज्ञ एवं अन्य कार्यक्रमों में भाग लिया। खाली समय में बच्चों को बम्बई शहर घुमाने ले जाता था। २३ दिसम्बर को

पूर्णाहुति पर स्त्री-आर्य-समाज, कलकत्ता की प्राणस्वरूप कार्यकर्ता श्रीमती विद्यावती सभरवाल से भेंट हुई। वह इस समय अपने पुत्र के साथ देवलाली में रह रही थीं। कलकत्ता उन्होंने छोड़ दिया था। उनका अगाध स्नेह कलकत्ता के आर्य बन्धुओं के प्रति है। उन्होंने पांच हजार रुपए मुझे दिए और कहा कि यह धन मेरी पुत्री स्वर्गीया स्वर्णलता द्वारा संचित है। आप इसको बैंक में जमा कर दें और इसके व्याज की आधी धनराशि प्रतिवर्ष आर्य कन्या महाविद्यालय, कलकत्ता और आधी धनराशि दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय, हिसार को प्रतिवर्ष देते रहें। वह रुपया लाकर आर्य महिला शिक्षा मंडल ट्रस्ट में स्व० स्वर्णलता सूरी के नाम से स्थिरनिधि में जमा कर दिया। व्याज का रुपया प्रतिवर्ष आर्यकन्या महाविद्यालय और दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार को प्रतिवर्ष दिया जाता है।

यज्ञ की पूर्णाहुति पर ही वाराणसी की बहिन प्रज्ञा देवी से भेंट हो गयी। मैंने गुरुकुल का समाचार पूछा। उन्होंने कुशलता बताते हुए कहा कि गुरुकुल में हिन्दी का टाइपराइटर नहीं है, आप दे दीजिए। मैंने टालते हुए कहा कि यह बाद में होगा, पहले आप गुरुकुल की कन्याओं के लिए भोजनालय बनवा दीजिए। उनके भोजन की व्यवस्था ठीक नहीं है। जितना व्यय होगा मैं दे दूँगा। उस पर मेरी पूजनीया माताजी श्रीमती सुन्दरा देवी का नाम लिखवा दीजिएगा। मेरे प्रस्ताव को उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। वाराणसी पहुँच कर भोजनालय का निर्माण प्रारम्भ कर दिया। लगभग १० हजार रुपये में भोजनालय बनकर तैयार हुआ। उसका पूरा भुगतान मैंने कर दिया। भोजनालय का निर्माण हो जाने पर मैंने उसका उद्घाटन किया। भोजनालय के सामने उन्होंने गोबर गैस प्लांट लगवा कर भोजनालय की व्यवस्था सुन्दर कर दी।

२४ दिसम्बर बच्चों को पूरा बम्बई शहर घुमाया। एलीफेन्टा की गुफा देखी। २५ दिसम्बर को आर्य-समाज कलकत्ता का वार्षिक उत्सव प्रारम्भ हो रहा था। मैं प्रधान होते हुए भी बम्बई में घूम रहा था। मेरी अन्त-

रात्मा ने मुझे समय से पूर्व वहां पहुँचनें के लिए प्रेरित किया। ट्रेन से मैं तुरन्त भी चल देता तब भी समय पर नहीं पहुंच सकता था। अतः २५ ता० को प्रातः सान्ताक्रुज से बोइंग १७५ से चलकर दोपहर को कलकत्ता पहुंच गया। १ बजे नगरकीर्तन में शामिल हो गया। मैं समय से पहुंच गया था अतः मन प्रसन्न था।

श्री रामनारायण हाई स्कूल की चिन्ता—अपने कठिन परिश्रम से अर्जित धन से श्री रामनारायण हाई स्कूल की स्थापना अपने गाँव फूलपुर में की थी। इस विद्यालय के द्वारा क्षेत्र की सेवा करने की अभिलाषा मन में थी। परन्तु प्रधानाचार्य श्री मुन्नीलाल शुक्ल ने अपनी अयोग्यता से सभी इच्छाओं पर पानी फेर दिया। अध्यापक एवं कर्मचारी सरकारी नौकरी हो जाने के कारण निश्चिन्त हो गये। उनके अन्दर यह भावना पैदा हो गयी कि विद्यालय की उन्नति हो या अवनति उनकी नौकरी पक्की है। जो वफादार अध्यापक और कर्मचारी थे वे भी प्रधानाचार्य की लापरवाही से हाथ पर हाथ रखकर बैठ गये। जनता में किसी प्रकार की जागृति नहीं है। उन्हें अपने बच्चों के हित या अहित का कोई ध्यान नहीं है। मैंने आज तक विरोधियों की टक्कर ली, बच्चों, अध्यापकों और अभिभावकों की खुशामद करता रहा तथा उन्हें प्रोत्साहित करता रहा। एक-एक व्यक्ति को प्रोत्साहित किया। दिन-रात, धूप-बरसात की परवाह किये बिना विद्यालय का निर्माण करवाया। परन्तु कोई सच्चा साथी नहीं मिला जो कि मेरी अनुपस्थिति में विद्यालय का कार्य मेरी ही तरह देख सके। उसकी उन्नवि की चिन्ता कर सके। अब विद्यालय काफी पुराना हो चुका है। उसकी उन्नति और अवनति अब प्रधानाचार्य पर ही निर्भर करती है। यदि शिक्षा व्यवस्था अच्छी रहेगी तो स्वयं बच्चे पढ़ने के लिए आएँगे। विद्यालय उन्नति की ओर अग्रसर होगा। परन्तु स्वार्थी चापलूस प्रधानाचार्य श्री मुन्नीलाल ने परीक्षण काल के दो वर्ष के पूर्व ही एक वर्ष बाद विद्यालय की प्रबन्ध-समिति के अन्य सदस्यों की चापलूसी करके अपने-आपको स्थायी करवा लिया। स्थायी हो जाने के बाद कर्महीन हो

गये। अध्यापकों और कर्मचारियों को भी अनुशासनहीन बना दिया। साथ ही गर्व के साथ यह कहते हुए नहीं हिचकिचाते कि विद्यालय में चाहें १० ही बच्चे रहें, विद्यालय चलेगा। चाहे परीक्षाफल शून्य हो। इसकी हमें परवाह नहीं। विद्यालय की यह स्थिति देखकर मन अत्यन्त दुःखी हो जाता है। ईश्वर हमारे किन कर्मों का फल हमें दे रहा है। वह दिन कब आएगा जब विद्यालय का भविष्य उज्वल होगा। यही चिन्ता मन में बनी रहती है।

परम्परा का निर्वाह—३० अगस्त १९७८। आर्य-समाज का साधारण अधिवेशन था। मैं लगातार तीन वर्ष से प्रधान चुना जा रहा था। इस वर्ष भी सबका आग्रह था कि मैं ही प्रधान बनूं। परन्तु मैंने मन में विचार किया कि ९२ वर्ष इस आर्य-समाज को पूरे हो रहे हैं। मुझसे भी योग्य कार्यकर्त्ता रहे होंगे, परन्तु कोई भी तीन वर्ष से अधिक प्रधान के पद पर नहीं रहा। मैं क्यों इस परम्परा को तोड़ूँ। मैंने मंच से आग्रह करते हुए कहा कि कृपया इस वर्ष मेरे नाम का प्रस्ताव प्रधान के लिए न करें। मैं समाज में रहकर आप लोगों का सहयोग पहले की तरह ही करता रहूँगा। आप शान्ति पूर्वक अधिकारियों का चुनाव कर लें। मैंने एक और घोषणा की कि मैं आर्य-समाज के नाम पाँच हजार रुपया दान बैंक में जमा कर देता हूँ। जब आप इस आर्य-समाज की शताब्दी मनाएँ तब मैं जीवित रहूँ या न रहूँ, आपको दस हजार रुपए प्राप्त हो जाएँगे। पदाधिकारियों का चुनाव प्रारम्भ हुआ। श्री पूनम चन्द जी-प्रधान, श्री नाथ दास-मन्त्री सर्व सम्मति से चुने गए। समाज का कार्य इन अधिकारियों की देख-रेख में भी सुचारु रूप से चलता रहा।

१९७८ की बाढ़ और सहायता कार्य—सितम्बर १९७८। कलकत्ता महानगरी वर्षा के कारण भयंकर बाढ़ की चपेट में आ गयी। मिदनापुर और हावड़ा जिले भी बाढ़ से बुरी तरह प्रभावित हुए। आर्य बन्धुओं की एक मिटिंग बुलाई और उसमें एक स्थायी रूप से आर्य-समाज रिलीफ सोसाइटी का गठन किया गया। रिलीफ सोसाइटी के प्रधान—श्री गजानन्द आर्य,

मन्त्री-श्री पूनम चन्द आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री सीताराम आर्य सर्वसम्मति से चुने गये। सहायता कार्य प्रारम्भ हुआ। दानी दाताओं से दान एकत्र करके चिउड़ा, गुड़, पावरोटी आदि का वितरण कलकत्ता महानगरी में अविलम्ब किया गया। कुलगछिया अस्पताल के आगे जहाँ तक पानी में बस जा सकती थी खाद्य-सामग्री वितरित करने के लिए गए। सड़क पर दो-तीन फीट पानी था। मोहिसा ग्राम से आगे यातायात बिल्कुल वन्द था।

१५ सितम्वर। प्रातः मैं श्री गजानन, श्री पूनम चन्दआर्य, श्री मोहन लाल आर्य, श्री अमी चन्द आर्य, श्री वटुकृष्ण वर्मन को साथ लेकर जीप में खाने का सामान लादकर घटाल पहुँचे। वहाँ बाढ़ का भीषण ताण्डव देखकर मन द्रवित हो उठा। यहाँ से एक नौका किराये पर ली गई। उस पर सब खाद्य सामग्री लादी गयी। कंसावती एवं शीलावती नदी पार कर किनारे-किनारे ऊँचाई पर रहने वाले व्यक्तियों को भोजन सामग्री वितरित की गयी। बाढ़ से घिरे इन व्यक्तियों को राहत पहुँची। बाढ़ का भयंकर रूप देखने को मिला। खेतों में १४-१५ फीट पानी भरा हुआ था। इस दैवी आपदा से सव त्रस्त दिखायी पड़े। रात्रि में १२ बजे खाद्य सामग्री वितरित करके लौटे। वस्त्र आदि भी वितरित करने की आवश्यकता अनुभव की गई। अतः वस्त्र वितरित करने की योजना बनायी गयी। सहायता कार्य के लिए जनता ने दिल खोलकर हमारा साथ दिया। अतः सहायता कार्य करने में हमें प्रसन्नता हुई। प्रतिदिन खाद्य सामग्री वितरित करने के लिए कई टोलियां विभिन्न दिशाओं में भेजी जातीं। नयी धोती, साड़ी और चादरें भी वितरित की गयीं। आर्य-स्त्री-समाज कलकत्ता और आर्य स्त्री-समाज भवानीपुर की देवियों माता विद्यावती दत्ता, श्रीमती सुनीति शर्मा, माता केकनवती, रामदुलारी आदि ने श्री पं० प्रिय दर्शन जी के साथ जाकर राहत सामग्री वितरित की। मेरे साथ श्री पूनम चन्द जी, श्री गजानन्द जी, श्री मोहन लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सिंह, श्री रामजस आर्य, श्री रामधनी जायसवाल, श्री सोम देव गुप्त श्री गणेश प्रसाद, श्री दयाशंकर, श्री ओमप्रकाश आदि सहायता कार्य के

लिए जाते थे। कलकत्ता के दानी दाताओं के अतिरिक्त चण्डीगढ़ के आर्य-बन्धुओं ने सहायतार्थ धन वहाँ से भेजा था। मोहेश ग्राम में कन्याओं को सिलाई सीखने के लिए सिलाई मशीन आर्य रिलीफ सोसाइटी की ओर से दी गयी। जिसका सदुपयोग आज भी वे कर रही हैं। सहायता कार्य बहुत सन्तोषजनक रूप से हुआ। अभी १५ हजार रुपया सुरक्षित कोष इलाहाबाद बैंक में जमा है। किसी भी दैवी आपदा के समय तुरन्त प्रयोग के लिए रखा गया है।

महाशय रघुनन्दन लाल का निधन—समाज के वयोवृद्ध नेता महाशय रघुनन्दन लाल लगभग ९५ वर्ष के हो गए थे। उनका एकलौता पुत्र, जिसका आचरण आर्य-समाज के सिद्धान्तों के विरुद्ध था, उसे ठोकर मार-कर आर्य-समाज की सेवा में लग गए थे। उन्होंने अपना घर छोड़ दिया था। अपने मित्र आर्य-भक्त श्री सौदागरमल चोपड़ा के यहाँ रहते थे। श्री चोपड़ा सम्पन्न व्यक्ति थे। उन्होंने जीवन पर्यन्त उनके भोजन-आवास आदि की व्यवस्था करने का वचन दिया था। उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र श्री जसवन्त चोपड़ा ने अपने पिता द्वारा दिए गए वचनों का निर्वाह किया। महाशय रघुनन्दन चोपड़ा के घर को ही अपना घर मानते थे। वे कभी समाज में नाराज होते थे तो कहते थे "लो संभालो समाज को। मैं अपने घर चला।" समाज के सदस्य उनकी बातें सुनकर चुप रहते थे। वे समाज कार्य में लगे रहते थे। सदस्य उनके कार्य में बाधा न पहुँचाना अपनी मर्यादा समझते थे। २६ जुलाई १९८० ई० को प्रातः ६-३० पर मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीमें उनका स्वर्गवास अस्वस्थता के कारण हो गया। अत्यधिक वर्षा के कारण उस दिन सड़कों पर पानी भरा हुआ था। आर्यसमाज के एक वरिष्ठ कर्मचारी ने फोन द्वारा सभी अधिकारियों को इस दुःखद समाचार की सूचना दी। सूचना पाते ही सभी अधिकारी दौड़ पड़े। आर्य कन्या महाविद्यालय और रघुवर आर्य विद्यालय बन्द हो गया। वर्षा और सड़कों पर भरे पानी की परवाह किए बिना लोग अपनी श्रद्धां-जलि अर्पित करने के लिए पहुँचने लगे। पंजाब सेवा समिति की शीशे

वाली मोटर कार में उनका शव फूल मालाओं से सजाकर आर्य-समाज मन्दिर लाया गया और अन्तिम दर्शनार्थ रखा गया। आर्य-बन्धुओं ने अपने वृद्ध नेता को श्रद्धांजलि अर्पित की। श्रद्धा-सुमन अर्पित करने वालों का तांता लगा रहा। अन्तिम संस्कार हेतु उनका शव नीमतल्लाघाट ले जाया गया। सैकड़ों की संख्या में श्रद्धालु अन्तिम संस्कार पर उपस्थित थे। कुछ अपनी कारों से तथा कुछ आर्य कन्या महाविद्यालय की बसों से यहाँ पहुँचे थे। संस्कार उनके पुत्र ने पण्डित शिव नन्दन वैदिक, पं० उमाकान्त जी, पं० प्रियदर्शन, पं० शिवाकान्त, पं० आत्मानन्द शास्त्री आदि विद्वानों के निर्देशन में किया। अंत्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक-विधि से विधिवत् सम्पन्न हुआ। सच्चे आर्य-समाज के सेवक को अन्तिम-संस्कार पर अपनी श्रद्धांजलि प्रदान कर आर्य-बन्धुओं ने सच्चे आर्य होने का परिचय दिया। जो समय पर अपनी श्रद्धांजलि प्रदान करने नहीं पहुँच सके थे, उन्होंने दुःख भरे शब्दों में संवेदना प्रकट की। महाशय रघुनन्दन ने आर्य समाज कलकत्ता की एक युग तक सेवा की। वे महान दानी थे। देश के किसी भी भाग से विद्वानों, आर्य-समाजों और गुरुकुलों द्वारा आर्थिक सहायता माँगे जाने पर वे अपने निजी खर्च के खाते से पैसा निकाल कर भेज देते थे। कोई भी याचक उनके पास से खाली वापस नहीं जाता था। उनके इस सिद्धान्त का लाभ कभी-कभी कुछ धूर्त भी उठा लेते थे। मन में प्रसन्नता इस बात की थी कि यदि वापस करने की प्रवृत्ति जागृत हो गयी तो सच्चे व्यक्तियोंकी भी सेवा में व्यवधान उत्पन्न होने लगेगा। इस भावना से सच्चे व्यक्तियों के साथ एक-दो ढोंगी व्यक्तियों की भी सेवा हो जाती थी।

व्यक्तिगत अनुभव—कई वर्षों से आर्य-समाज की सेवा करते हुए मुझे अनुभव हुआ कि कलकत्ते में धन की कमी नहीं है। सबसे बड़ी कमी आर्य-समाज में सच्चे, उत्साही और लगनशील कार्यकर्ताओं एवं उच्चकोटि के उपदेशकों की है। यदि उच्चकोटि के विद्वानों के नेतृत्व में अच्छे-कार्यक्रम बनाये जाएँ तो उन कार्यक्रमों के सफल होने में कोई सन्देह नहीं

है। धन की कमी नहीं होगी। श्रद्धालु एवं दानो-दाता शुभ-कार्यों की सार्थकता को देखकर उदारता से दान देते हैं। आर्य-समाज के पास इतना विशाल भव्य आर्य-समाज मन्दिर है। परन्तु कार्यक्रम और जनता की सेवा उसकी तुलना में बहुत कम हो पाती है। पं० उमा कान्त जी, पं० प्रियदर्शन जी, पं० शिवाकान्त जी तीन विद्वान् हैं। कलकत्ता महानगरी एवं बंगाल जैसे विशाल प्रान्त में प्रचार की दृष्टि से दर्जनों विद्वानों की आवश्यकता है। मैं और मेरे साथी इस बात की आवश्यकता अनुभव करते हैं कि कुछ बच्चों को गुरुकुलों में भेज कर उन्हें पूर्ण वैदिक विद्वान् बनाया जाये और उनका खर्च आर्य-समाज वहन करे। आर्य-समाज के प्रचारार्थ हमारे पूर्वजों ने आर्य विद्यालय, महाविद्यालय, कन्या विद्यालय आदि की स्थापना की थी, परन्तु सरकारी सहायता प्राप्त हो जाने के बाद वे वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार का नाम मात्र रह गये। पाठ्यपुस्तकें आदि शासन के नियमानुसार होती हैं। अध्यापक एवं अध्यापिकाएं वैदिक सिद्धान्तों में दीक्षित न होने के कारण बच्चों में वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा का अभाव रहता है। वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा बच्चों को किसी भी रूप में नहीं मिल पाती। आर्य-समाज में आने वाले नवयुवक केवल आर्य-समाजी मात्र बन कर रह जाते हैं। उनमें मिशनरी भावना का अभाव रहता है। आवश्यकता है कि पूर्ण रूप से वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा प्रदान की जाए जिससे उनके अन्दर मिशनरी भावना पैदा हो और वे आर्य-समाज का प्रचार करें। भले ही इनकी संख्या कम हो। परन्तु जो हों वे पक्के निष्ठावान हों। तभी समाज एवं जाति का कल्याण होगा नहीं तो आया राम गया राम की तरह मौके का लाभ उठा लेना ही उनके जीवन का उद्देश्य होगा।

मैंने अनुभव किया कि किसी भी संस्था का अधिकारी किसी जोर या जबरदस्ती से बनने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। यदि वह जोर, ताकत या धन के बल पर अधिकारी बन भी जाएगा तो उसे सफलता नहीं मिलेगी। क्योंकि उसे सभी का सहयोग नहीं प्राप्त होगा और वह अपनी

प्रतिष्ठा खो देगा। इससे संस्था का बहुत बड़ा अहित होगा। किसी संस्था का अहित करना बहुत बड़ा अपराध है। अधिकारी वही योग्य है, जो संस्था को अहित से बचाए। उसे उन्नति के पथ पर ले जाए। जो सेवा कार्य करते-करते अपने कार्यों से सभी सदस्यों को प्रभावित करता है और उनके आग्रह पर अधिकारी बनता है तो उसे सभी का सहयोग प्राप्त होता है। सभी के सहयोग से कोई भी कार्य आसानी से कर सकता है। संस्था को उन्नति के पथ पर ले जा सकता है। अपने देश में संस्थाओं की कमी नहीं है। सबसे अधिक कमी है सच्चे, ईमानदार, परिश्रमी सेवकों की। संस्थाओं के कार्यकर्ता हमेशा अच्छे, ईमानदार, परिश्रमी सेवकों की तलाश में रहते हैं। ऐसे सेवकों को वे अपनी संस्था का अधिकारी बना कर उन पर संस्था का भार सौंपना चाहते हैं। योग्य व्यक्तियों के अभाव में वे अधिकारों को अपने पास रखते हैं। यदि किसी व्यक्ति को कोई पद देकर अधिकारी बना दिया जाए और वह अपने कार्यकाल में परिश्रम और लगन से काम न करे तो वह कैसे आशा कर सकता है कि उसे उससे भी उच्च पद प्राप्त होगा। उसके निकम्मेपन ने उसको अधिकारी बनने से रोक दिया। किसी भी संस्था के सदस्यों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे ऐसे व्यक्ति को ही अधिकारी चुनें जो परिश्रमी, ईमानदार और लगनशील हों। अन्य व्यक्तियों को कदापि अधिकारी न चुनें। भले ही वे हल्ला मचाते रहें। उनके निकम्मेपन का मुँह तोड़ जवाब दिया जाना चाहिए।

पुनः आर्य-समाज का प्रधान—एक वर्ष श्री पूनम चन्द जी प्रधान रहे। १९७९ में वे अपने व्यापार के संबन्ध में बम्बई चले गए। कलकत्ता आर्य-समाज का निर्वाचन का समय आ गया। सभी सदस्यों ने आग्रह किया कि आपने परंपरा का निर्वाह कर दिया। इस वर्ष हम पुनः आपको प्रधान बनाएंगे। मेरे मना करने पर कोई नहीं माना और मुझे सर्वसम्मति से प्रधान बना दिया। मेरे प्रधान के कार्य काल में मुझे श्री लक्ष्मण सिंह, श्रीनाथ गुप्त, श्री कृष्ण लाल खट्टर मंत्री पद पर मिले। कभी किसी से

किसी विषय पर भी तू-तू, मैं-मैं नहीं हुई। परिस्थितियों के अनुसार अपने स्वभाव में परिवर्तन करके सबका सहयोग प्राप्त कर मैं कार्य करता रहा हूं। किसी भी मनुष्य को परिस्थितियों को देखकर अपने स्वभाव में परिवर्तन कर लेना चाहिए। जो व्यक्ति परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करके चल सकता है, वह सही ढंग से समाज या संस्था का संचालन कर सकता है। यदि उसमें परिवर्तन के गुणों का अभाव है तो वह सफल नहीं हो सकता।

श्री राम नारायण हाई-स्कूल अवनति की ओर—ईश्वर की कृपा से विरोधियों के छल-प्रपंच, कोर्ट-कचहरी से मुक्ति प्राप्त हुई। मैंने विद्यालय को जनपद का आदर्श विद्यालय बनाने का स्वप्न देखा। परन्तु अध्यापकों की लापरवाही और प्रधानाचार्य की अकर्मण्यता से छात्रों में भी अनुशासन-हीनता फैल गयी। वे पढ़ाई-लिखाई छोड़कर यूनियन बनाने के झगड़ों में लग गए। परीक्षाफल प्रति वर्ष गिरता जा रहा था। एक वर्ष जूनियर हाई-स्कूल का परीक्षाफल ४-५ प्रतिशत मात्र था। संस्थापक एवं प्रवन्धक होने के कारण विद्यालय की इस गिरती हुई स्थिति को देखकर चिन्ता होने लगी। ग्रामीण जनता में जागृति का अभाव है। उन्हें अपने हित या अहित का ध्यान नहीं है। जिन अध्यापकों के कारण विद्यालय की प्रगति रुक गयी थी और उनके बच्चों का भविष्य बिगड़ रहा था उन्हें वे 'साहब नमस्ते', 'पण्डित जी पाय लागी' कह कर संबोधित करते। मेरा मन ग्लानि से भर जाता। अपने परिश्रम की दुर्गति देखकर किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। मैंने निर्णय किया कि इस संस्था में और अधिक परिश्रम का धन लगाना निरर्थक है। धन देश के अन्य भागों में जहां आवश्यक हो वहां लगाना सार्थक है। गाव में एक अस्पताल बनवाना आवश्यक समझता था। परन्तु मैंने निर्णय किया कि जब तक ग्रामीण जनता में जागृति न हो और वह यह न समझने लगे कि यह हमारी सम्पत्ति है, इसकी रक्षा हमारा कर्तव्य है। यह हमारे कल्याण के लिए ही है, उस समय अस्पताल का निर्माण करवाऊंगा और विद्यालय की उन्नति के लिए सहयोग करूंगा। यह कार्य

मेरे न रहने पर मेरे भाइयों और बच्चों द्वारा किया जाएगा।

पास के गाँव में अपने भाइयों को भेजकर बच्चों को बुलाकर उनका नाम स्कूल में लिखवाना, फीस माफ कर पुस्तकीय सहायता देना, विरोधियों से टक्कर लेना, दो वर्ष तक मान्यता प्राप्त हो जाने के बाद एक-एक रुपये की आर्थिक सहायता मिलने के बाद भी अध्यापकों को पूरा वेतन देना, भवन-निर्माण करवाना, मान्यता के लिए दिन-रात दौड़-धूप करना, चकबन्दी द्वारा विद्यालय के हित में जमीन प्राप्त करने के लिए ग्रामीण जनता और चकबन्दी अधिकारियों की खुशामद करना, यह सभी कष्ट प्रसन्नतापूर्वक सहन करता रहा। अध्यापकों और कर्मचारियों की नियुक्ति में घूस या दान लेना मैंने गौमांस लेने के बराबर समझा था। अध्यापकों और कर्मचारियों को यहाँ तक कह दिया था कि 'यदि आप लोगों में से कोई भी अपने घर से खाने-पीने का सामान भी लाकर देगा, तो उसके साथ कठोर व्यवहार किया जाएगा।' हाँ, यदि किसी अध्यापक या कर्मचारी को भोजन आदि की असुविधा हो तो हमारे घर से निःसंकोचपूर्वक माँग सकता है। सिर्फ मैं आप लोगों से एक चीज माँगता हूँ कि आप विद्यालय को उन्नति के पथ पर ले जाएँ।' एक-एक कर्मचारी एवं अध्यापक को सरकार द्वारा अनुमोदन के लिए मैंने स्वयं दौड़-धूप कर अनुमोदन प्राप्त किया। जिसका परिणाम यह है कि मेरे सामने वही अध्यापक और कर्मचारी विद्यालय को अवनति की ओर ले जा रहे हैं। उनमें कर्तव्य की भावना समाप्त हो चुकी है। कमाया हुआ धन विद्यालय की उन्नति में लगाना चाहता था, परन्तु वह उनके दोषों को दूर करने में लगाया जा रहा है और मानसिक परेशानी अलग है। मुझे धन और मानसिक परेशानी की परवाह नहीं है। मुझे सबसे अधिक दुःख इस बात का है कि सैकड़ों वर्ष बाद गाँव में एक स्कूल खुला। ईश्वर की कृपा से किसी परोपकारी ने स्कूल का निर्माण करवाया, नाना प्रकार के कष्टों को सहते हुए भी वह सेवा में लगा रहना चाहता है, परन्तु सहयोग के अभाव में उन्नति वर्षों पीछे रह गयी। अन्य स्कूल,

कालेज, गुरुकुल, ट्रस्ट, समाज आदि दर्जनों संस्थाएँ सेवा से लाभ उठा रही हैं।

कर्मचारी, अध्यापक और प्रधानाचार्य की नियुक्ति में अपना पराया नहीं देखना चाहिए। प्राथमिकता उन व्यक्तियों को देनी चाहिए, जो संस्थागत-छात्र के रूप में कालेजों और विश्वविद्यालयों में अध्ययन किये हों साथ ही शहर के उच्च समाज के साथ उनका सम्पर्क रहा हो। ऐसे व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में रह कर बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान कर सकते हैं। बच्चों का मार्गदर्शन सही रूप में होगा। ग्रामीण अध्यापक अधिकांश प्राइवेट परीक्षार्थी के रूप में परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर डिग्री प्राप्त कर लेते हैं। उनकी मानसिकता का विकास नहीं हो पाता। विचारधारा संकुचित ही रह जाती है। अतः वे अज्ञानवश बच्चों का सही मार्ग दर्शन नहीं कर पाते। विद्यालयों के संस्थापकों की नियुक्ति के समय व्यक्ति, शिक्षा, सामाजिक कार्य, योग्यता, कर्मठता, ईमानदारी आदि गुणों की परीक्षा लेकर ही करनी चाहिए। सरकारी सहायता कदापि नहीं लेनी चाहिए। सरकार द्वारा केवल छात्रों को परीक्षा में सम्मिलित होने की अनुमति लेनी चाहिए। जिस प्रकार भवन-निर्माण करने में व्यय होता है, उसी प्रकार परिश्रम या दान से एक ट्रस्ट बना कर विपुल धनराशि स्थिरनिधि में जमा कर देनी चाहिए, जिसके व्याज की आय और छात्रों से प्राप्त फीस से अध्यापकों और कर्मचारियों के मासिक वेतन का भुगतान करना चाहिए। जिससे अनुशासनहीन और अकर्मण्य अध्यापकों और कर्मचारियों को हटाने के लिए सरकार से किसी भी प्रकार का अनुमोदन न लेना पड़े। इस भय से कोई भी कर्मचारी लापरवाही नहीं करेगा। विद्यालय में बच्चों के भविष्य निर्माण का उद्देश्य सफल होगा।

आर्य-समाजी व्यक्ति कैसा हो ?

आर्य-समाज देश की सबसे ईमानदार एवं चरित्रवान् संस्था है। मैं स्वयं आर्य समाजी हूँ। नियमानुसार मैंने तीन वर्ष तक आर्य-समाज के

प्रधान पद पर रहकर कार्य किया। तीनों वर्ष मुझे निर्विरोध चुना गया। आर्य-समाज कलकत्ता का नियम है कि कितना भी योग्य व्यक्ति क्यों न हो तीन वर्ष बाद उसे पद छोड़ना पड़ता है। एक वर्ष के अन्तराल के बाद पुनः तीन वर्ष तक सर्वसम्मति से प्रधान पद पर रहकर मैंने कार्य किया। १९८२-८३ के लिए वरिष्ठ सदस्य श्री रुलिया राम सर्वसम्मति से प्रधान के पद पर चुने गए। आर्य-समाज कलकत्ता का यह सौभाग्य है कि पुराने अधिकारी पद को तिलांजलि देकर भी पूर्ववत् सेवा भाव से संलग्न रहते हैं। आने वाले अधिकारियों को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता। वरिष्ठ सदस्य हमेशा यह ध्यान रखते हैं कि नवयुवकों को समाज में खींच कर ले आएँ। नियमानुसार २-३ वर्ष बाद उन्हें कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है। पहला वर्ष उनके लिए परीक्षण काल होता है। यदि वह कार्य करने में सक्षम होता है, लगनशील है, स्वभाव से नम्र और मिलनसार है, समाज का हितैषी है तो उसका नाम वरिष्ठ सदस्यों की सूची में आ जाता है। यदि वह इसके विपरीत सिद्ध होता है तो वर्षों तक किसी भी पद के लिए नहीं चुना जाता। सच्चे-सेवक को समाज और संस्था का सच्चा पुजारी होना चाहिए। पथभ्रष्ट व्यक्ति अपनी कमी को छिपाने के लिए अनायास विरोधी बन जाते हैं। सेवक को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए आर्य-समाज के इस नियम को अपने मन में अंकित कर लेना चाहिए—'सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए, प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब कुछ स्वतन्त्र है।' सबसे अच्छा कार्यकर्ता वह है जो सर्वसम्मति से चुना जाए। परिश्रमी, लगनशील, ईमानदार व्यक्ति का ही चयन सर्व-सम्मति से हो सकता है। नम्बर दो पर वह कार्यकर्ता है जो बहुमत से चुना जाता है। कुछ मतभेद होने के कारण व्यक्ति ठीक होते हुए भी बहुमत से चुना जाता है। निकृष्ट कार्यकर्त्ता वह है जिसको संस्था नहीं चाहती और वह कोर्ट या गुण्डों का सहारा लेकर जबरदस्ती संस्था का अधिकारी बनना चाहता है। उस अधिकारी के प्रति कमेटी के सदस्य अविश्वास प्रस्ताव पास करते हैं तो वह

कोर्ट से Stay Order लेकर वाहर से डींग हाँकता फिरता है कि सवसे सच्चा तो मैं हूँ। ऐसे व्यक्ति से बढ़कर निकम्मा कोई नहीं हो सकता। संस्था तो बनी रहती है, हो सकता है उसकी स्थिति खराब हो जाए। जो व्यक्ति संस्था का विनाश करता है, वह पापी व्यक्ति है। उसकी मृत्यु पर कोई भी आँसू बहाने वाला नहीं मिलेगा। उसका नाम संस्था के इतिहास के काले पृष्ठों पर ही लिखा जाएगा। संस्थाओं के माँ-वाप नहीं होते। कोई व्यक्ति उसका मालिक नहीं होता। सदस्य ही उसके सव कुछ हैं। सदस्यों का कर्तव्य होता है कि वे संस्था को उन्नति के मार्ग पर ले जाएँ। पतन के रास्ते से हमेशा बचाते रहना चाहिए। यही सच्चे समाज सेवक का मुख्य कर्तव्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित अकाट्य महाग्रन्थ 'सत्यार्थ-प्रकाश', 'महर्षि का जीवन-चरित्र' और 'संस्कार-विधि' इन तीन पुस्तकों को आद्योपान्त पढ़कर हृदयंगम कर लेना चाहिए। उसके वाद ही आर्य-समाजी बनना चाहिए। आर्य-समाजी व्यक्ति से विधर्मी व्यक्ति अक्सर कुतर्क किया करते हैं। अगर उपरोक्त पुस्तकों का उसने अध्ययन कर रखा है तो वह उनके कुतर्कों का सही जवाव देकर उन्हें चुप कर सकता है। राह चलते मुसलमानों, ईसाईयों, जैनी आदि से कोई कुतर्क नहीं करता परन्तु आर्य-समाजी व्यक्ति से अवश्य करता है। ऐसे अवसरों पर उसे अकेले ही सवका सामना करना पड़ता है। इस प्रकार के कई अवसर मेरे समक्ष उपस्थित हुए। परन्तु मैंने उनके प्रश्नों का सटीक उत्तर देकर आर्य-समाज के तेज को धूमिल नहीं होने दिया। सच्चे आर्य-समाजी व्यक्ति को पहचानने में देर नहीं लगती उसकी वेशभूषा, व्यवहार, खान-पान का तरीका अलग ही होता है। वैदिक सिद्धान्तों में वह व्यक्ति जितना ही डूवता जाता है उतना ही उसके जीवन में निखार आता जाता है।

एक वार मैं गाँव गया हुआ था। वहाँ पर एक व्यक्ति ने मुझसे प्रश्न किया 'आप आर्य-समाजी हैं।' 'गाय का मांस नहीं खाना चाहिए' यह कहते हैं। परन्तु आप भी गाय का दूध पीते हैं जो कि गाय के खून से बनता

हैं। इस प्रकार आप भी तो गोमांस का भक्षण करते हैं।' मैंने विनम्रता पूर्वक उसके प्रश्न का उत्तर दिया और उसे समझाया 'गाय के खून और दूध के बनने में कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम्हारा प्रश्न ही गलत है। अगर ऐसा है भो तो तुमने अपनी माँ का दूध पोया है। तो तुमने अपनी माँ का मांस खाया है।' मेरी यह बात उसे बहुत कटु लगी परन्तु वह शान्त हो गया। एक बार मैं ट्रेन से टाण्डा जा रहा था। सामने गेरुआ वस्त्र पहने एक नवयुवक सन्यासी बैठा हुआ था। मैं एक पुस्तक पढ़ रहा था। उसने मुझसे पूछा, 'कौन सी पुस्तक है?' मैंने उसे पुस्तक दे दी। उसने पुस्तक को कुछ उलट-पलट कर देखा। पुस्तक के कवर पर महर्षि दयानन्द का चित्र छपा हुआ था। उस चित्र को देखकर वह ईर्ष्या से जलने लगा। उसने मुझसे कहा कि 'आप आर्य-समाज के सिद्धान्तों के अनुयायी हैं। मूर्तिपूजा के विरोधी हैं। मैं इस चित्र को फाड़कर जमीन पर फेंक देता हूँ। अगर आप मूर्ति-पूजा के विरोधी हैं, तो इस पर पाँच जूते मारिये। तभी मैं समझूंगा कि आप मूर्ति-पूजा के विरोधी हैं।' उसने आस-पास बैठे व्यक्तियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। मैंने उसके इस ऊटपटांग प्रश्न का वैसा ही उत्तर देना ठीक समझा। मैंने उससे कहा कि 'आप मूर्ति-पूजा के समर्थक हैं।' उसने जोरदार शब्दों में 'हाँ' कहा। मैंने कहा "मैं एक बार श्याम बाजार चौराहे के पास फुटपाथ पर चला जा रहा था। मेरे आगे-आगे रामकृष्ण मिशन का एक साधू चला जा रहा था। तीसरी मंजिल से एक महिला ने बच्चे की टट्टी एक कागज में लपेट कर नीचे फेंकी। वह उस साधू के सामने गिरी। साधू उसे देखने लगा। मैं पीछे-पीछे पहुँच गया। मैंने साधू से कहा कि उठा लो उस कागज को देखते क्या हो? उसमें तुम्हारी काली माँ की फोटो है। उसने क्रोध से मेरी ओर देखा। मैंने डाँट कर कहा 'देखता क्या है? उठा ले उसको जल्दी से तुम्हारी काली माँ टट्टी लिए जमीन पर पड़ी हैं। तुम तो काली माँ के सच्चे उपासक हो।' क्या तुम टट्टी लगे चित्र को उठाओगे।' प्रश्न करने वाले साधू ने कहा कि 'यह कौन सी मनुष्यता है कि मल लगे चित्र को उठाया जाए।' मैंने तुरन्त

प्रश्न किया 'यह कौन सी मनुष्यता थी कि तुम महर्षि दयानन्द के चित्र पर जूता मारने को कह रहे थे ?' मेरे इस प्रश्न को सुनकर साधू चुप हो गया। मैंने कहा कि हम सच्ची मूर्ति को घर में रखकर उसकी पूजा नहीं करते अपितु उसके आदर्शों को हृदयंगम करके प्रेरणा ग्रहण करते हैं। स्टेशन आ गया। मैं उतर गया, मन में महर्षि दयानन्द को धन्यवाद दिया कि आपने सत्यार्थ-प्रकाश ग्रन्थ को लिखकर मुझ जैसे लाखों साधारण व्यक्तियों का कल्याण किया है। वह हमारा सत्यमार्ग दर्शन कराने वाला अकाट्य ग्रन्थ है।

कलकत्ता आर्य-समाज शताब्दी १९८५ : कुछ सुझाव

आर्य-समाज कलकत्ता को स्थापित हुए ९८ वर्ष हो रहे हैं। सैकड़ों अधिकारी प्रधान और मन्त्री आदि पदों पर कार्य कर चुके हैं। वर्तमान कार्यकर्ताओं का यह सौभाग्य है कि वे शताब्दी समारोह का आयोजन करेंगे। कार्यक्रमों के देखने और सुनने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा। शताब्दी मनाने का सौभाग्य बहुत कम लोगों को मिलता है। आर्य-समाज कलकत्ता के अधिकारी इस सम्बन्ध में जागरूक हैं। शताब्दी समारोह समिति का गठन किया गया है। नवयुवक-कार्यकर्ता श्री श्रीराम आर्य को उसका संयोजक बनाया गया है। समय-समय पर कार्यक्रम की रूपरेखा निर्धारित करने के लिए बैठक होती रहती है। आर्य-समाज के विद्वान् पं० उमाकान्त जी पर आर्य-समाज कलकत्ता का १०० वर्ष का इतिहास लिखने का भार सौंपा गया है। अधिकारियों से मेरा अनुरोध है कि वह ऐसा कार्यक्रम बनायें जिससे बंगाल में आर्य-समाज के प्रचार का ठोस कार्य किया जा सके। शताब्दी के अवसर पर किया गया कार्य अधिक समय तक स्मृति रूप में बना रहेगा। वैदिक विद्वानों, संन्यासियों की वृद्धावस्था में सहायता करने हेतु एक स्थिर निधि की स्थापना की जानी चाहिए। महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित समस्त साहित्य का बंगला अनुवाद होना चाहिए। दुर्लभ पुस्तकों के पुनः प्रकाशन के साथ वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित नवीन ग्रन्थों का प्रकाशन होना चाहिए। कलकत्ता महानगर में अनेक ऐसे आर्य-

परिवार हैं जो समयाभाव के कारण साप्ताहिक सत्संग में नहीं आ पाते। परन्तु आर्य-समाज की गतिविधियों पर ध्यान रखते हैं। ऐसे आर्यबन्धुओं से सम्पर्क किया जाना चाहिए। शताब्दी वर्ष का प्रारम्भ होने के साथ ही सभी आर्य बन्धुओं से सम्पर्क किया जाना चाहिए। वार्षिक उत्सव आने से सात दिन पहले की तरह की भाग दौड़ नहीं होनी चाहिए। आर्य-समाज कलकत्ता के शताब्दी समारोह को देखने के लिए दूर-दूर के लोग अभी से मन में अभिलाषा लिए हुए बैठे हैं। मैं श्री कृष्ण लाल पोद्दार से उनके अलीपुर स्थित निवास-स्थान पर इसी वर्ष मिला था। वे आर्य-समाज के मंत्री और प्रधान पद पर कार्य कर चुके हैं। उनके पिता स्व० श्री दीप चन्द पोद्दार ने भी आर्य-समाज के प्रधान पद को अलंकृत कर आर्य-समाज की सेवा की थी। मैंने उनसे कहा कि हम १९८५ में आर्य-समाज की शताब्दी मनाने की तैयारी कर रहे हैं। श्री सेठ कृष्ण लाल जी भावुक हो गए। उन्होंने कहा कि क्या २ वर्ष पूर्व शताब्दी नहीं मना सकते ? मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि मैं आर्य-समाज की शताब्दी का कार्यक्रम अपनी आँखों से देख सकूं। उनके इन शब्दों ने मुझे मर्माहित कर दिया। मैंने कहा कि शताब्दी दो वर्ष पूर्व कैसे मनायी जा सकती है। शताब्दी तो १०० वर्ष पूरा होने पर ही मनायी जाएगी। आप निराश न हों। आप शताब्दी समारोह अवश्य देखेंगे। उसके बाद भी आप जीवित रहेंगे। ईश्वर आपको दीर्घायु प्रदान करे मेरी यह कामना है।

शताब्दी के आयोजकों से मेरा अनुरोध है कि श्री कृष्णलाल जी की तरह अनेक वृद्ध आर्य-बन्धु शताब्दी समारोह देखने की अभिलाषा मन में लिए अपने दिन गिन रहे हैं। समस्त कार्यकर्ताओं को एकजुट होकर सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए, जिससे आर्य-समाज का सुन्दर कार्यक्रम प्रस्तुत किया जा सके। अगर आलस्य ने हमारा साथ नहीं छोड़ा तो शताब्दी कार्यक्रम भी वार्षिक कार्यक्रम की तरह ही होकर समाप्त हो जाएगा।

संबद्ध-फर्म

१. नार्थ इण्डिया ऑटोमोबाइल्स,
६, किंग्स रोड, हावड़ा—१
फोन नं०—६६,३८६४

२. नार्थ इण्डिया ऑटोमोबाइल्स (ब्रांच-आफिस)
जी० टी० रोड, रौन्डिया मोड़, पानागढ़ (बर्दवान)
फोन नं०—९१

३. हरीराम एण्ड ब्रदर्स,
७७, कैलास बोस स्ट्रीट,
कलकत्ता—६
फोन नं०—३५३५६१

४. नेशनल आयरन एण्ड मेटल सप्लायर्स,
९९, सूरन सरकार रोड, कलकत्ता

५. साकेत मोटर्स,
९, किंग्स रोड, हावड़ा—१.

६. कलकत्ता ऑटोमोबाइल्स,
W-102, Phase II, मायापुरी, नई दिल्ली
फोन नं०–५०१८५२

७. साकेत ऑटो उद्योग,
टाण्डा रोड, पटेल नगर,
अकबरपुर (फैजाबाद) उ० प्र०

८. आर्य ऑटो एजेन्सी,
३८२, जी० टी० रोड
उत्तरी सलकिया, हावड़ा

सामाजिक-जीवन से संबद्ध-संस्थाएं

इन संस्थाओं की सेवा में सक्रिय रूप से संलग्न हूं—

१. प्रधान, आर्य-समाज कलकत्ता,
१९, विधान सरणी, कलकत्ता—६

२. प्रधान, आर्य-कन्या महाविद्यालय,
२०, विधान सरणी, कलकत्ता—६

३. प्रधान, गुरुकुल वैदिक आश्रम, वेदव्यास,
पो० पानपोस, राउरकेला (उड़ीसा)

४. प्रधान, महर्षि दयानन्द कन्या विद्यालय,
२०, विधान सरणी, कलकत्ता—६

५. प्रधान, आर्य कन्या इण्टर कालेज,
टाण्डा (फैजाबाद) उ० प्र०

६. संस्थापक एवं व्यवस्थापक, श्री रामनारायण हाई-स्कूल,
फूलपुर, टाण्डा (फैजाबाद) उ० प्र०

७. उप-प्रधान, अखिल भारतीय दयानन्द सेवा आश्रम,
रामलीला मैदान, नई दिल्ली।

८. प्रधान, आर्य-महिला शिक्षा मण्डल ट्रस्ट,
२०, विधान सरणी, कलकत्ता—६

९. ट्रस्टी, आर्य-विद्यालय ट्रस्ट,
१९, विधान सरणी, कलकत्ता—६

१०. ट्रस्टी, वैदिक अनुसन्धान ट्रस्ट,
१९, विधान सरणी, कलकत्ता—६

११. ट्रस्टी, आर्य सुन्दरा देवी जन कल्याण ट्रस्ट
६, किंग्स रोड, हावड़ा—१

१२. कोषाध्यक्ष, आर्य-समाज रिलीफ सोसायटी
१९, विधान सरणी, कलकत्ता—६

इसके अतिरिक्त अनेक शिक्षण-संस्थाओं और रिलीफ सोसाइटी आदि का भी सदस्य हूँ।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् । (यजु० ५–३६)

(हे परमात्मा, हमें ऐश्वर्य के लिए सन्मार्ग से ले चलिए)

× × ×

ऊर्जा मधुमती वाक् । (अथर्व० १६–२–१)

(हमारी वाणी ओजस्वी और मधुर हो ।)

× × ×

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे । (यजु० ३६–१८)

(हम परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें ।)

× × ×

इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहन्ति । (अथर्व० २०–१८–३)

(देवता पुरुषार्थी को चाहते हैं, आलसी को नहीं ।)

संकेत—मृ० = मृत, प० = पत्नी
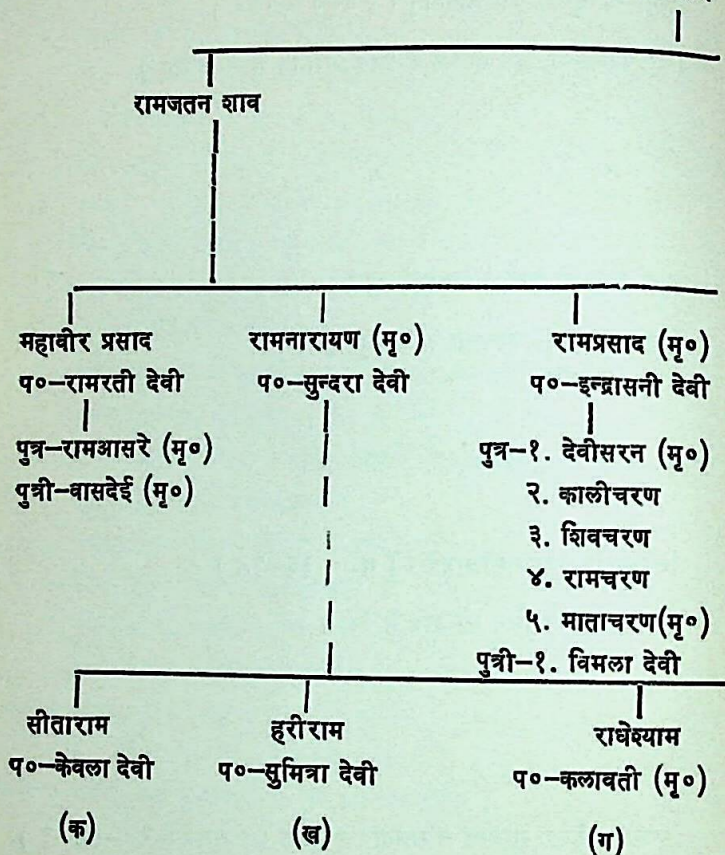
वृक्ष

शाव

क्रमशः अगले पृष्ठों पर....

(क)

सीताराम
रामतिलक(मृ०)
ओम्प्रकाश
प०–डॉ० भारती
सत्यप्रकाश
प०–रानी
विजयप्रकाश
प्रवीण
गुड़िया

(ख)

हरीराम
वेदप्रकाश
आत्मप्रकाश
राकेश
पुत्री–१. जीवन्ती
२. दयावन्ती
३. सुनीता

(ग)

राधेश्याम
सूर्यप्रकाश
ज्ञानप्रकाश
संजय
अजय

(घ)

श्रीराम
विवेक
सुमेध
विज्ञता (पुत्री)

(ङ)

मनीराम
विशाल
स्मिता (पुत्री)
ऋचा (पुत्री)
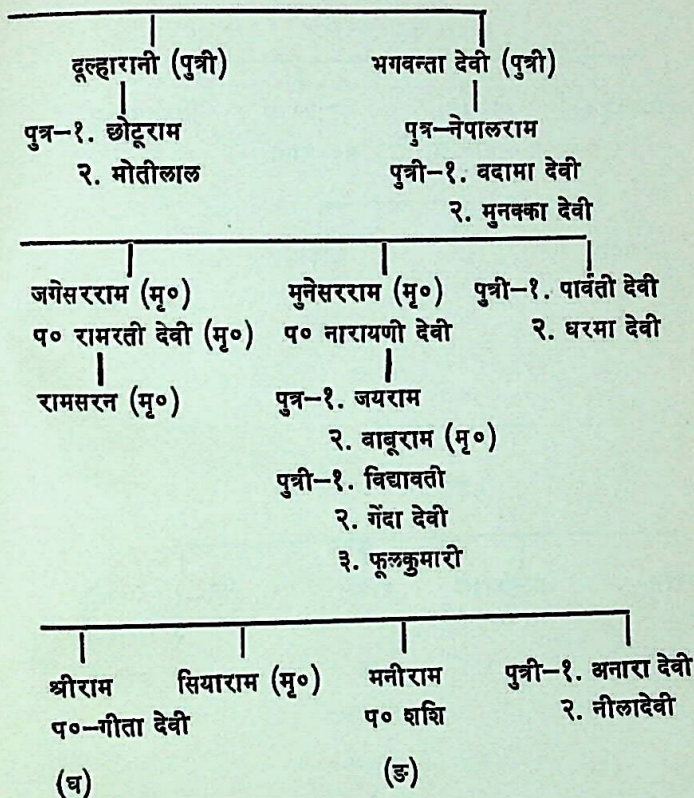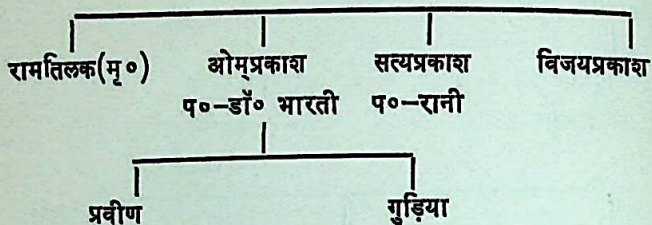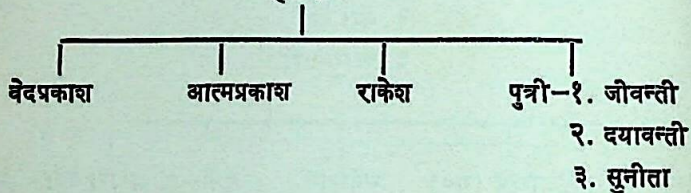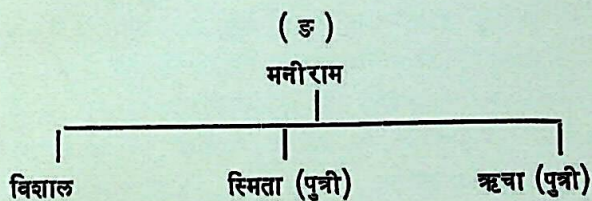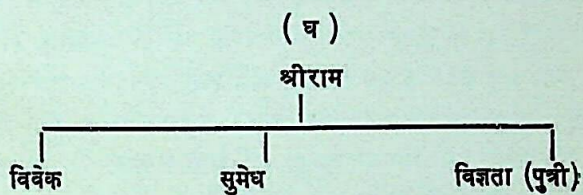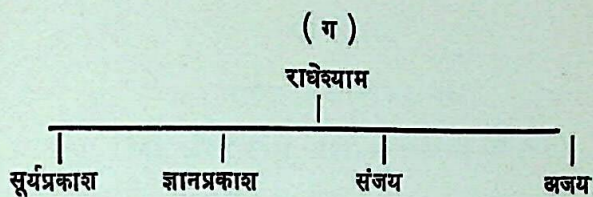
परिशिष्ट

सफलता के सोपान पर

श्री सीताराम आर्य—आदर्श जीवन

मनुष्य जीवन के दो विशेष लक्ष्य हैं—(१) अपने लिए सफलता-पूर्वक जीना, (२) अपने साथ के अन्य व्यक्तियों के लिए जीना। इस दृष्टि से मनुष्य व्यक्ति होते हुए भी सामाजिक प्राणी है। अपने लिए भी उसे संघर्ष करना है, अपने परिवार के लिए भी, मानव समाज के लिए भी और प्राणिमात्र के लिए भी। जीवन की सफलता की एक और भी कसौटी है—जीवन का लक्ष्य ज्ञान और सुख की समृद्धि करना है। ज्ञान और सुख की मात्रा अनिश्चित है। बचपन का ज्ञान और बचपन का सुख कौमार्य के ज्ञान और सुख से भिन्न है। कुमार के ज्ञान और सुख से प्रौढ़ का ज्ञान और सुख इन सब से भिन्न है। अतः मनुष्य जीवन की यात्रा में हम सब एक-एक सोपान ऊपर चढ़ते हैं। वर्तमान के सुख का परित्याग करके हम भविष्य के सुख की आकांक्षा करते हैं। आज की सुख-सुविधाओं का बलिदान करके हमें कल की सुविधाओं का चिन्तन करना पड़ता है। इसी क्रम से हम जब आगे बढ़ते हैं, तो हमें लोक के सुख का परित्याग करके परलोक के सुख पर बराबर दृष्टि रखनी पड़ती है। बुद्धिमान लोग इहलोक के प्रेय का बलिदान करते हैं, और परलोक के श्रेय को ग्रहण करते हैं। इहलोक का प्रेय देखने में तो प्रिय और मोहक है, पर अन्त में कटु और दुःखदायक होता है। इसके विपरीत परलोक का सुख आज तो भयावह प्रतीत होता है, पर अन्त में वही श्रेयस्कर है।

उज्ज्वल, उच्चतर या उच्चतम जीवन की कल्पना करना तो आसान है, पर जीवन को सद्मार्ग पर ले जाने वाले व्यक्ति बहुत कम होते हैं।

यज्ञमय जीवन का निर्माण सरल कार्य नहीं है। कलकत्ते में एक आर्य परिवार है—श्री सीताराम आर्य का। कतिपय वर्षों से मेरा इस परिवार से परिचय रहा है, परिचय ही नहीं घनिष्ठता और आत्मीयता भी रही है। इस परिवार को निकट से देखा है। ज्यों-ज्यों मैं अधिक सम्पर्क में आया, श्री सीताराम जी के प्रति आदर की भावना बढ़ी।

प्रारम्भ में कोई क्या है, इसका महत्त्व अधिक नहीं है—प्रयास करके कहाँ से कहाँ पहुँचता है, और विरोधी शक्तियों से किस प्रकार संघर्ष करता है—इसमें जीवन का मूल्यांकन है। जिस घराने में श्री सीताराम जी का जन्म हुआ, उसमें मद्यप भी थे और मादक द्रव्यों के व्यवसायी भी। किसी भी व्यसन को छोड़ना आसान नहीं होता है। श्री सीताराम जी के जीवन का छोटा सा वृत्त पढ़ें—किस प्रकार उत्तरोत्तर निखरते ही गए। यह उनके जीवन का ज्वलन्त प्रमाण है। आज वे लखपति हैं—करोड़पति हैं—लक्ष्मी का उपार्जन करने के साथ-साथ वे लक्ष्मी का उपयोग भी करना जानते हैं—लक्ष्मी उनके विलास का माध्यम नहीं बनी। लगभग २५ वर्ष के प्रयास में उन्होंने व्यापार में ईमानदारी का धवल उदाहरण रक्खा। आज के व्यापारी वातावरण में यह धारणा प्रखर हो गयी है, कि बिना छल के, चोरबाजारी के, धोखाधड़ी के व्यापार हो ही नहीं सकता। श्री सीताराम जी आर्य ने व्यापारिक नैतिकता का ऊँचा उदाहरण प्रस्तुत किया है। अपनी सन्तान को भी वे यही आदेश और उपदेश देते रहते हैं, कि आचरण की शुद्धता मुख्य है—व्यापार में भी, जितना कि अध्यात्म में।

आर्य-समाज के सम्पर्क में आकर मनुष्य क्या बन सकता है, इसका संजीव उदाहरण सीताराम जी ने प्रस्तुत किया है। कार्नवालिस स्ट्रीट (विधान सरणी) कलकत्ता की आर्य-समाज के ये प्रधान रहे। आर्य-समाज की हीन स्थिति ही परिवर्तित कर दी। जहाँ इस संस्था के ऊपर ऋण था, इनकी उदारता और संघटन शक्ति से आज यह संस्था देश की आर्य-समाजों में सक्रिय और सम्पन्न समझी जाती है। कलकत्ते की ही नहीं, अन्य स्थानों

की कतिपय शिक्षण संस्थाओं की सीताराम जी व्यवस्था करते हैं, और सभी अच्छे सार्वजनिक कार्यों में इनका सहयोग रहता है।

श्री सीताराम जी का ध्यान निरन्तर परिवार के बच्चों पर रहता है—इनका बड़ा कुटुम्ब है। सभी छोटे-बड़े इनका मान करते हैं, और ये सभी को 'अग्रज' के नाते स्नेह प्रदान करते हैं। मुझे इस घर के बच्चों ने, बेटियों ने सभी ने स्नेह दिया। सीताराम जी प्रत्येक व्यक्ति को गार्हस्थ्य-जीवन की तपस्या का उपदेश देते रहते हैं। तपस्या में ही जीवन का सुख है।

युग बदल गया है, नए युग की नयी हवाएँ आ रही हैं। वैज्ञानिक तकनीकी दुनिया ने सभी के सामने एक चकाचौंध पैदा किया है। इस युग में जो संयत होकर रह सकेंगे, वे नवीन युग से वास्तविक लाभ उठा सकेंगे। जो चकाचौंध के सामने परास्त हो जाएँगे, उनका सर्वथा विनाश हो जाएगा।

मुझे प्रसन्नता है कि २५ वर्षों के निरन्तर प्रयास के बाद श्री सीताराम जी आर्य ने दुर्लभ सफलता प्राप्त की है। उन्हें और उनके परिवार को मेरी बधाइयाँ और शतशः आशीर्वाद।

—स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती
१९-३-८३

विज्ञान-परिषद्
महर्षि दयानन्द मार्ग
प्रयाग

ओ३म्

हमारे प्रधान जी : एक समर्पित जीवन

एक दिन आर्य-समाज कलकत्ता में रविवासरीय साप्ताहिक सत्संग समाप्त हुआ, कुछ परामर्श आदि के पश्चात् मैं अपने घर आने को उद्यत हुआ। इतने में श्री सीताराम जी आर्य ने पूछ लिया, 'पंडित जी, कहाँ जा रहे हैं ?' मैंने कहा, 'मैं तो घर जा रहा हूँ।' श्री सीताराम आर्य जी ने मुझे अपनी गाड़ी में बैठा लिया और मुझे मेरे घर छोड़ते हुए आप अपने निवास-स्थान पर चले जायेंगे, यह प्रोग्राम बना लिया। गाड़ी में बैठे-बैठे कई तरह की बातें हुईं। बड़े सहज भाव से, किन्तु बड़ी दृढ़ता और निष्ठा से बोले, "पंडित जी समाज का कोई काम बिगड़ना नहीं चाहिए, कोई आवश्यकता हो तो मुझे आदेश दीजिएगा। मेरे पास जो कुछ है सब समाज की सेवा के लिए प्रस्तुत समझियेगा।"

मैं सुनकर मन ही मन आह्लाद में डूब उठा। यह समर्पण, यह भाव, इस युग में सुलभ नहीं है। उस समय श्री सीताराम जी आर्य समाज के संगठन में इतने निस्पृह-तटस्थ से थे कि अन्तरंग के भी सदस्य नहीं बनते थे, अधिकारी बनने की तो बात ही क्या ? यद्यपि इनके छोटे भाई श्री श्रीराम जी वर्षों से प्रचार-मंत्री, उप-मंत्री आदि के रूप में कार्य करते आ रहे थे। इस समर्पण की स्मृति मात्र से ही मैं आज भी आनन्द-विभोर हो उठता हूँ।

मेरे मन में आया कि यह एक हीरा समाज के संगठन में छिपा पड़ा है। वर्षों पर वर्ष बीतते गये एक ऐसा भी समय आया जब कई वर्षों बाद आर्यसमाज कलकत्ता जातीयता, प्रांतीयता, और दलबन्दी के भयानक जाल में उलझ गया। उस समय बाबू श्री सीताराम जी पर हमारा ध्यान आकर टिक गया। समाज को उस विपत्ति से उबारने वाला दूसरा और कोई न

दिखाई पड़ता था। आपसे आग्रह किया गया कि आप प्रधान का पद संभाल लें। आप थे निस्पृह मौन, समर्पित जीवन, पद की लिप्सा छू भी नहीं गई है। अतः प्रधान बनने को तैयार न थे। हमने जब परिस्थिति बताई तो बड़े सहज सरल भाव से वह काँटों का ताज पहनने को तैयार हो गये और आर्य समाज के सर्वसम्मत प्रधान बने। तब से आप की पदवी अब प्रधान जी की हो गई है।

एक दिन प्रधान जी ने कहा 'पंडित जी ऊपर का बड़ा हॉल मन्दिर की छत पर बनवाना है'। प्रभु के आशीर्वाद से हॉल भी बन गया और आर्य समाज कलकत्ता अनेकों दिशाओं में अग्रसर होता जा रहा है।

हमारे प्रधान जी ने अपना, अपने परिवार का और अपने सम्पर्क के लोगों का जीवन सँवारा है। एक साधारण व्यक्ति की तरह, साधारण परिस्थितियों में आपने अपना जीवन नौकरी से आरम्भ किया। किन्तु स्वामी दयानन्द की शिक्षा, आर्यसमाज का आदर्श जीवन में सरलता, सादगी, चरित्र में उच्चता के कारण आज आप पर लक्ष्मी की अपार कृपा है। व्यवसाय रातों-दिन बढ़ रहा है, प्रतिष्ठा और सम्मान प्रभु कृपा से रातों-दिन फैलता जा रहा है। ऐसे व्यक्ति की जीवनगाथा संसार के लोगों को बड़ी प्रेरणाप्रद होगी। श्री प्रधान जी अपनी जीवनगाथा प्रकाशित कर रहे हैं—इस अवसर पर मैं अपनी अशेष मंगलकामनाओं के साथ परमेश्वर से प्रार्थी हूँ कि हमारे प्रधान जी शतायु हों और सुख समृद्धि के पथ पर इसी तरह बढ़ते जायें, धर्म, देश और जाति के लिये उनके समर्पण के भाव अक्षुण्ण बने रहें।

उमाकान्त उपाध्याय
आचार्य, आर्य-समाज, कलकत्ता
१५-२-८३

आदर्श-पुरुष : श्री सीताराम आर्य

—पूनम चन्द आर्य

मेरा परिचय श्री सीताराम आर्य से लगभग २०-२५ वर्ष से है। मैं इनके पास आर्य-समाज कलकत्ता के वार्षिकोत्सव के लिए चन्दा लेने जाता था। आपके साथ समाज से सम्बद्ध विषयों पर विचार विमर्श होता था। इनके मधुर व्यवहार और मिलनसार व्यक्तित्व के कारण मेरा सम्बन्ध भाई-भाई का हो गया। कुछ समय बाद मेरी प्रार्थना पर ये आर्य-समाज कलकत्ता के सभासद बने। इस समय इनके परिवार के सभी सदस्य आर्य-समाज कलकत्ता के सक्रिय सदस्य हैं। मेरी प्रार्थना पर ही आपने अपने नाम के आगे से जायसवाल शब्द के स्थान पर आर्य लिखना प्रारम्भ किया।
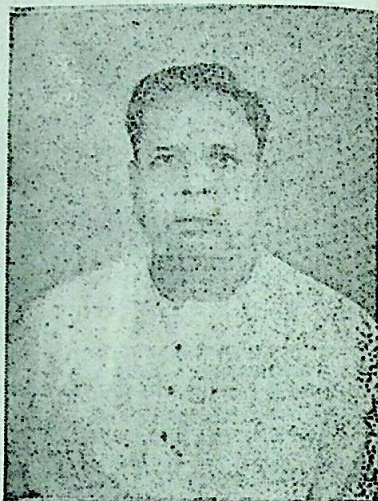
ईश्वर की आपके ऊपर विशेष कृपा हुई और उस कृपा का फल आर्य-समाज कलकत्ता को प्राप्त हुआ। आपकी उच्च सेवा भावना तथा दान प्रवृत्ति की भावना ने आपको समाज में ही नहीं अपितु आर्य-जगत में भी उच्च स्थान दिलाया है। आपके पास से कोई भी दान या सहयोग का

याचक निराश नहीं लौटता है। यह कार्य बिना ईश्वर की कृपा के नहीं हो सकता।

आप अनेक संस्थाओं के प्रधान हैं और कई ट्रस्टों के ट्रस्टी हैं। किन्तु नाम-मात्र के लिए नहीं अपितु उन सभी संस्थाओं और ट्रस्टों के कार्यों में सक्रिय रूप से सहयोग देकर उसे सुचारु रूप प्रदान करते हैं। व्यापार में वहुत समय देना पड़ता है, किन्तु सेवा कार्य आने पर व्यापार को भी छोड़-कर सेवा कार्य में लग जाते हैं।

वर्तमान समय में भाई-भाई और पिता-पुत्र के भी विचार आपस में नहीं मिलते। दोनों में मतभेद बना रहता है। किन्तु ईश्वर की इन पर असीम कृपा है कि इनके सब भाइयों और बच्चों में जो इनका सम्मान और आदर है, वह बहुत कम परिवारों में मिलेगा।

मुझे १० दिन इनके निकट रहने का भी ईश्वर ने सुअवसर दिया। आपके दैनिक क्रिया-कलापों को देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई तथा अपने जीवन को ऊँचा उठाने की प्रेरणा प्राप्त हुई।

मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि इनके आदर्श जीवन और आयु को दीर्घ बनाए, जिससे समाज और देश की ये इसी प्रकार सेवा करते रहें। मेरे ऊपर भी ईश्वर की कृपा है कि मुझे ऐसे मित्र मिले। मैं ऐसे मित्र को पाकर स्वयं को धन्य मानता हूँ तथा स्वयं को भी इनके ही परिवार का सदस्य मानता हूँ।

पूनम चन्द आर्य
कलकत्ता

आर्य संस्कृति के उपासक : श्री सीताराम आर्य

प्रसिद्ध उद्योगपति, सच्चे ऋषिभक्त, देश-भक्त, दानवीर, आदर्श आर्य-समाजी, कर्मठ कार्यकर्त्ता, कलकत्ता आर्य-समाज के कुशल एवं सर्वविदित नेता, कलकत्ता उद्योग नगरी के आर्य अनुष्ठानों के प्राण, समाज-संगठक एवं सर्वजन प्रिय श्रीयुत सीताराम आर्य से मैं लगभग २५ वर्षों से परिचित हूँ। आप में ऋषि के मिशन को अभिवृद्धि के लिए हृदय में उत्साह एवं लगन है। आपकी आर्य-समाज तथा आर्य-समाज से सम्बद्ध संस्थाओं के प्रति प्रभूत अवदान तथा सहानुभूति सर्वविदित है। आप आर्य-समाजी कार्यकर्त्ताओं तथा प्रचारकों को हर समय कार्य करने की प्रेरणा तथा उत्साह प्रदान करते रहते हैं। आपका जीवन आडम्बर शून्य तथा सादगी से परिपूर्ण है। जो भी आपके सम्पर्क में आया, वह आपके आर्योचित मधुर व्यवहार तथा शालीनता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। वास्तव में आपके जीवन के रग-रग में आर्य-समाज की छाप स्पष्ट झलकती है।

आपके जीवन में वेद की इस उक्ति 'शतहस्त समाहर, सहस्रहस्त संकिर, ('सौ हाथ से कमाओ, हजार हाथों से दान करो') का आदर्श चरितार्थ होता है। उद्योग नगरी कलकत्ता में जितने भी आर्य शिक्षानुष्ठान तथा सेवानुष्ठान हैं, प्रायः सभी के साथ वे संपृक्त हैं। सभी अनुष्ठानों में कुछ न कुछ सहायता देते रहते हैं। आपकी उदार दानवृत्ति के कारण आर्य-जगत् के विभिन्न अनुष्ठानकर्त्ता आपके पास कलकत्ता सहयोग के लिए आते हैं। कोई भी आर्य-समाज आपके पास किसी अनुष्ठान के लिए सहायता हेतु आता है तो वह खाली हाथ नहीं लौटता। मुक्त हस्त से दान देते हैं तथा मुक्त हस्त से आर्य-समाज के अनुष्ठानों में सहयोग देते हैं। आर्य-समाज की सेवा में अहर्निश लगे हुए हैं।

यह कहा जाता है कि लक्ष्मी के उपासक के पास सरस्वती नहीं रह सकती । परन्तु हमारे चरित्र नायक पूज्य आर्य जी के जीवन का अवलोकन करने पर यह उक्ति मिथ्या प्रतीत होती है । श्रीयुत आर्य जी को परमात्मा ने धन कमाने के लिए बुद्धि दी है और भारतीय-संस्कृति, सभ्यता तथा वैदिक-धर्म के तात्त्विक रहस्य को समझने के लिए ज्ञान भी दिया है । आप स्वाध्यायशील और अध्यवसायी व्यक्ति हैं । आपके पास ऋषि-प्रणीत ग्रन्थ तथा वेदोपनिषद् आदि ग्रन्थ प्रकोष्ठ में स्वाध्याय के लिए रहते हैं । आर्य साधुओं, उपदेशकों, सन्तों आदि की अतिथि-सेवा के लिए आपका परिवार प्रसिद्ध है । जो भी आर्य-प्रचारक, उपदेशक आदि आपके दर्शनार्थ जाता है, उसका सत्कार किए बिना श्री आर्य जी नहीं छोड़ते । विद्वानों के साथ मधुर व्यवहार और उनके क्षेत्र की आर्य-समाज की गतिविधियों को पूछना आपके जीवन का अंग है । यह ऋषि के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के दिव्य स्वप्न को साकार करने की श्री आर्य जी को उत्कृष्ट अभिलाषा प्रदर्शित करता है ।

वन-पर्वत परिवेष्ठित उत्कल प्रान्त में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ श्री आर्य जी का शारीरिक तथा आर्थिक सहयोग सराहनीय है । उत्कल प्रान्त के वनवासी क्षेत्रों में शुद्धि, शिक्षा आदि का जो भी कार्य हो रहा है, उसमें श्रीयुत आर्य जी का प्रशस्त हस्त है ।

चिर-उपेक्षित वन्या-प्रपीड़ित दीन-दरिद्र उत्कल प्रान्त में जब भी कोई संकट पड़ता है, यथा-वन्या, वात्या, दुर्भिक्ष आदि के कारण दरिद्र जनता में त्राहि-त्राहि मच जाती है । इन विषम परिस्थितियों का लाभ उठाकर मिशनरी लोग उन्हें पथभ्रष्ट करते हुए ईसाई धर्म में दीक्षित करते हैं । मैं जब भी कलकत्ता आकर 'इस परिस्थिति से मुकाबला करने के लिए आर्य-समाज की ओर से कार्य करना चाहिए' कहता हूं, तो श्रीयुत धर्म-प्रेमी, सजग आर्य-संस्कृति और सभ्यता के रक्षक आर्य जी सबसे आगे आकर हाथ बँटाते हैं । तदर्थ श्री आर्य जी भूरि-भूरि प्रशंसनीय हैं । आपके सहयोग और सहानुभूति को उत्कलीय जनता कभी नहीं भूल सकेगी ।

मेरे निरन्तर अवस्थ रहने के कारण दिनों दिन गुरुकुल वैदिक आश्रम, वेद व्यास की व्यवस्था शोचनीय होती गयी। विषम परिस्थितियाँ उपस्थित हुई। धीरे-धीरे उड़ीसा में आर्य-समाज की गतिविधियों का प्राणकेन्द्र गुरुकुल वैदिक आश्रम उजड़ने लगा। ईसाई मिशनरियों में प्रसन्नता छा गयी। ऐसी विषम परिस्थिति में मैंने श्री आर्य जी के सम्मुख अपने मन की बात कही और उनसे इस ऋषि वाटिका को बचाने का अनुरोध किया। उन्होंने मेरी प्रार्थना को सहर्ष स्वीकार किया। मैंने आप पर गुरुकुल का पूरा दायित्व सौंप दिया। हर्ष की बात है कि इस समय श्री आर्य जी गुरुकुल के प्रधान हैं। आपके बलिष्ठ नेतृत्व में गुरुकुल उन्नति-पथ पर अग्रसर है। गुरुकुल के प्रति आपका प्रेम और सहानुभूति प्रशंसनीय हैं। गुरुकुल फूले-फले, वैदिक-धर्म का प्रचार और प्रसार हो, यही चिन्ता सदा आपके मन में बनी रहती है। गुरुकुलवासी श्री आर्य जी के सदा ऋणी रहेंगे। उड़ीसा में आपने जो कुछ भी सेवा और सहयोग किया है, तदर्थ उत्कलीय जनता श्री आर्य जी की सदैव आभारी है।

अन्त में परम पिता सर्वशक्तिमान्, सर्वनियन्ता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु आर्य जी को स्वस्थ, सुखी, दीर्घायु तथा यशपूर्ण जीवन प्रदान करे।

स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती
गुरुकुल वैदिक आश्रम
वेदव्यास (राउरकेला) उड़ीसा

समाजसेवी : श्री सीताराम आर्य

पाली भाषा की एक उक्ति है 'रूपं जीरति मस्सानम्, नाम गोतम न जीरति' अर्थात् रूप तो नाशवान् है, किन्तु उत्तम कर्म और कीर्ति अमर है। मानव को यह जीवन व्यतीत करने के लिए नहीं वरन् श्रेष्ठ बनने के लिए दिया गया है। मेरा संकेत एक हंसमुख स्वभाव, सौम्य व्यक्तित्व, मानव-मात्र के कल्याण के शुभचिन्तक तथा आर्य-विचारधारा के प्रतिनिधि पूज्य श्री सीताराम जी आर्य की ओर है। जो व्यक्ति एक बार इस आर्य-पुत्र के सम्पर्क में आता है, वह सदा के लिए उनका हो जाता है। मेरा बचपन था और उनका बाल्यकाल। मैं उनके सम्पर्क में आया। मुझे उनसे एक लघु भ्राता का सच्चा स्नेह प्राप्त हुआ और मैंने अपना सब कुछ उन पर समर्पित कर दिया। उनकी सारी आज्ञाएँ सदा शिरोधार्य होती थीं। आज्ञा पालन करने में मुझे परमानन्द की प्राप्ति होती थी। जहाँ तक मेरी स्मरण शक्ति उस समय की घटनाएँ स्मृत करा रही है, उन्हें मैं शब्दबद्ध कर रहा हूँ। अध्ययन-काल में ये नित्य टाण्डा पैदल जाते थे। गुरु के प्रति जो परमभक्ति इनके अन्दर थी, वह आज तक मैंने किसी और में नहीं देखी। सर्वप्रथम गुरु की कृपा और उसके बाद आर्य-समाज एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती के पद-चिन्ह इन्हीं दो स्तम्भों से इन्हें आगे बढ़ने का प्रकाश मिला। शिक्षा पाने के पश्चात् गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया। पिताजी की एक छोटी सी दुकान थी। पिताजी का आचरण बहुत सादा और निष्कपट था। इन्होंने उनका हाथ बटाना शुरु किया। क्षेत्रीय किसान इनके अतिरिक्त अपना गल्ला किसी अन्य को देना कम पसन्द करते थे। बहुत सी माताएँ तो दरवाजे पर पहुँचते ही इन्हें अपने बच्चों जैसा प्यार देती थीं। पिता श्री स्वर्गीय रामनारायण जी अपने साथ इन्हें कलकत्ता महानगरी ले गए। इनके शुभ-संस्कार इनके साथ रहे। नौकरी इन्होंने एक ऐसी फर्म के

मालिक के यहाँ की, जो इनके स्वभाव के सर्वथा प्रतिकूल था। परन्तु इन्होंने अपने स्वाभिमान को कभी नहीं खोया। सत्य का अनुसरण किया। अपनी कर्तव्यनिष्ठा पर दृढ़ रहे। फर्म के मालिक का आचरण ठीक नहीं था। फर्म फेल हुई तो इन पर दोषरोपण करना चाहा। परन्तु सत्य के सामने सब कुछ झुक जाता है। उसने लज्जित होकर हार मानी। उसे कठिन यातनाएँ सहनी पड़ीं और अन्त भी निर्मम हत्या से हुआ। इस देव पुरुष के ऊपर आँच भी नहीं आयी। अपने स्वतंत्र व्यापार में प्रवेश करते ही एक कुशल व्यवसायी के जो लक्षण इनमें कूट-कूट कर भरे हुए थे, सामने आए। देखते-देखते अथाह धन के स्वामी हो गए। विषम परि-स्थियाँ सदैव साथ रहीं परन्तु सुदृढ़ भवन पर आँधी-तूफान के झोकों की भाँति कुछ समय बाद सब शान्त हो गईं।

अभी हाल में ही जब आपने यह सोचा कि जन्मभूमि से सम्पर्क टूट रहा है और आज के ५० वर्ष बाद आने वाली पीढ़ी कदाचित् इधर घूम कर भी न देखे। अपने वयोवृद्धों से केवल यह कहानी सुने कि मेरे पूर्वज फूलपुर के निवासी थे। गाँव से सम्पर्क बनाए रखने के लिए अकबरपुर में एक ट्रैक्टर की एजेन्सी लेने की योजना बनायी। एक माह के कठोर परि-श्रम के बाद स्कार्ट ३३५ की एजेन्सी मिली। जिसका उद्घाटन १५ जून १९८२ को हुआ।

व्यवसाय के साथ ही ये सामाजिक कार्यों में पीछे नहीं रहे। गाँव में कोई विद्यालय नहीं था। अपने स्वर्गीय पिता की स्मृति में श्री रामनारायण उच्चतर माध्यमिक विद्यालय खोला। इस विद्यालय को कक्षा १० तक की स्थायी मान्यता प्राप्त है। लगभग ५ एकड़ भूमि इस विद्यालय को दी है। क्षेत्र देहाती है अतः यहाँ आसुरी प्रवृत्ति के लोग बहुत हैं। जिसके कारण इनके मन की भावनाएँ पूरी नहीं हो पायीं। भावनाएँ मन में घुट कर रह जाती हैं। वरन् एक औषधालय की स्थापना करना चाहते थे।

सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी कई संस्थाओं के अध्यक्ष और सदस्य हैं। वाह्य जगत् में इनके दान की चर्चा बहुत है। समाज-सेवा का भाव रग-रग में भरा हुआ है। ऐसे आदर्श पुरुष इस कलयुग में कम ही मिलेंगे। एक शेर है—

हजारों साल नरगिस अपनी बेनूरी पर रोती है।
बड़े मुशकिल से होता है जहाँ में दीदावर पैदा॥

ऐसे मनुष्य के रूप में देवत्व को मेरा सब कुछ समर्पित।

जगदम्बिका प्रताप श्रीवास्तव
ग्रा० फूलपुर
पो० अजमेरी बादशाहपुर
जि० फैजाबाद

नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स की रजत-जयन्ती

ईश्वर की कृपा से हमारा प्रतिष्ठान "नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स" प्रगति के पथ पर निरंतर बढ़ता हुआ ९ जून १९८३ को अपने आदर्शमय जीवन के २५ वर्ष पूर्ण कर रहा है। लगभग १६ वर्ष की आयु में सन् १८५८ में उत्तर-प्रदेश से हाई-स्कूल की परीक्षा देकर मैं परम श्रद्धेय बड़े भाई श्री सीताराम जी के आदेश पर कलकत्ता आया और खुलने वाले नए प्रतिष्ठान पर श्री शम्भूनाथ जी जायसवाल के साथ बैठने लगा। दुकान बन कर पहले से ही तैयार थी। दुकान के भवन में आदरणीय पिता जी द्वारा हवन करने की प्रक्रिया पूर्ण की जा चुकी थी। भाई जी ने इस प्रतिष्ठान का नामकरण किया "नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स" जो कि हमें बहुत अधिक प्रिय लगा। हम उत्तर भारत के निवासी हैं तथा मोटर पार्टस का व्यवसाय करते हैं, अतः यह नाम पूर्ण सार्थक रहा है।

९ जून १९५८ को दूसरे की सेवा त्यागकर भाई जी "नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स" प्रतिष्ठान के संचालन में लग गए। जिस सत्यनिष्ठा एवं व्यवहार कुशलता से उन्होंने व्यवसाय का कार्य किया है, उसका वर्णन करने में स्वयं को असमर्थ पा रहा हूँ। जून १९५८ में ही इस प्रतिष्ठान का विधिवत् पंजीकरण एवं पार्टनरशिप फर्म के रूप में रजिस्ट्रेशन कराया गया।

मैं हाईस्कूल की परीक्षा देकर आया था। हाईस्कूल का परीक्षाफल कलकत्ता में ही देखा। मैं उत्तीर्ण घोषित किया गया था। मैंने सायंकालीन कालेज 'सिटी कालेज' में आई० काम० में प्रवेश लिया। इस प्रकार अध्ययन और व्यवसाय दोनों कार्य साथ-साथ करने लगा। १९६० में आई० काम० और १९६२ में बी० काम० की परीक्षा सिटी कालेज से उत्तीर्ण कर मैंने कलकत्ता विश्वविद्यालय के 'ला कालेज' में प्रवेश लिया।

१९६६ में कानून की अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण कर १९६ में 'बार काउन्सिल पश्चिम बंगाल' की परीक्षा उत्तीर्ण की। १९६८ में कलकत्ता हाई-कोर्ट में एडवोकेट के रूप में शपथ ग्रहण की। कानून की शिक्षा मैंने प्रातः कालीन कालेज से प्राप्त की। इस प्रकार मुझे शिक्षा ग्रहण करते हुए भी दिन में व्यवसाय का कार्य देखने की सुविधा प्राप्त हो जाती थी। प्रतिदिन नियमपूर्वक अपने प्रतिष्ठान पर प्रातः १० बजे से ४ बजे तक भाई जी के सानिध्य में विद्यार्थी जीवन में भी व्यवसाय का कार्य पूरी तत्परता से करता रहा।

वर्ष १९५८ में व्यवपार के प्रारम्भिक काल में भाई जी ने कहा था कि "हमारे परिवार का दैनिक खर्च पच्चीस रुपया प्रतिदिन का है और हमें यह चेष्टा करनी है कि ईमानदारी पूर्वक पच्चीस रुपया प्रतिदिन आय हो जाए। इसके लिए जितना भी परिश्रम करना पड़े, किया जाए और २५ रु० की आय हो जाने पर ही सन्तुष्ट रहा जाए।" उनके इस विचार ने मुझे यह बल दिया कि धनोपार्जन के लिए अधिक से अधिक परिश्रम करना चाहिए और साथ ही साथ ईमानदारी एवं सच्चाई को छोड़ना नहीं चाहिए। उस समय जिस परिश्रम एवं लगन से व्यवसाय का कार्य करते थे, हमारे लिए २५ रु० प्रतिदिन की आमदनी कर लेना कोई बड़ी बात न थी और जब इतनी आय हो जाने पर सन्तुष्ट रहने की बात भी निहित हो तो ईमानदारी पूर्वक व्यवसाय चलाने में कोई परेशानी नहीं होती।

मेरा परम सौभाग्य रहा है कि मेरे अग्रज भाई जी के आदर्शमय विचार मुझे अपने जीवन के स्वर्णिम अवस्था 'किशोरावस्था' में प्राप्त हुए तथा उसी समय १९५८ में ही परम श्रद्धेय आचार्य पं० रमाकान्त जी शास्त्री की सत्संगति प्राप्त हुई। अपने प्रतिष्ठान पर उन्हीं दिनों एक दिन भाई जी ने पण्डित जी द्वारा यज्ञ कराने का कार्यक्रम रखा था। मैं हवन सामग्री में घृत आदि मिला कर यज्ञ की व्यवस्था कर रहा था, मेरी निष्ठापूर्वक यज्ञ की तैयारी करने की प्रक्रिया को पण्डित जी थोड़ी दूर पर

भाई जी के साथ बैठे देख रहे थे। उन्होंने प्रसन्नता से अपना वरद हस्त मुझ पर रख दिया। अगले दिन प्रातः ७ बजे अपने आवास पर आमंत्रित किया। मैं निश्चित समय पर उनके पास गया। मेरी दिनचर्या पर उन्होंने मुझसे पूछा और मुझे कुछ सुझाव दिए। मैं उनके द्वारा सुझाए गये मार्ग पर चलने लगा। अहा! उस समय के १६ वर्षीय किशोर का जीवन संवरने लगा। प्रातः काल ४ बजे सोकर उठ जाना, नित्यकर्म-स्नानादि से निवृत्त होकर पाँच-साढ़े पाँच बजे विक्टोरिया मैदान में पहुंचकर व्यायाम करने की आदत बना ली जहाँ पर प्रतिदिन आचार्य जी से जीवन को सुन्दरतम बनाने की शिक्षाएँ प्राप्त होती रहीं। मेरा जीवन संवर गया। मेरा यह जीवन आचार्य जी का ऋणी है।

आचार्य पं० रमाकान्त जी की शिक्षाओं एवं आर्य-समाज कलकत्ता के नियमित सत्संग के फलस्वरूप मैंने सन् १९५८ से सन् १९६२ तक अर्थात् लगभग १६ वर्ष की आयु से २२ वर्ष तक की आयु में विद्वानों के विचारों एवं आर्ष ग्रन्थों की उत्तम शिक्षा के फलस्वरूप कुछ अच्छे नियमों को अपने जीवन का नियम बना लिया। जो कि मेरी एक अमूल्य निधि है। इनमें से कुछ नियम निम्न प्रकार हैं—

१. सतत साधना के महा परिणाम का नाम सफलता है।

२. आलस्य जीवित व्यक्ति की मृत्यु है।

३. जो कार्य या व्यवहार दूसरों के द्वारा हमारे प्रति किया जाना हमें पसन्द नहीं है, वैसा कार्य एवं व्यवहार हमें दूसरों के साथ भी नहीं करना चाहिए।

४. सादा जीवन व्यतीत करते हुए मनुष्य को पूर्ण ईमानदारी से अपने कार्यों में परिश्रम पूर्वक लगे रहना चाहिए, जिससे अपनी, समाज की एवं देश की उन्नति हो।

ईश्वर की कृपा हमारे ऊपर सदैव रही है और जितना भी परिश्रम हम करते रहे हैं, सदैव उससे अधिक ईश्वर हमें देता रहा है। अपने

व्यवसाय के क्षेत्र में प्रारम्भ से ही हमें कलकत्ता क्षेत्र के मोटर-पार्टस् के व्यापारी मित्रों का पूर्ण सहयोग मिलता रहा है। हम भाई जी के उन सभी मित्रों के आभारी हैं, जिन्होंने हमारे व्यवसाय में हमें प्रारम्भ से ही समय-समय पर अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है। देश के अन्य भागों यथा बम्बई, पूना, मद्रास, बंगलौर, विजयवाड़ा, दिल्ली, कानपुर, रांची, गौहाटी, नौगाँव, अगरतल्ला, तिनसुकिया, नहरकटिया, मारग्रेटा आदि स्थानों के व्यवसायी मित्रों के आभारी हैं, जिनसे हम विगत २५ वर्षों से व्यवसाय करते आ रहे हैं और जिनका हमें पूर्ण सहयोग एवं विश्वास प्राप्त रहा है।

अपने प्रतिष्ठान के आदर्शमय एवं समुन्नत २५ वर्ष पूर्ण करने पर हम यह बता देना अपना कर्तव्य समझते हैं कि हमने थोड़ी बहुत जो भी आर्थिक या सामाजिक उन्नति की है और हमने जो भी कुछ समाज और देश को समुन्नत बनाने में अपना योगदान दिया है, वह बहुत अधिक नहीं है। हमें प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने के लिए अभी बहुत लम्बा मार्ग तय करना है। जिसके लिए सतत परिश्रम करना है। हमारे परिवार में आयु के साथ बढ़ते हुए नवयुवकों पर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। अपने पूर्वजों और अग्रजों द्वारा बताए हुए आदर्शमय पथ पर ईमानदारी पूर्वक सत्यनिष्ठा के साथ इस व्यवसाय में सतत परिश्रम करते हुए प्रगति के पथ पर आगे और बहुत आगे बढ़ना है। ईश्वर की कृपा उन्हीं पर होती है जो अपने को उस कृपा को प्राप्त करने के योग्य बनाते हैं। आज का व्यवसायी वर्ग अपने स्वार्थ को इतना अधिक महत्व देने लगा है कि सच्चाई एवं व्यावसायिक आदर्श को व्यवसाय में कुछ भी स्थान नहीं देना चाहता। लेकिन हमें इस विपरीत परिस्थिति में भी अपने आदर्श पर अडिग रहते हुए व्यवसाय करना है, जिससे हमारी ख्याति पर आँच न आये।

एक कवि की बड़ी ही मार्मिक दो पंक्तियाँ याद रखने की चीज है—

"वह पथ क्या ? पथिक कुशल क्या ?
जिस पथ पर बिखरे शूल न हों।
नाविक की धैर्य परीक्षा क्या ?
जब धारा ही प्रतिकूल न हो ॥

मैं अपने सभी व्यवसायी मित्रों, सहयोगियों एवं शुभ-चिन्तकों तथा अपने प्रतिष्ठान के भूतपूर्व एवं वर्तमान कर्मचारियों का धन्यवाद करते हुए उनका आभार मानता हूँ और उनके सहयोग की कामना करता हूँ, जिनके सहयोग के बल पर ही हम इस २५ वर्ष का मार्ग तय करके कुछ आगे बढ़ सके हैं।

अपने प्रतिष्ठान "नार्थ इण्डिया आटोमोबाइल्स" की रजत-जयन्ती के शुभ अवसर पर प्रकाशित होने वाली पुस्तक "प्रगति का पथ" के प्रकाशन के लिए पूर्ण सहयोग प्रदान करने के लिए मैं आदरणीय भाई डॉ० कपिल देव द्विवेदी का एवं डॉ० भारतेन्दु जी का हार्दिक धन्यवाद करता हूँ। रजत-जयन्ती समारोह को सफल बनाने में उन सभी मित्रों सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने अपना अमूल्य समय प्रदान कर इस समारोह को सफल बनाया है।

श्रीराम आर्य